॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

प्रतिष्ठासार संग्रह

(पंचकल्याणकदीपिका हिन्दी छन्द सहित)

सम्पादक व संग्रहकर्ता—स्व० ब्र० सीतलप्रसादजी।

(समयसार, प्रवचनसार, पंचास्तिकाय, नियमसार, इष्टोपदेश आदि अनेक आध्यात्म ग्रन्थोंके टीकाकार)

प्रकाशक.—मूलचंद किसनदास कापडिया, मालिक दिगम्बर जैन पुस्तकालय, गांधीचौक-सूरत

द्वितीयावृत्ति] वीर स० २४८८, विक्रम सं० [illegible] [प्रति ५००

मूल्य रु० [illegible]

"जैन विजय" प्रिन्टिंग प्रेस-सूरतमें मूलचन्द किसनदास कापड़ियाने मुद्रित किया।

निवेदन ।

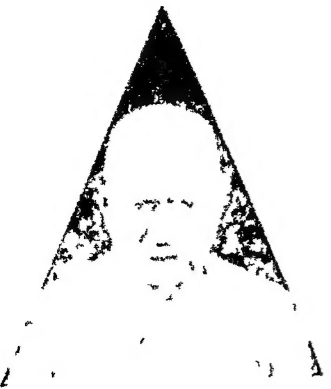

स्व० जैनधर्मभूषण ब्रह्मचारीजी श्री सीतलप्रसादजीने वीर सं० २४५३ में खण्डवामें चातुर्मास किया था तब आपने वहां ठहरकर इस "प्रतिष्ठासार सग्रह" की रचना की थी। फिर इसके प्रकाशनके लिये खण्डवाकी धर्मपरायण पंचायतने चन्दा करके यह ग्रन्थ अपने खर्चसे प्रकाशित करवाकर इसे "जैनमित्र" साप्ताहिक पत्रके २९ वे वर्षके ग्राहकोंको वीर सं० २४५५ मे भेंटस्वरूप वटवाया था। उस समय हमने २०० प्रतियां विक्रयार्थ अधिक निकाली थीं जो अल्प समयमे ही बिक जानेसे आज २५ वर्षोंसे यह प्रतिष्ठा पाठ नहीं मिलता था और इसकी मांग तो आती ही रहती थी, क्योंकि इसमे पंचकल्याणक प्रतिष्ठा विधि हिन्दी अर्थ व हिन्दी कवितामे भी तैयार की गई है। इससे यह स्वाध्याय योग्य भी है व घर बैठे इसे स्वाध्याय कर एक प्रतिष्ठा देखनेका परोक्ष लाभ मिल सकता है।

इसकी बहुत मांग आने पर भी दुःख है कि हम दूसरे प्रकाशनोंके कारण इसे पुनः प्रकट नहीं कर सके थे। लेकिन इस सुलभ प्रतिष्ठापाठकी आज हम दूसरी आवृत्ति प्रकट कर रहे है जो शास्त्राकार ही रखी गई है।

यह शास्त्र स्वाध्याय करनेयोग्य भी होनेसे यह प्रत्येक मन्दिरमे रखनेयोग्य है तथा प्रतिष्ठाकारक प्रतिष्ठाचार्यके लिये तो यह अतीव उपयोगी है। स्व० पूज्य ब्रह्मचारीजीने इसकी रचना खण्डवामें ४-५ मासमे रातदिन परिश्रम करके ही तैयार की थी जो अतीव उपयोगी बन गया है।

अतः जहां २ यह प्रतिष्ठा शास्त्र न हो अवश्य २ मगा लेना चाहिये और प्रतिष्ठाके लिये व स्वाध्यायके लिये इसका उपयोग करना चाहिये।

स्व० ब्र सीतलप्रसादजी लिखित इस शास्त्रकी भूमिका जैसीकी तैसी दी गई है।

निवेदक—

वीर सं० २४८८ स० २०१९
सूरत,
ता० २५-४-६२.

मूलचन्द किसनदास कापड़िया,
प्रकाशक।

भूमिका ।

परमातम अर्हत् प्रभु, सिद्ध शुद्ध सुखदाय ।
आचारज उपध्याय मुनि, वन्दूं मस्तक नाय ॥

साधारण जैन जनता विना दूसरोंके आलम्बनके श्री बिम्ब, मन्दिर व वेदी प्रतिष्ठा कर सके इसलिये यह सुगम प्रतिष्ठाविधि संग्रह करके लिखी गई है। इसमें ध्यान यह रक्खा गया है कि देखनेवालोंको ऐसा विदित हो कि मानो हम साक्षात् तीर्थंकरके जीवनचरित्रको ही देख रहे हैं। तथा जितना पूजन पाठ आवश्यक है वह रक्खा गया है। इसके संग्रहमें श्री जयसेन, आशाधर तथा नेमिचन्द्र इन तीन मुद्रित प्रतिष्ठापाठोंकी सहायता ली गई है। इस पाठके सहारेसे वह कठिनाई मिट जायगी जो प्रतिष्ठा करानेवाले पंडितोंकी खोजमें होती है। तथा कोई २ पंडित लोभवश यजमानोंको बहुत तंग करते हैं तथा कोई २ यजमानोंके कहे अनुसार समयकी तंगीसे बहुतसी विधि छोड़ देते हैं व पूजापाठमें कमी कर देते हैं, वह सब त्रुटियें निकल जांयगी।

इस पुस्तकमें पंचकल्याणकके दृश्य श्री जिनसेनाचार्यकृत महापुराणके अनुसार दिखाये गये हैं। श्री जयसेन आचार्यकृत प्रतिष्ठापाठ सबसे पुराना है तथा उसकी रचना देखनेसे विदित होता है कि यह आचार्य आध्यात्मरसिक व ध्यान तपमें लीन तपस्वी थे। इनका दूसरा नाम वसुविंद था। प्रशस्तिमें उन्होंने अपनेको श्री कुन्दकुन्दाचार्यका शिष्य लिखा है; जैसा इस श्लोकसे प्रगट है—

कुन्दकुन्दाग्रशिष्येण जयसेनेन निर्मित । पाठोऽयं सुधियां सम्यक् कर्तव्यावास्तु योगेत ॥ ९२३ ॥

इसलिये यह पाठ १९०० वर्षका पुराना है क्योंकि श्री कुन्दकुन्दस्वामी विक्रम संवत् ४९ में विद्यमान थे इसको अप्रतीति करनेका कोई कारण नहीं दिखता है। दूसरा पाठ पंडित आशाधरकृत १३ वीं शताब्दीका है उसे पंडितजीने विक्रम सं० १२८५ में नलकच्छपुरमें पूर्ण किया था जैसा इस श्लोकसे प्रगट है—

विक्रमवर्षे सपंचाशीतिद्वादशशतस्वतीतेषु । आश्विनसितांत्यदिवसे साहसमल्लापराख्यस्य ॥ १९ ॥

तीसरा पाठ यह आशाधरजीके पीछेका मालूम होता है जैसा मराठी टीकाकारने दूसरे श्लोकके अर्थमें लिखा है। यह नेमिचन्द्र ब्राह्मणकुली ब्रह्मचारी तथा विद्वान थे। जैसा कि प्रशस्तिके श्लोक नं० १ से प्रगट है वहां सद्वर्णी शब्द आया है। यह तीसरा पाठ विधिके वर्णनमें सबसे बड़ा है। हमने जयसेनकृत प्रतिष्ठापाठको प्राचीन व निर्ग्रन्थ मुनिकृत मानकर मुख्यतासे उसीका आधार लिया है। इस पाठमें पांच परमेष्ठीका ही पूजन यंत्र तंत्र है। तथा दूसरे दो पाठोंसे कहीं २ विशेष पूजन, विधि व मंत्र संग्रह किये हैं।

भाषा स्तवन, पूजनादि इसलिये रच दी गई हैं कि प्रतिष्ठा देखनेवाली आधुनिक जनताको तीर्थंकर भगवानके कल्याणकका साक्षात् आनन्द आजावे और वे समझते हुए महान पुण्यबन्ध करें। कवितामें मनरगलालकृत चौवासी पूजाकी सहायता ली गई है। उसीके छन्दोंके अनुसार अक्षर मात्रा जोड़कर इस पाठके छन्द रचे गए हैं। जिस विधिसे मुझ अल्पबुद्धिने यह संग्रह किया है उसके अनुसार यदि प्रतिष्ठा की जायगी तो साक्षात् लाभ होगा तथा जैन अजैन सब देखकर जैनधर्मका प्रभाव अपने मनमें जमाएंगे। जहांतक बना है कोई विधि नहीं छोड़ी गई है। इस पाठमें जहां जहां गान व कविता है उसको बाजेसे पढ़ा जावे। जिसके बोलनेके लिये जो पाठ है वह यदि न कह सके तो दूसरा उसके बदलेमें उस कविताको गावे, इसमें कोई हर्ज नहीं है।

मैं इस योग्य तो था नहीं कि इस अति दुर्लभ कार्यका करूं परन्तु धर्ममित्र पंडित अजितप्रसादजी एम. ए. एलएल. बी वकील लखनऊकी वर्षोंकी प्रेरणा तथा श्री जिनेन्द्र चरणकमलकी भक्ति ही ने इस कार्यको सम्पादन कराया है। विद्वान जन अवश्य मेरे इस साहस पर हसेंगे। मैं उनसे क्षमा चाहता हुआ यह प्रार्थना करता हूं कि इसमें जो त्रुटियें हों उनके सम्बन्धमें हमें सूचित करें जिससे हम उनके सुधारका उपाय करें।

जहां पर प्रतिमा के अभिषेकका वर्णन आया है वहां पर हमने श्री आदिपुराणकी रीतिके अनुसार क्षीरजल तथा गंधोदकसे न्हवन होना दिखाया है। जिनको दधि आदिसे भी न्हवन करना इष्ट हो वे अपनी इच्छानुसार कर सकते हैं।

जैनधर्मका सेवक—
ब्र० सीतलप्रसाद।

आश्विन कृष्णा ९,
वीर सं० २४५३, विक्रम सं० १९८४
खण्डवा, ता० १९-९-२७.

विषयसूची

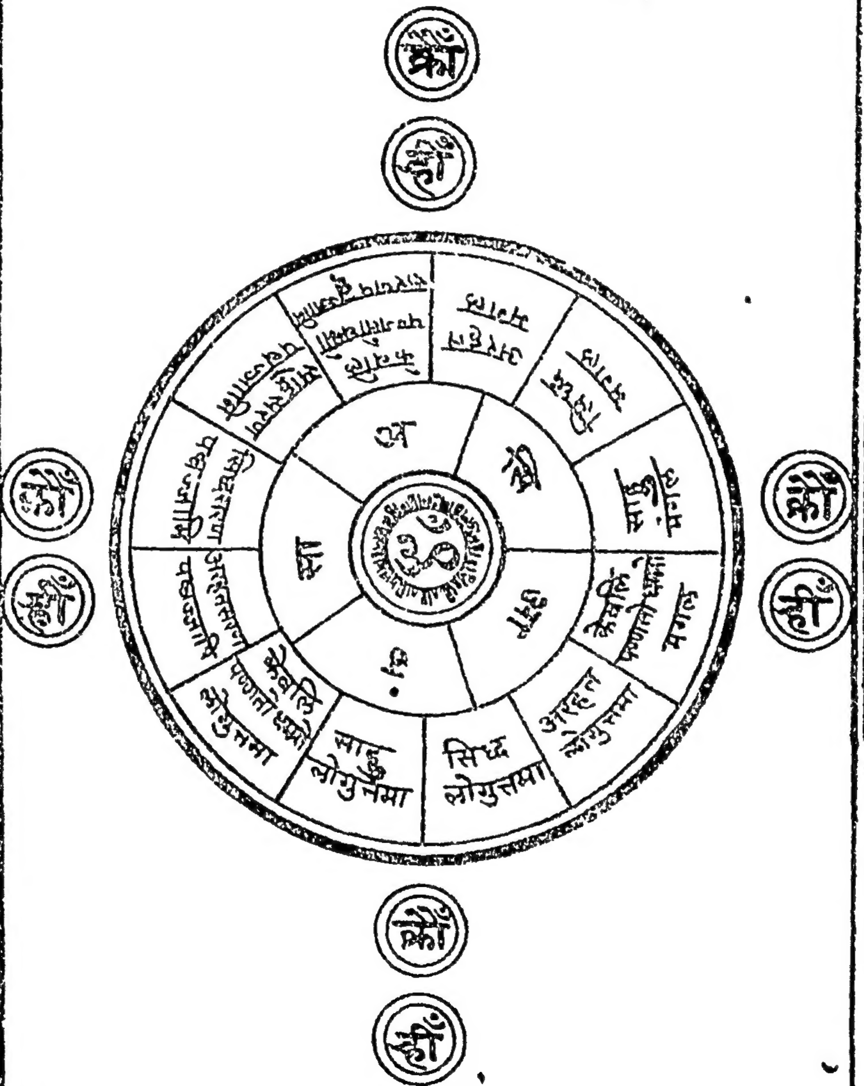

विनायक यंत्र
क्रौं
ह्रीं
सिद्ध लोगुत्तमा
साहु लोगुत्तमा
अरहंत लोगुत्तमा
केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा

यागमंडलका नकशा॥

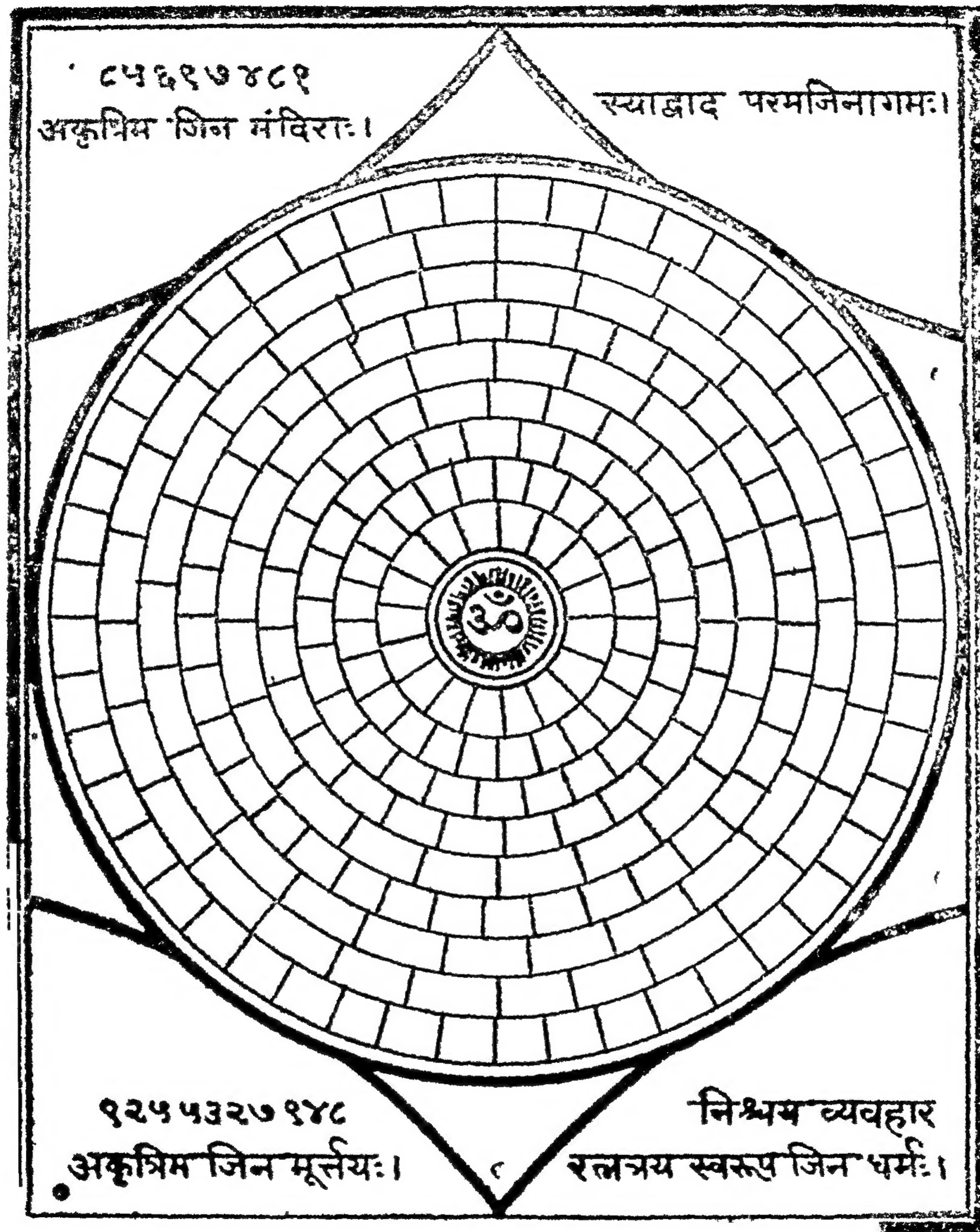

विधिः—९ वलय बनावें। सुन्दर कोठे इस तरह बनावें—
(१) में १७, (२) में २४, (३) मे २४, (४) २४, (५) में २०, (६) मे ३६, (७) में २५, (८) में ४८ व कोनेमें ४ इस प्रकार कुल २५० कोठे सुन्दराकार बनावें।

॥ ॐ ॥

स्व० ब्र० सीतलप्रसादजी द्वारा संग्रहित—

प्रतिष्ठासारसंग्रह

(पञ्चकल्याणकदीपिका)

आवश्यक विषय।

१—प्रतिष्ठा—या स्थापना—यह नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव चार निक्षेपोंमेंसे स्थापना निक्षेपमें गर्भित है। किसी भी अनुपस्थित व्यक्तिकी तदाकार मूर्ति उसके स्वरूपको बतानेमें समर्थ होती है। इसी हेतु तीर्थंकरोंकी अर्हंतोंकी ध्यानाकार मूर्ति उनके ध्यानके स्वरूपको दर्शकके मनमें अंकित कर देती है। प्रतिष्ठाका लक्षण श्री जयसेन आचार्यने इस भांति लिखा है—

प्रतिष्ठानं प्रतिष्ठा च, स्थापनं तत्प्रतिक्रिया। तत्समानात्मबुद्धित्वात्तद्भेदः स्तवादिषु ॥

भावार्थ—प्रतिष्ठान, प्रतिष्ठा, स्थापन, प्रतिक्रियाका भाव यह है कि उसीके समान अपनी बुद्धि हो जाय—अर्थात् वह भाव उसके यह वही स्तवन है—स्तवन पूजादिमें इसकी जरूरत है।

यत्रारोपात् पञ्चकल्याणमंत्रैः, सर्वज्ञत्वस्थापनं तद्विधानैः। तत्कर्मानुष्ठापने स्थापनोक्त, निक्षेपेण प्राप्यते तत्तथैव ॥

भावार्थ—जहाँ पञ्चकल्याणक सम्बन्धी मन्त्रोंके द्वारा जिसमें वह गुण नहीं है उसमें उस गुणके स्थापन करनेसे तथा उस सम्बन्धी विधानके द्वारा सर्वज्ञपना स्थापित किया जावे वह प्रतिष्ठा है। पूजनपाठादि क्रियाके साधनमें स्थापना निक्षेपके द्वारा उस वस्तुको वैसे ही समझ लिया जाता है—अर्थात् सर्वज्ञकी मूर्तिके दर्शनसे सर्वज्ञका भाव हृदयमें अंकित हो जाता है।

जैसे राजाकी स्थापनामें प्रजासमूहकी व क्रियाकी आवश्यकता है वैसे मूर्तिकी प्रतिष्ठामें जैन संघकी व पूजापाठादि क्रियाकी आवश्यकता है जिससे वह मूर्ति पूजनीय व माननीय होजावे।

श्री जिनमन्दिर निर्माण—श्री जिनमन्दिर ऐसा बनाना चाहिये जहां धर्मसाधन भले प्रकार होसके—गृहस्थ श्रावक व श्राविकायें पूजा, सामायिक, शास्त्रसभा, दान आदि कर सकें।

प्रथम तो वह स्थान ऐसी जगह हो जहां आसपास विघ्नकारक व निंद्य मांसहारी, मद्यपानी आदि मनुष्योंकी बस्ती न हो। मन्दिरमें जो पूजापाठादि हो उसमें किसी तरहका विघ्न न आना चाहिये। मन्दिरके लिये इतनी बड़ी जगह लेनी

चाहिये जिसकी चौहद्दीके भीतर बगीचा हो, बीचमें मन्दिर बनवाया जावे। इसका हेतु यह है कि बाहर सड़कका कोलाहल धर्मकार्यमें विघ्न न कर सके। मन्दिरजीमें मुख्य वेदीके चारों तरफ प्रदक्षिणा रहनी चाहिये। सामने इतना बड़ा चौक छाया हुआ रहना चाहिये कि नरनारी बिना बाधाके पूजा पाठ सुन सकें। वेदीका चबूतरा नाभिसे कुछ ऊँचा होना चाहिये। उसके आगे पूजा करनेके लिये नाभिके बराबर मेज हो। इस चौकमें हवा व रोशनी भले प्रकार आ सके। इसलिये बाहरसे खिड़कियें दोनो तरफ वेदीके अगल बगल होनी चाहिये। शास्त्रसभा करनेका स्थान ऐसी जगह होना चाहिये कि पूजा करते हुये भी शास्त्रसभा होसके इसलिये वेदीके चौकको बाहर कोटसे बन्दकर द्वार रहना चाहिए। द्वारके बाहर कुछ दूर जहां आवाज न आ सके, एक बड़ा दालान शास्त्रसभाका हो। उसके एक ओर स्त्रियोंके बैठनेका स्थान हो, दूसरी ओर एक ऐसा दालान हो जहां सरस्वती भण्डार कोठा हो व आगे शास्त्रस्वाध्याय करनेकी जगह हो।

इन दोनों दालानोंमें भी बाहरसे खिड़कियां रहनी चाहिए जिससे रोशनी व वायु भले प्रकार आ सके। यहीं एक ऐसा कमरा बनाना चाहिये जिसके भीतरसे खिड़कियां बगीचेकी तरफ हों व जो बन्द कर लिया जावे व भीतर भव्य जीव शान्तिपूर्वक सामायिक कर सकें। प्रयोजन यह ध्यानमें रक्खा जावे कि पूजा, शास्त्रसभा, शास्त्र-स्वाध्याय व सामायिक चारों काम एकसाथ हो सके तो भी कोई बाधा किसी काममें नहीं आनी चाहिए। बगीचेमें फल फूलके सुगन्धित वृक्ष हों व इधर उधर बैठनेके स्थान बने हों जिसमें धर्मात्मा भाई ध्यान कर सकें या परस्पर धर्मचर्चा कर सकें।

इसी बागीचेके कोटमें लगते हुये कुछ कमरे ऐसे हों जहां औषधालय व विद्यालय हो सके, कुछ कमरे ऐसे हों जहां परदेशी, त्यागी व यात्री ठहर सकें। कुछ दूकानें भी कोटके बाहर निकाल दी जायं तो कुछ हर्ज नहीं है।

बागीचेमें एक घिरा हुआ बाड़ा ऐसा छोड़ दिया जावे जहां पर त्यागीगण मल निरवार कर सकें। ऐसे मन्दिरमें वेदी एक हो वा तीन हो परन्तु हरएकमें मूलनायक बड़े पुरुषाकार विराजमान करने चाहिये जिनका दर्शन दूरसे भी होसके। एक वेदीमें एक ही प्रतिमा पाषाण या धातुकी बड़ी अवगाहनाकी रखनी चाहिये। मात्र एक प्रतिमा धातुकी छोटी रहे जो अभिषेकादि व रथोत्सवादिके समय काममें लाई जा सके। एक वेदीमें बहुत प्रतिमाओंकी पद्धति ठीक नहीं है। अरहंत भगवान् एक गन्धकुटीमें एक ही विराजमान होते हैं।

पण्डित आशाधरजीकृत प्रतिष्ठासारोद्धारमें कथन है कि ऐसी जमीनको मन्दिरके लिये पसन्द करे जो चिकनी हो व सुगन्धित हो व जिसमें दूब आदि उगती हो। नीचे उसके मुर्दा वगैरह गड़ा हुआ न हो। उत्तम भूमिकी पहिचान यह है कि उस भूमिको एक हाथ गहरी व एक हाथ चौड़ी लम्बी खोदे। निकली हुई मिट्टीसे फिर उस गढ़ेको भर दे, यदि कुछ

मिट्टी बचे तो समझना चाहिये भूमि उत्तम है। यदि समान भर जावे तो उसे मध्यम जाने। यदि गढ़ा न भर सके तो उस भूमिको अशुभ समझे। दूसरी पहिचान यह बताई है कि सूर्य छिपनेके पीछे उस जमीनके चारों तरफ चटाईका परकोटा बनाकर हवा रोक ले फिर "ॐ हूं फट्" इस मन्त्रको १०८ बार पढकर पुष्प डाले। उस भूमिकी चारों दिशाओंमें कच्ची मिट्टीके चार घड़े रक्खे। उनपर कच्चे सरावे घीसे भरे हुये रक्खे उनमें पूर्वादि दिशाओंमें क्रमसे सफेद, लाल, पीली, काली बत्ती डाले—दीपक जलावे।

जब तक घी रहे तबतक चार आदमी दीपकके पास बैठे बराबर णमोकार मन्त्र पढते हुए मन्त्र जपते रहें। यदि घीकी समाप्ति तक बत्तियां साफ जलती रहें तो भूमिको शुभ कहना, यदि बुझती हुई मालूम पड़े तो अशुभ समझना चाहिए। मन्दिर निर्माणके सम्बंधमें श्री जयसेनाचार्यजी लिखते हैं कि शुद्ध स्थानमें तथा नगरमें या वनमें या नदीके पास व तीर्थकी भूमिमें विस्तारयुक्त शिखर और ध्वजा सहित जिन भवन बनवावे। कूप, बावड़ी, तालाब, नदी, बगीचा इनकरि शोभित और कीटकादि जन्तुओंसे रहित व मसान तथा शूली आदिके स्थानसे रहित व जले हुये पाषाणोंसे रहित भूमि मन्दिरकी होनी उचित है।

नोट—मन्दिरजीको शिखरबन्द बनाना उचित है। गृह चैत्यालय अपने घरके पास या छतके ऊपर हो सकता है जहां इच्छानुसार काल तक प्रतिमा रह सकती है। यदि गृहस्थी पूजाके लिये समर्थ न हो तो वह प्रतिमाजीको जिनमन्दिरमें विराजमान कर सकता है।

श्री जयसेनाचार्यजी लिखते हैं कि मन्दिरका मुख पूर्व, उत्तर व कदाचित् पश्चिम भी रक्खे—

"मुखं तु शक्रोत्तर पश्चिमासु, कुर्याज्जिनेशालयकस्य मुख्यं ॥ १३ ॥

३—मन्दिरकी नीव रखना—शुभ दिनमें नीव खुदावे और उसे पूजासे शुद्ध करे। फिर पत्थर आदिसे भरकर भूमिके बराबर करे। नींव खोदने पर शिला रखनेके लिये इस प्रकार पूजा करे—नींवके पास ही एक चबूतरेपर या चौकी पर सिंहासन विराजमान करके जिन प्रतिमाको पधरावे। मुख्य पूजक अनेक नरनारियोंके साथ पूजा करे। पहले तो प्रतिमाका अभिषेक करे। फिर अष्टद्रव्यसे नित्य देव शास्त्र गुरु पूजा व सिद्ध पूजा करे फिर पांच शिला अथवा पकी हुई ईंटें जो पासमें रक्खी हों उनको धोकर चन्दनसे साथिया करे फिर नीचेके मन्त्रको १०८ बार पढकर पांचों शिलाओंपर पुष्प छोड़े।

मंत्र—ॐ ह्रीं नमो अर्हद्भ्यः स्वाहा, ॐ ह्रीं नमः सिद्धेभ्यः स्वाहा, ॐ ह्रीं नमः सूरिभ्यः स्वाहा, ॐ ह्रीं नमः पाठकेभ्यः स्वाहा, ॐ ह्रीं नमः सर्वसाधुभ्यः स्वाहा।। अथवा प्राकृत णमोकार मंत्रमें पहले ॐ ह्रीं अन्तमें

स्वाहा जोड़कर रक्खे तथा पांच तांबेके कलश भी रक्खें जिनको भी धोकर साथिया बनाकर भीतर पांच तरहके रत्न क्रमसे डाल दें तथा तांबेका सिद्ध यंत्र या विनायक यंत्र बनाकर उसमें नीव रखनेकी मिती, मूल संघ, कुन्दकुन्दान्वय आदि व मन्दिर बनानेवालोंके नामादि लिखें। मंत्र जपनेके पीछे पहले चार कोनोंमें व एक मध्यमें पांच शिला रखे फिर उन शिलाओंके ऊपर पांचों कलशोंको रक्खे। बीचेके कलशके भीतर घीका जलता हुआ दीपक रक्खे तथा कलशके नीचे पहले यन्त्र स्थापन करके फिर कलशको रक्खें। इस कलशको ढँक देवे। शिला व कलश रखते समय बाजे बजवावे फिर नीवको भरवावे। पश्चात् कारीगरोंको दान देवे फिर पूजा विसर्जन करे। विनायक यन्त्रका वर्णन अध्याय १० में है।

४–प्रतिमा बनानेकी विधि–प्रतिमा बनवानेके लिये पहाड़से उत्तम मोटी शिला लानी चाहिये। वह शिला प्रसिद्ध स्थानकी चिकनी, ठण्डी, मीठी, सुन्दर, मजबूत, सुगठित, ठोस व अच्छे रङ्गवाली हो। बिंदुरेखा आदि दोष न हों व उसकी ध्वनि भी अच्छी हो उस शिलाको निकालकर धोवे तथा साथिया बनावे तथा वहां नित्य देव शास्त्र गुरु पूजा व सिद्ध पूजा करके फिर १०८ बार णमोकार मंत्र ॐ ह्रीं पहले व स्वाहा पीछे लगाकर पढ़ें और उसपर पुष्प डाले। फिर पूजा विसर्जन करके उसको लावे। जिन मंदिरकी तीन प्रदक्षिणा देकर शुभ दिनमें उस शिलाको सुगन्धित औषधियोंसे धोकर मन्दिरमें रक्खे तथा सिद्ध स्तुति व शांति पाठ पढ़े। फिर शुभ दिनमें कारीगरोंको मूर्ति बनानेके लिये सौंपे। कारीगर अच्छी निगाहवाला, शिल्पशास्त्रका जाननेवाला, मदिरा मांसादिका त्यागी, पूर्ण अङ्गवाला, चतुर, क्षमावान् व मन, वचन कायसे शुद्ध हो। वह कारीगर जबतक प्रतिमा न बन जावे नियमसे भोजन करे–संयम रूप रहे, ब्रह्मचर्य पाले तथा सुभीतेसे काम करे–उससे जल्दी न कराई जावे।

प्रतिमाका लक्षण पंडित आशाधरजीने कहा है—

शान्तप्रसन्नमध्यस्थनासाग्रस्थाविकारदृक्। सम्पूर्णभावरूपानुविद्धांगं लक्षणान्वितं ॥ ६३ ॥

रौद्रादिदोषनिर्मुक्तं प्रातिहार्यांकयक्षयुक्। निर्माप्य विधिना पीठे जिनबिम्बं निवेशयेत् ॥ ६४ ॥

भावार्थ—जो शान्त, प्रसन्न, मध्यस्थ, नासाग्रस्थित अविकारी दृष्टिवाली हो, जिसका अङ्ग वीतरागतासे पूर्ण हो, अनुपम वर्ण हो व शुभ लक्षणों सहित हो, रौद्रादि बारह दोषोंसे रहित हो, अशोक वृक्षादि प्रातिहार्योंसे युक्त हो और दोनों तरफ यक्ष यक्षीसे वेष्टित हो ऐसी जिन प्रतिमाको बनवाकर विधि सहित सिंहासन पर विराजमान करे।

१–दोष ये हैं–रौद्र, कृशांग, संक्षिप्तांग, चिपिटनासिका, विरूपक नेत्र, हीनमुख, महा उदर, महा हृदय, महाअंस, महा कटी, महा बाहु, हीन जंघा, शुष्क जंघा।

दृष्टि ऐसी होनी चाहिये—

नात्यन्तोन्मीलितास्तब्धा न विस्फारितमीलिता। तिर्यगूर्ध्वमधोदृष्टिर्वर्जयित्वा प्रयत्नतः॥
नासाग्रनिहिता शांता प्रसन्ना निर्विकारया। वीतरागस्य मध्यस्था कर्तव्या दृष्टिरुत्तमा॥

अर्थात्—न तो बिलकुल मुंदी हो न फैली हुई हो न तिरछी हो न ऊपरको हो न नीचेको हो। इन दोषोंको बचाकर नासाके अग्रभागमें धरी हुई दृष्टि, शांत, प्रसन्न, निर्विकारी माध्यस्थ ऐसी दृष्टि वीतराग प्रतिमाकी होनी चाहिये।

प्राचीनकालमें अर्हतकी प्रतिमामें पाषाणके ही छत्र चमरादि प्रातिहार्य बने होते थे। दक्षिणमें जो प्राचीन जैन मूर्तियां मिलती हैं वे सब छत्र चमरादि प्रातिहार्य सहित ही मिलती हैं। इधर उत्तर भारतमें अलगसे छत्र चमर सिंहासनादि लगानेका रिवाज है सो पुराना नहीं है। पाषाण या धातुमें ही छत्र चमरादि बना देनेसे कोई शंका छत्र चमरादिको चोरी जानेकी भी नहीं होती है। जिस प्रतिमामें प्रातिहार्य नहीं बने होते हैं वह प्रतिमा सिद्ध भगवानकी होती है। कहीं कहीं प्राचीन प्रतिमाओंमें यक्ष यक्षिणीके स्थानमें दोनों ओर दो चमरेन्द्र बने हुये मिलते हैं।

श्री जयसेनाचार्यजीने मूर्तिका स्वरूप ऐसा लिखा है—

स्वर्णरत्नमणिरौप्यनिर्मितं, स्फटिकामलशिलाश्रयं। उत्थितांबुजमहासनांगितं, जैनबिम्बमिह शस्यते बुधैः॥६४॥

भावार्थ—सुवर्ण, रत्नमणि, चांदीसे निर्मित हो व स्फटिक व निर्दोष शिलासे बनी हो व कायोत्सर्ग तथा पद्मासन कर अंकित जिनेन्द्रका बिम्ब बुद्धमानोंने सराहा है।

श्लोक १५१ से १८२ में बिम्ब बनानेकी जो विधि बताई है उसमें लिखा है कि बिम्ब ऐसा हो कि हृदयमें श्रीवृक्षलक्षण हो व नख केश रहित हो। कायोत्सर्ग व पद्मासन प्रतिमाकी माप वहां बताई है सो उस पाठको देख कर समझ लेना चाहिये।

श्लोक १८० व १८१ उपयोगी हैं। कहा है—

सल्लक्षणं भावविवृद्धहेतुकं, सम्पूर्णशुद्धावयवं दिगम्बरं। सत्प्रातिहार्यैर्निजचिह्न भासुरं, संकारयेद्बिम्बमथार्हतः शुभम्॥
सिद्धेश्वराणां प्रतिमाऽपि योज्या, तत्प्रातिहार्यादि विना तथैव। आचार्यसत्पाठकसाधुसिद्धक्षेत्रादिकानामपि भाव शुद्धयै॥

भावार्थ—अर्हतका बिंब सत् लक्षण सहित शान्त भावको बढानेवाला, सम्पूर्ण अङ्गोपाङ्ग शुद्ध दिगम्बर रूप आठ प्रातिहार्य सहित व अपने चिह्नसे प्रकाशमान कराना योग्य है। सिद्ध परमेष्ठीका बिंब भी प्रातिहार्य बिना स्थापना योग्य है

तथा भावोंकी शुद्धिके लिये आचार्य, उपाध्याय, साधु तथा सिद्ध क्षेत्र आदिकी प्रतिमा भी करानी योग्य है।

नोट-इससे सिद्ध है कि आठ प्रातिहार्य सहित प्रतिमा अर्हंतकी, प्रातिहार्य बिना सर्व अङ्गोपाङ्ग सहित प्रतिमा सिद्धकी व पीछी कमण्डल सहित प्रतिमा आचार्य, उपाध्याय, साधुकी तथा सम्मेदशिखरादि क्षेत्रोंकी मूर्ति ये सब बन सक्ती हैं। जो धातुमें छिद्र करके सिद्धकी प्रतिमा बनाते हैं सो ठीक नहीं है। इस प्रतिमापर आसनमें चिह्न खुदाना चाहिये। जिस प्रतिमाको जिस तीर्थंकरकी प्रसिद्ध करनी हो वह चिह्न तथा उसके साथ प्रतिष्ठाकी मिति सम्वत् मूलसङ्घ कुन्दकुन्दान्वय आदि व प्रतिष्ठा करानेवाले श्रावकादिका परिचय सब खुदवा देना चाहिये। बहुत प्राचीन प्रतिमाओंमें लेख नहीं मिलते हैं, परन्तु इस कालमें लेख लिखना बहुत उपकारी है।

५-प्रतिष्ठा करनेके लिये मुहूर्त-प्रतिष्ठा करनेके लिये शुभ मुहूर्त निकलवा लेना चाहिये तब ही प्रतिष्ठा करनी योग्य है। जो मुख्य प्रतिष्ठाकारक हो उसके नामसे मुहूर्त निकलवाया जावे। श्री जयसेनाचार्यजीने श्लोक १८७से२०२में इस विषयका वर्णन किया है उसका कुछ जरूरी जानने योग्य भाग यह है कि मङ्गल, रविवार, शनिवारको छोड सब वार शुभ हैं; अमावस्या, पूर्णिमा, एकादशी मना है तथा जिस तीर्थंकरकी प्रतिमा प्रतिष्ठित करावे, जिस तिथिमें जो कल्याणक हुआ हो उस तिथिमें वह कल्याणक इष्ट है तथा रविवारकी अष्टमी, सोमवारको नौमी, मङ्गलवारको तीज, बुधवारको द्वादशी व दोइज, गुरुवारकी दसमी- पञ्चमी व पूर्णिमा व शुक्रवारकी छठ व पडिवा, शनिवारी चौथ तथा नौमी श्रेष्ठ हैं।

६-प्रतिष्ठा करनेका मण्डप बनानेकी विधि-राजाकी आज्ञा लेकर शुभ स्थानमें मण्डप बनावे तब पहले ही प्रतिष्ठाचार्य वहांके निवासी देव आदिसे २१ बार णमोकार मन्त्र पढवाकर क्षमाप्रार्थना करे कि यहां मैं प्रतिष्ठा विधि करना चाहता हूं, आप क्षमा करें। मण्डप ऐसा बनाना चाहिये जैसा कि नाटक-घर सर्व तरफसे ढका होता है। प्रवेशद्वार रखने चाहिये। उनपर मनुष्य नियत हो। क्योंकि दर्शकोंकी भीड परिमित हो इसलिये जितना स्थान सुखसे बैठने योग्य स्त्री तथा पुरुषोंके लिये हो उतने ही टिकट बना लेने चाहिये। आनेवाले स्त्री पुरुषोंको बिना कुछ लिये हुये टिकट देकर भीतर भेजना चाहिये जब वह बाहर आवे तब फिर टिकट ले लेना चाहिये। मण्डपमें कोलाहल न हो व धक्कापेल न हो इसलिये सुप्रबन्धकी जरूरत है। जैसे नाटकघरमें सब सुखसे बैठकर नाटक देखते हैं ऐसे इस मण्डपमें स्त्री पुरुष सुखसे बैठकर श्री जिनेन्द्रके कल्याणकका दृश्य देख सकें ऐसा प्रबन्ध करना चाहिये।

पूर्व ओर या उत्तर ओर सामनेको वेदी आदिका स्थान रखना चाहिये जो स्थान नीचेकी भूमिसे कुछ ऊँचा हो। तीन तरफ दर्शकोंको बैठनेका स्थान नाटकके समान बना देना चाहिये। डेढ तरफ स्त्रियोंके लिये व डेढ तरफ पुरुषोंके

लिये। दोनोंके प्रवेश व निकलनेके भिन्न दो दो द्वार अलग २ होने चाहिये। वेदीमें तीन वेदी बाहर २ बनाना चाहिये। मध्यकी वेदी तीन कटनीदार प्रतिमाओंके विराजमान करनेके लिये, उस वेदीकी बाईं ओर वेदीके हामके तीन कुण्ड गोल, चौखूँटे, व त्रिकोण होमके लिये बनाने चाहिये व दाहिनी ओर राजगृहकी रचना होनी चाहिये। इनके आगे एक चबूतरा वास्ते मण्डल बनाने व पूजा करनेके लिये होना चाहिये। इस चबूतरेके आगे एक परदा नाटकके समान होना चाहिये। उसीके लगता ही आगे दूसरा चबूतरा होना चाहिये जहां प्रतिष्ठा सम्बन्धी अनेक दृश्य बताये जा सकें, जैसे माताका स्वप्न देखना, राज सभा, इन्द्रका आना, वैराग्य, समवशरण सभा, आदि। इन दोनों चबूतरों तक ऐसी आड़ कर देनी चाहिये कि सिवाय प्रतिष्ठामें उपयोगी व्यक्तियोंके और कोई प्रवेश नहीं कर सके। वेदीके पीछे सामग्री बनानेको व प्रतिष्ठाके योग्य सामान रखनेको स्थान नियत करना व पास ही जाप व सामायिक करनेका स्थान पीछे नियत करना चाहिये। शास्त्र सभा व व उपदेश सभाके लिये अलग मण्डप बनाना व उसीमें ऊपरके भागमें एक पूजा-वेदी जुदी करना जिसमें प्रतिमा विराजमान रहे जिससे यात्रीगण वहीं पूजा, शास्त्रादि क्रियाएं कर सकें। प्रतिष्ठा मण्डपमें सिवाय प्रतिष्ठा विधिके और कार्य कोई न करे। विना ऐसा प्रबन्ध हुये प्रतिष्ठाका आनंद शान्तिपूर्वक नहीं मिल सकता है तथा छोटे २ बचोंके दिल बहलानेके लिये एक भिन्न मण्डप बना देना चाहिये जहां वे खेला करें। वहां कुछ तस्वीरें लगवा देनी चाहिये व कुछ खिलौने रख देने चाहिये। एक मंडप ऐसा हो जिसमें स्वदेशी वस्तुओंका बाजार हो उनमें स्त्रियां ही दुकानदार हों। बहुधा स्त्रियोंको वस्तुओंके खरीदनेका शौक होता है यदि उनके लिये स्वदेशी पदार्थोंकी प्रदर्शनी रहे व स्त्रियां ही प्रबंधक हों तो उनका काम भी निकल जावे तथा जो निर्लज्जपना नीच कौमके सौदेवालोंके साथ स्त्रियोंके मिलने व बात करनेमें होता है वह भी जाता रहे।

७-प्रतिष्ठा करनेके लिये पात्रोंकी आवश्यकता।-नीचे लिखे पात्र प्रतिष्ठाको विधिमें आवश्यक हैं- (१) प्रतिष्ठा करनेवाला प्रतिष्ठाचार्य, (२) सौधर्म इन्द्र और उसकी इन्द्राणी, (३) कुछ इन्द्र या प्रतीन्द्र, (४) तीर्थंकरके पिता, (५) तीर्थंकरकी माता, (६) पूजा पढ़ानेमें सहायक विद्वान्, (७) सामग्री तैयार करनेवाले चार महाशय, (८) कमसे कम आठ पढ़ी हुई कन्यायें जो देवियोंका काम कर सकें, (९) लौकान्तिक देव आठ जो स्त्री रहित पुरुष सदाचारी हों, (१०) एक सूचनाकर्ता, (११) चार प्रबन्धक।

(१) प्रतिष्ठाचार्यका लक्षण-शास्त्रज्ञाता, सदाचारी, जिनधर्मका दृढ़ श्रद्धानी, संतोषी, पवित्र शरीरी, उच्च कुली, सात व्यसन रहित, ब्रह्मचारी, त्यागी या गृहस्थ हो, जबसे प्रतिष्ठाका कार्य करावे एक दफे भोजन करे, शुद्ध वस्त्र पहरे।

(१) इन्द्रका लक्षण—सम्पत्तिवान, रात्यवान, नवयुवक, उच्चकुली, जैनधर्मका श्रद्धानी, सदाचारी, शास्त्रज्ञाता, मान्य, सप्तव्यसन त्यागी अर्थात् पाक्षिक श्रावकका आचार पालनेवाला हो। यह यज्ञोपवीतका धारी हो, कमसे कम नीचे लिखे गहने पहने—(१) करधनी कमरमें, (२) अंगुलीमें अंगूठी, (३) हाथमें कड़े, (४) कंठमें हार, (५) कानोंमें कुंडल, (६) मुकुट। जबतक प्रतिष्ठा समाप्त न हो एक दफे भोजन करे, दूसरी दफे पान पदार्थ ले सकता है। तीनों समय सामायिक करे। शुद्ध वस्त्र केशरसे रंगे हुये पहरे, गृहस्थके कार्योंसे निश्चिन्त हो ब्रह्मचर्य पाले। इन्द्राणी भी इन्द्रके समान नियम पाले व पढ़ी हुई विचारवान होनी चाहिये। उसीकी स्त्री होना ठीक है।

(२) अन्य इन्द्र या प्रत्येन्द्र यदि ११ और हो सकें तो अच्छा है। ये सब भी इन्द्रके समान नियम पालनेवाले हों।

(४) तीर्थंकरका पिता—मुख्य संघपति जो श्रद्धावान व सदाचारी हो व पाक्षिक श्रावकका नियम पालता हो। प्रतिष्ठा होने तक रात्रि भोजन पानका त्यागी हो, दिनमें एक दफे भोजन करे, अन्य समय पान पदार्थ दूधादि ले सक्ता है, ब्रह्मचर्य पाले, घरके कार्योंसे निश्चिन्त हो, दो दफे सवेरे शाम सामायिक करे, चित्तका उदार तथा दानी हो तथा शिक्षित हो।

(५) तीर्थंकरकी माता—उसकी स्त्री जो ऊपरके नियम पाले, शिक्षित या समझदार हो।

(६) पूजा पढ़ानेमें सहायक २ विद्वान् भी प्रतिष्ठा तक नियमसे रहे, एक भुक्त करे, दूसरी दफे पान पदार्थ लेवें, ब्रह्मचर्य पालें, पाक्षिक श्रावक हों।

(७) सामग्री तैयार करनेवाले ४ महाशय भी ऊपरकी भांति वर्तें।

(८) ८ कन्यायें जो १२ वर्षके अनुमान हों, स्वरूपवान हों, उनको केशरसे रंगे वस्त्र पहराये जावें, मुकुट लगावें, प्रतिष्ठा होने तक पानी सिवाय रात्रिको कुछ न लेवें, दोनों काल जाप करें।

(९) ८ ब्रह्मचारी या स्त्री रहित वैरागी या उदासीन भाव रखनेवाले पुरुष सफेद, शुद्ध वस्त्र पहने व चांदीका सफेद ही मुकुट लगावें।

(१०) सूचनाकर्ता पढा हुआ बुद्धिमान ऐसा हो जिसका स्वर ऊँचा व गम्भीर तथा माननीय हो व विद्वान हो।

(११) चार प्रबन्धक भाई ऐसे चतुर हों जो प्रतिष्ठामें आवश्यक वस्तुओंका प्रबन्ध पहलेसे ही कर देवें व जो प्रतिष्ठाचार्यसे सम्मति लेते रहें व उसकी आज्ञानुसार सब काम करें व यह देखें कि प्रतिष्ठाके कार्यमें सावधानी व शांति है व दर्शकगणोंका मन धर्मभावमें भीज रहा है।

८-नान्दी विधान-श्री जिन मन्दिरमें किसी शुभ दिन सब नरनारी एकत्र हों तथा ऊपर लिखे सर्व ही पात्र प्रतिष्ठाकी विधि करानेमें सहायक हैं सो एकत्र होवें। जब नित्य अभिषेक व पूजन हो जावे तब श्री जिन भगवानके आगे वेदीपर साथिया बनावे और उसके ऊपर एक माला व वस्त्रसे वेष्टित कलशको कुलवंती स्त्रियां उस स्वस्तिक पर प्रथम अर्घ चढाकर विराजमान करें।

फिर इंद्र जिसको स्थापित किया हो उसको तथा तीर्थंकरका पिता जिसे स्थापन किया हो ये दोनों शुद्ध चन्दन-चर्चित जलसे स्नान करें और शुद्ध वस्त्र पहनकर आवें, तब श्री जिनमुनि हों तो उनके सामने नहीं तो प्रतिमाजीके सामने प्रतिष्ठाचार्य नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर पुष्प क्षेपण करे। दोनों पर अलग २ मन्त्र पढ़कर डाले।

ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा णमो अरहंताणं सर्वर्द्धिसमृद्धगणधराणं अनाहतपराक्रमस्ते भवतु।

फिर आगे इन्द्र व मुख्य यजमान अर्थात तीर्थंकरका पिता हाथ जोड खड़ा हो। पीछे अन्य सब पात्र खड़े हों और योगभक्ति तथा सिद्धभक्ति प्रतिष्ठाचार्य पढ़ें तथ पढ़वावें। फिर कलश पर पुष्पक्षेपण करें व करावें। फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर तीर्थंकरके पिता पर पुष्पक्षेपण करें—

"ॐ अद्य (यहां देश, नगर, काल कहे) अस्य यजमानस्य (यहां तीर्थंकरके पिता बननेवालेका नाम ले) इक्ष्वाकवंशे श्री ऋषभनाथ संताने काश्यप गोत्रे परावर्तनं यावद्दुष्वरं भवतु भवतु क्रौं ह्रीं हूं नमः।"

नोट—जिस तीर्थंकरकी प्रतिष्ठा करनी हो उसीका वंश व गोत्रका नाम ले। उस यजमानमें जबतक प्रतिष्ठापूर्ण न हो स्थापित करे। फिर आचार्य यजमानके कंकण और इन्द्रके मुकुटबंध बांधे। इस दिन इन्द्र तथा यजमान उपवास ना एकभुक्त करे तथा आसे प्रतिष्ठा होने तक किसीके पंक्तिमें भोजन न करे-शुद्ध भोजन करे। फिर सब पात्र जो जो नियम पहले बताये गये हैं उनके पालनेका संकल्प करें। जिस समय कंकण बांधा जावे व मुकुट बांधा जावे उस समय मन्दिरके बाहर बाजे बजाये जावें। फिर सब पात्र खड़े होकर शांति पाठ व विसर्जन करें।

९.-मण्डपरक्षा विधि व ध्वजादण्ड स्थापित करना—जहां प्रतिष्ठाकी विधि की जाय उस मण्डपको यथायोग्य ध्वजाओंसे सज्जित करें, द्वारों पर वन्दनमालायें बांधें व चार तरफके मुख्य द्वारों पर धूप घट रक्खें जिनमें धूप सदा दिनमें दी जाया करे व चार मुख्य कलश मिट्टीके या धातुके वस्त्रसे सज्जित कर व ९ दफे णमोकार मंत्र पढ़कर मंत्रित कर चारों मुख्य द्वारों पर विराजमान करें।

जिस दिन मण्डप प्रतिष्ठा व ध्वजा स्थापन विधि हो उस दिन नरनारी व प्रतिष्ठा करनेवाले सब पात्र उपस्थित हों। मण्डपकी ऊँचाईसे दुगुना व अधिक ऊँचा ध्वजादण्ड तैयार किया जावे उसमें त्रिकोणी ध्वजा बड़ी शुद्ध वस्त्रकी रङ्गीन तय्यार की जावे। उस ध्वजमें श्री अर्हंतका चित्र आठ प्रतिहार्य सहित चित्रित हो। यदि चित्र न बन सके तो बड़ा ॐ लिखा जावे तथा नीचे लिखा जावे—जैनधर्मकी जय। फिर लिखा जावे—श्री जिनेन्द्रमूर्ति प्रतिष्ठामण्डपमें पधारिये। इस ध्वजादंडको मण्डपके आगे तीन कटनीदार चबूतरा बनाकर बीचमें मजबूत गाड़ा जावे।

इस दिन ऊपर टेबिल पर शास्त्र या यंत्र विराजमान करके इन्द्र पहले नित्य व सिद्ध पूजा करे। सामने ध्वजादंड रक्खा हो। सिद्धभक्ति तथा श्रुतिभक्ति पढ़े फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़कर ध्वजा पर पुष्प क्षेपे—

ॐ ह्रीं अर्हं जिनशासनपताके सदोच्छ्रिता तिष्ठ तिष्ठ भव भव वषट् स्वाहा।

फिर उदक चंदनादि बोलकर अर्घ चढ़ावे और ध्वजा दंडको चबूतरे पर खड़ा करावे।

फिर इन्द्र नीचेप्रकार देवोंको प्रतिष्ठाविधिमें सेवा करनेकी आज्ञा करे।

(१) चार प्रकार देवोंको नीचेका श्लोक पढ़कर कहे व मंडपके चारों तरफ पुष्प क्षेपे।

चतुर्णिकायामरसंघ एष, आगत्य यज्ञे विधिना नियोग। स्वीकृत्य भक्त्या हि यथार्हदेशे, सुस्था भवंत्वा-निहककल्पनायाम् ॥

(२) पवनकुमार देवोंको यह पढ़कर कहे व पुष्प क्षेपे—

आयातमारुतसुराः पवनोद्भटाशाः, सघट्टसंलसितनिर्मलतांतरीक्षाः।
वात्यादिदोषपरिभूतवसुन्धरायां, प्रत्यूहकर्म निखिलं परिमार्जयन्तु ॥

(३) वास्तुकुमार देवोंको कहे व पुष्प क्षेपे—

आयातवास्तुविधिषूद्भटसंनिवेशा, योग्यांशभागपरिपुष्टवपुः प्रदेशाः।
अस्मिन् मखे रुचिरसुस्थितभूषणांके, सुस्था यथार्हविधिना जिनभक्तिभाजः ॥

(४) मेघकुमारदेवोंको कहे व पुष्प क्षेपे—

आयात निर्मलनभः कृतसंनिवासा, मेघासुराः प्रमदभारनमच्छिरस्काः।
अस्मिन्मखे विकृत विक्रियया नितांते, सुस्था भव तु जिनभक्तिमुदाहरन्तु ॥

(५) अग्निकुमार देवोंको कहे व पुष्प क्षेपे—

आयातपावकसुराः सुरराज पूज्य, सस्थापनाविधिषु संस्कृतविक्रियार्हाः।
स्थाने यथोचितकृते परिबद्धकक्षाः, सन्तु श्रियं लभत पुण्यसमाजभाजां ॥

(६) नागकुमार जातिके देवोंको कहे व पुष्प क्षेपे—

नागाः समाविशत भूतलसन्निवेशाः, स्वां–भक्तिमुल्लसितगातत्रया प्रकाश्य।
आशीविषादिकृतविघ्नविनाशहेतोः, स्वस्था भवंतु निजयोग्यमहासनेषु ॥

(७) फिर पूर्व ओरके द्वारपाल यक्षको नीचेका श्लोक पढ़कर स्थापित करे तब पूर्व द्वार पर जो कलश रक्खा है उसपर पुष्प क्षेपे—

पुरुहितदिशिस्थिति मे हि करोदु, घृतकांचनदण्डखण्डरुचे। विधिना कुमुदेश्वरसव्यशये, घृतपङ्कज शङ्कितकंकणके ॥

(८) फिर ऊपरके समान दक्षिण दिशामें स्थापन करे—

वामनाशुयमदिग्विभागतः, स्थानमेहि जिनयज्ञकर्मणि। भक्तिभारकृतदुष्टनिग्रहः, पूतशासनकृ॰ामबंध्यकः॥

(९) इसी तरह पश्चिम दिशामें करे—

पश्चिमासु विततासु हरित्सु, भूरिभक्तिभरभूकृतपीठाः। अञ्जनस्वहितकाम्ययाऽध्वरे, तिष्ठ विघ्नविलयं प्रणिधेहि

(१०) इसी तरह उत्तर दिशामें करे—

पुष्पदन्तभवनासुरमध्ये, सत्कृतोऽसि यत इत्थमवोचम्। उत्तरत्र मणिदण्डकराग्रस्तिष्ठ विघ्नविनिवृत्तिविधायी ॥

इसतरह चार द्वारपर चार यक्ष द्वारपाल स्थापे।

(१२) कुबेरको रत्नवृष्टि आदिके लिये नियत करे।

करकृतकुसुमानामञ्जलिं सवितीर्य, धनदमणिसुरक्षानीशपूजार्थसार्थे।
विकिर विकिर शीघ्र भक्तिमुद्भावयित्वा, निगदतु परमांके मण्डपोर्ध्वावकाशे ॥

इतना पढ़ पुष्प मण्डपके ऊपर क्षेपण करे।

फिर सब पात्र मिलकर स्तुति पढ़ते हुये ध्वजादण्ड सहित मंडपकी तीन प्रदक्षिणा दें और शांतिपाठ विसर्जन करें। ध्वजादंड स्थापनके समय व आगे पीछे वादित्र बजाए जावें।

(१०) जप करनेकी विधि–बिम्ब प्रतिष्ठामें १ लाख व मंदिर या वेदी प्रतिष्ठामें १०००० या ८००० जप करना उचित है।

इस जपको गर्भकल्याणकके होनेके पहले तक मंडपकी वेदी के स्थानमें बैठकर समाप्त किया जावे।

यदि १० आदमी हों व १००० जप रोज करें तो १० दिन चाहिये। यदि अधिक हों व कम हों तो जिसतरह १ लाख जप पूरे हों वह प्रबन्ध किया जावे

एक लाख लौंगे गिन ला जावें। जप करनेवाले आगे अग्निकी अंगीठी रख लेवें तथा एक एक मन्त्र पढते हुये एक एक लौंग डालते जावें शुद्ध वस्त्र पहनकर सवेरेके समय निराहार निर्मल भावसे जप करें। अशुद्ध बोलनेवाले न हों—

"ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वविघ्नविनाशनाय स्वाहा।

११–यागमण्डल बनानेकी विधि–मण्डपमें मूल मध्य वेदीके आगे जो चबूतरा हो उसपर मंडल बनानेकी आवश्यक्ता है। मण्डल बनानेके लिये सफेद, पीला, लाल, काला, हरा इन पांच रंगोंके रंगे हुये चावल तैयार करे और इनसे बहुत सुन्दर मण्डल नीचे प्रमाण बनावें। या अन्य तरहके चूर्णसे मण्डल बनावे जो बिगड़े नहीं। मध्यमें ॐ लिखे, उसके चारों तरफ एक वलय बनावें।

(१) पहले वलयमें १७ खाने करे व १७ पुञ्ज भिन्न २ रक्खे या १७ फूल बनावे व १७ नाम नीचे प्रमाण लिखे। अपनी बाईं ओरसे शुरू करके घूमते हुए दाहिनेको आवे, जैसे प्रदक्षिणा देते हैं—

१ अर्हंत, २ सिद्ध, ३ आचार्य, ४ उपाध्याय, ५ साधु, ६ अर्हंत मङ्गल, ७ सिद्ध मंगल, ८ साधु मंगल, ९ केवलि प्रज्ञप्तधर्म मङ्गल, १० अर्हंत लोकोत्तम, ११ सिद्ध लोकोत्तम, १२ साधु लोकोत्तम, १३ केवलीप्रज्ञप्तधर्म लोकोत्तम, (इसको कम करके भी लिख सकता है– के० प्र० धर्म लोकोत्तम), १४ अर्हंत शरणं, १५ सिद्ध शरणं, १६ साधु शरणं, १७ के० प्र० शरणं।

(२) उसके बाहर दूसरा वलय खींचे–उसमें २४ भूत चौबीसीके २४ खाने करके पुञ्ज रक्खे या फूल बनावे व अलग २ नीचे प्रकार नाम लिखे—

१ निर्वाण, २ सागर, ३ महासाधु, ४ विमलप्रभ, ५ शुद्धाभदेव, ६ श्रीधर, ७ श्रीदत्त, ८ सिद्धाभ, ९ अमलप्रभ, १० उद्धार, ११ अग्निदेव, १२ संयम, १३ शिव, १४ पुष्पांजलि, १५ उत्साह, १६ परमेश्वर, १७ ज्ञानेश्वर, १८ विमलेश्वर, १९ यशोधर, २० कृष्णमति, २१ ज्ञानमति, २२ शुद्धमति, २३ श्रीभद्र, २४ अनन्तवीर्य। फिर तीसरा वलय खींचे।

(३) तीसरा वलय–इसमें भी २४कोठे करके २४ पुंज रक्खे या २४ फूल बनावे या २४ नाम वर्तमान जिनके लिखे–

१ ऋषभ, २ अजित, ३ संभव, ४ अभिनन्दन, ५ सुमति, ६ पद्मप्रभ, ७ सुपार्श्व, ८ चन्द्रप्रभ, ९ पुष्पदंत, १० सीतल, ११ श्रेयांश, १२ वासुपूज्य, १३ विमल, १४ अनन्त, १५ धर्म, १६ शांति, १७ कुन्थु, १८ अर, १९ मल्लि, २० मुनिसुव्रत, २१ नमि, २२ नेमि, २३ पार्श्वनाथ, २४ वर्द्धमान। इसके आगे चौथा वलय खींचे।

(४) चौथा वलय–इसमें भी २४ कोठे खींच करके २४ पुंज रक्खे या २४ फूल बनावे या २४ नाम भविष्य जिनके लिखे—

१ महापद्म, २ सुरप्रभ, ३ सुप्रभ, ४ स्वयंप्रभ, ५ सर्वायुध, ६ जयदेव, ७ उदयप्रभ, ८ प्रभादेव, ९ उदंकदेव, १० प्रश्नकीर्ति, ११ जयकीर्ति, १२ पूर्णबुद्धि, १३ निःकषाय, १४ विमलप्रभ, १५ बहुलप्रभ, १६ निर्मल, १७ चित्रगुप्ति, १८ समाधिगुप्ति, १९ स्वयंभू, २० कन्दर्प, २१ जयनाथ, २२ विमल, २३ दिव्यवाद, २४ अनन्तवीर्य। इसके आगे पांचवा वलय खींचे।

(५) पांचवा वलय– इसमें २० कोठे करके २० पुञ्ज रक्खे या २० फूल बनावे या नीचे लिखे २० नाम विदेहके वर्तमान तीर्थंकरोंके लिखे—

१ सीमंधर, २ युगमन्धर, ३ बाहु, ४ सुबाहु, ५ संजातक, ६ स्वयंप्रभ, ७ ऋषभानन, ८ अनन्तवीर्य, ९ सूरप्रभ, १० विशालप्रभ, ११ वज्रधर, १२ चन्द्रानन, १३ चन्द्रबाहु, १४ भुजङ्गम, १५ ईश्वर, १६ नेमिप्रभ १७ वीरसेन, १८ महाभद्र, १९ देवयश, २० अजितवीर्य इसके आगे छठा वलय खींचे—

(६) छठा वलय–इसमें आचार्यके छत्तीस गुणके लिये छत्तीस कोठे करे, ३६ फूल बनावे या उनमें इतने ही पुञ्ज करे या गुणोंके नाम नीचे प्रमाण लिखे—

१ दर्शनाचार, २ ज्ञानाचार, ३ चारित्राचार, ४ तपाचार, ५ वीर्याचार, ६ अनशन तप, ७ अवमोदर्य, ८ वृत्ति परिसंख्यान, ९ रस परित्याग, १० विविक्तशय्यासन, ११ कायक्लेश, १२ प्रायश्चित्त, १३ विनय, १४ वैयावृत्त, १५ स्वाध्याय, १६ व्युत्सर्ग, १७ ध्यान, १८ उत्तम क्षमा, १९ उत्तम मार्दव, २० उत्तम आर्जव, २१ उ० सत्य, २२ उ० शौच, २३ उ० संयम, २४ उ० तप, २५ उ० त्याग, २६ उ० आकिंचन, २७ उ० ब्रह्मचर्य, २८ मनोगुप्ति, २९ वचनगुप्ति, ३० कायगुप्ति, ३१ सामायिक, ३२ वन्दना, ३३ स्तवन, ३४ प्रतिक्रमण, ३५ स्वाध्याय, ३६ कायोत्सर्ग। इसके आगे सातवां वलय खींचे—

सातवां वलय—इसमें २५ कोठे करे, २५ पुंज रक्खे या २५ फूल बनावे या २५ गुण उपाध्यायके नीचे प्रमाण लिखे—

१ आचारांग, २ सूत्रकृतांग, ३ स्थानांग, ४ समवायांग, ५ व्याख्याप्रज्ञप्ति, ६ ज्ञातृधर्मकथा, ७ उपासकाध्ययन, ८ अन्तकृद्दशांग, ९ अनुत्तरोपपादिकांग, १० प्रश्नव्याकरण, ११ विपाकसूत्र, १२ उत्पादपूर्व, १३ अग्रायणी, १४ वीर्यानुवाद, १५ अस्तिनास्ति प्रवाद, १६ ज्ञानप्रवाद, १७ सत्यप्रवाद, १८ आत्मप्रवाद, १९ कर्मप्रवाद, २० प्रत्याख्यान, २१ विद्यानुवाद, २२ कल्याणवाद, २३ प्राणवाद, २४ क्रियाविशाल, २५ त्रैलोक्यबिंदु। इसके आगे आठवां वलय खींचे—

(८) आठवां वलय—इसमें २८ कोठे करे, २८ पुञ्ज रक्खे या २८ फूल बनावे या २८ गुण साधुके नीचे प्रमाण लिखे—

१ अहिंसा महाव्रत, २ सत्य, ३, अचौर्य, ४ ब्रह्मचर्य, ५ परिग्रह त्याग, ६ ईर्या समिति, ७ भाषा स० ८ एषणा स०, ९ आदाननिक्षेपण स०, १० व्युत्सर्ग स०, ११ स्पर्शेन्द्रिय जय, १२ रसनेन्द्रिय जय, १३ घ्राणेन्द्रिय जय, १४ चक्षुरिंद्रिय जय, १५ श्रोत्रेन्द्रिय जय, १६ सामायिक, १७ वन्दना, १८ स्तवन, १९ प्रतिक्रमण, २० स्वाध्याय, २१ कायोत्सर्ग, २२ भूमिशयन, २३ अस्नान, २४ वस्त्रत्याग, २५ केशलोंच, २६ दन्तधावन, २७ एकभुक्त, २८ स्थित भोजन। इसके आगे नवमा वलय खींचे।

(९) नवमां वलय—इसमें ४८ कोठे करे, ४८ पुञ्ज रक्खे व ४८ फूल बनावे व ४८ ऋद्धि नीचे प्रमाण लिखे। यहां इन ऋषियोंके धारक मुनियोंका संकेत है—

१ केवलज्ञान, २ मनःपर्यय ज्ञान, ३ अवधिज्ञान, ४ कोष्ठबुद्धि, ५ पादानुसारिबुद्धि, ६ बीजबुद्धि, ७ संभिन्नश्रोत्र, ८ दूरस्पर्श, ९ दूरास्वादन, १० दूर घ्राण, ११ दूरावलोकन, १२ दूरश्राण, १३ दश पूर्वित्व, १४ चतुर्दशपूर्वित्व, १४ प्रत्येकबुद्धित्व, १६ वादित्व, १७ जलादि चारणऋद्धि, १८ आकाश गमन, १९ अणिमादि ऋद्धि, २० अन्तर्धानादि ऋद्धि, २१ उग्रतप, २२ दीप्ततप, २३ तप्ततप, २४ महातप २५ घोरतप, २६ घोर पराक्रम, २७ घोर ब्रह्मचर्य, २८ मनोबल, २९ वचन बल, ३० काय बल, ३१ आमर्षौषधि, ३२ क्ष्वेलौषधि, ३३ जल्लौषधि, ३४ मलौषधि, ३५ विडौषधि, ३६ सर्वौषधि, ३७ आस्यविष, ३८ दृष्टयविष, ३९ आशीविष, ४० दृष्टेविष, ४१ क्षीरश्रावि, ४२ मधुश्रावि, ४३ घृतश्रावि, ४४ अमृतश्रावि, ४५ अक्षीणमहानस, ४६, अक्षीणमहालय, (४७) १४१३ गणधर, (४८) २९४८००० तीर्थंकर समास्थित मुनि।

मण्डलके कोनोंमें चार कोठे बनावे—उनमें चार गुलदस्ते बनावे या नीचे प्रमाण क्रमसे लिखे—

(१) ९२५५३२७९४८ अकृत्रिमजिनमूर्तयः। (२) ८५६९७४८१ अकृत्रिम जिनमन्दिराः। (३) स्याद्वादपरम जिनागमः। (४) निश्चयव्यवहाररत्नत्रयस्वरूप जिनधर्मः।

इस तरह इस मण्डलमें कुल २५० कोठे बनावे—मण्डलको बहुत सुन्दर व दर्शनीय बनाना चाहिये। हम चांदी, रांगा आदि धातुओंके चूर्णसे या अन्य किसी चूर्णसे जिसमें प्रतिष्ठा पूर्ण होने तक त्रस जन्तु न पड़ें, मंडल बना सकते हैं, ऊपर सुन्दर चन्दोवा होना चाहिये, तीन छत्र मध्यमें बंधे हों, चमरादिसे सुशोभित हो। मंडलके ऊपर न स्थापना रखना चाहिये न कुछ चढाना चाहिये। वह मात्र स्मृति करानेके लिये है। सर्व दर्शकगण देख करके अपने भावोंका निर्मल करें यह प्रयोजन है। मण्डलको चौकी पर चद्दर बिछाकर भी बना सकते हैं।

१२—मण्डलमें श्री जिनबिंब स्थापना—याग मंडलकी पूजा गर्भकल्याणकके एक दिन पहले करनी चाहिये। इसके एक दिन पहले श्री जिनमन्दिरसे प्रतिष्ठित बिम्ब लाकर मध्य वेदीमें विराजमान करना चाहिये। बिंबको रथमें या पालकीमें यथायोग्य उत्सवके साथ लाना व विराजमान करना उचित है तथा इस वेदीमें आठ मङ्गल द्रव्य जो सुन्दर बने हों स्थापित करना चाहिये। अर्थात् १ छत्र, २ ध्वजा, ३ कलश, ४ चमर, ५ ठाना (सुप्रतिष्ठित), ६ झारी, ७ दर्पण, ८ पंखा।

१३—याग मण्डलकी पूजाके लिये तय्यारी—जिस दिन याग मण्डलकी पूजा हो मण्डपमें स्त्री पुरुषोंको यथायोग्य बैठनेका प्रबन्ध टिकट द्वारा किया जावे। जो प्रबन्धकर्ता हों उनको प्रबन्ध सम्बन्धी खास टिकट दिये जावें। जितने पात्र पहले कहे गये हैं उनमें लौकांतिक देवोंको छोड़कर और सब उपस्थित हों। उनमें प्रतिष्ठाचार्य, इन्द्र तथा मुख्य यजमान जो तीर्थंकरका पिता है ये तीन नीचे प्रकार क्रिया करके शुद्धि करें। अन्य सब पात्र बैठे रहें। उपरान्त प्रतिष्ठाचार्य समय २ पुष्पांजलि क्षेपण करें। सामग्री तैयार करनेवाले, सूचनाकर्ता व प्रबन्धक इस शुद्धि विधानमें शरीक न हों तो हर्ज नहीं है। सब शुद्ध वस्त्र सुन्दर केशरिया रंगे हुये पहनें। आचार्य श्वेत वस्त्र पहने। प्रायः वस्त्रोंमें बिना सिले धोती दुपट्टे पहने जावें जिससे शरीर हलका रहे, पसेवकी रज निकल सके व शुद्ध पवन प्रवेश कर सके।

१४—अङ्गशुद्धि, न्यास व सकलीकरण क्रिया—जब सब पात्र यथायोग्य आसन पर याग मण्डलके सामने बैठ जावें तब अङ्गशुद्धि विधान आरम्भ करे—

(१) नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर शुद्ध जल अपने ऊपर व दूसरों पर छिड़के—अर्थात् अमृत स्नान करे—

ॐ ह्रीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय सं हं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा।

इसके पहले सब कोई तीन वार णमोकार मंत्र पढ लेवें तब अमृत स्नान करें।

(२) फिर नीचे लिखा श्लोक पढकर अपनी २ धोतीको स्पर्श करें—

धौतान्तरीयं विधुकान्तिसूत्रैः, सद् ग्रंथितं धौतनवीन शुद्धं। नग्नत्वलज्जितने भवेच्च यावत् संधार्यते भूषणमूरुभूम्याः ॥

(३) फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़ अपना २ दुपट्टा स्पर्श करे—

संद्रानमप्यद्भुतकाया पिच्छांचलम्लानअनौपाभिनवं सुमुत्तं। सन्धार्यते पीतासितांशुवर्ण मनो गरिष्ठाद् धृ रभूषणांकं॥

(४) फिर अंग शुद्धिके लिये सर्व अंगमें नौ स्थानोंमें चंदन लगावे तब नीचे लिखा मंत्र पढ़े—

नौ स्थान—१ ललाट (मस्था), २ मस्तक (सिर), ३ गला, ४ छाती, ५-६ दोनों बाहु, ७ पेट, ८ नाभि, ९ पीठ।

मंत्र—" ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः मम सर्वांगं शुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा "

(५) फिर मालाको चाहे रत्नकी हो या मोतीकी हो या सुवर्णकी हो या पुष्पकी हो या गूथे हुये सूतकी हो नीचेका श्लोक पढ़कर धारण करे—

जिनांघ्रिभूमिस्फुरितां स्रजं मे, स्वयंवरं यज्ञविधानपत्नी। करोतु यत्नाद् न तत्यहे गोरितोज्ञ मालामुरीकरोमि ॥

(६) फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़ मुकुट धारण करे—

शीर्षण्यशुभ्रन्मुकुटं त्रिलोकी हर्षासराज्यस्य च पट्टबंधं। दधामि पापोर्मिकुल गहंतृ रत्नाढ्य शालामिहहृचि गांगं ॥

(७) फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़कर कण्ठमालाको पहने—

ग्रैवेयकं मौक्तिकदामधाम विराजितं स्वर्ण निबद्धमुक्तं। दधेऽध्वरार्पणविक्षपणेच्छुर्महाघना भोगनिरूपणांकं ॥

(८) फिर गलेमें हार डाले तब यह श्लोक पढ़े—

मुक्तावलीगोस्तनचन्द्रमाला, विभूषणान्युत्तमनाकभाजां। यथार्हसंसर्गगतानि यज्ञलक्ष्मी समालिंगनकृद्दधेऽहं॥

(९) फिर कानोंमें कुंडल पहने तब नीचे लिखा श्लोक बोले—

एकत्र भास्वानपरत्र सोमः सेवां विधातुं जिनपस्य भक्त्या। रूपं परावृत्य च कुण्डलाख्य मिषादवाप्ते इव कुंडले द्वे ॥

(१०) फिर भुजाओंमें भुजबन्धन पहने तब नीचेका श्लोक पढ़े—

भुजासु केयूरमपास्तदुष्टवीर्यस्य सम्यक् जयकृत् ध्वजांकं। दधे निबोनां नवकैश्च रत्नैर्विमंडितं सद्ग्रथितं सुवर्णे ॥

(११) फिर नीचेका श्लोक पढकर यज्ञोपवीत (जनेऊ) पहने या बदले—

यज्ञार्थमेवं सृजताद्दिचक्रेश्वरेण चिह्न विधिभूषणानां । यज्ञोपवीतं विततं हि रत्नत्रयस्य मार्ग विद्धाम्यतोऽहं

(१२) फिर नीचेका श्लोक पढकर कटिमेखला या करधनी पहरे—

अन्यैश्च दीक्षां यजनस्य गाढ कुर्वद्भिरिष्टैः कटिसूत्रमुख्यैः । संभूषणैर्भूषयता शरीरं, जिनेन्द्रपूजा सुखदा घटेत ॥

नोट—इन गहनोंका पहनना इन्द्रके लिये आवश्यक है ।

(१३) फिर नीचेका श्लोक पढकर नियम करे कि जबतक प्रतिष्ठाका कार्य समाप्त न होगा व्यापारादिको चिन्ता छोड़ता हूं व एकचित्त होकर सर्व प्रतिष्ठाका कार्य करूँगा ।

विधेर्विधातुर्यजनोत्सवेऽहं गेहादिमूर्च्छामपनोदयामि । अनन्यचेताः कृतिमादधामि, स्वर्गादि लक्ष्मीमपि क्षापयामि ॥

(१४) फिर अङ्ग रक्षाके लिये पञ्चपरमेष्ठी वाचक अ सि आ उ सा पांच अक्षरोंको क्रमसे मस्तकमें, ललाटमें, नेत्रोंके मध्यमें, कण्ठमें व वक्ष स्थलमें धारण करे । फिर आचार्यभक्ति, सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति तथा चारित्रभक्ति पढ़ी जावे, फिर नौ वार णमोकार मन्त्र मनमें पढकर कायोत्सर्ग करे व अपने दोषोंकी आलोचना करे । फिर—

(१) ॐ ह्रां णमो अरहन्ताणं ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः । ऐसा मन्त्र पढकर दोनों अंगूठे शुद्ध करे अर्थात् पानीमें डबोवे या पानी छिड़के ।

(२) ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः, तर्जनी दोनों अंगुलियोंको शुद्ध करे ।

(३) ॐ ह्रीं ह्रू णमो आइरीयाणं ह्रू मध्यमाभ्यां नमः, मध्यमा बीचकी दोनों अंगुलियोंको शुद्ध करे ।

(४) ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं अनामिकाभ्यां नमः, दोनों अनामिका अंगुलियोंको शुद्ध करे ।

(५) ॐ ह्रः णमो लोये सव्वसाहूणं, ह्रः कनिष्ठिकाभ्यां नमः, दोनों सबसे छोटी अंगुलियोंको शुद्ध करे ।

(६) ॐ ह्रां ह्रीं ह्रू ह्रौं ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः—दोनों हाथोंको दोनों तरफसे शुद्ध करे ।

(७) ॐ ह्रीं णमो अरहन्ताणं ह्रां मम शीर्ष रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर मस्तक पर पुष्प डाले ।

(८) ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं मम वदनं रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर अपने चेहरे (मुख) पर पुष्प क्षेपे ।

(९) ॐ ह्रू णमो आइरीयाणं ह्रू हृदयं मम रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर छाती पर पुष्प डाले ।

(१०) ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं मम नाभि रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर नाभि पर पुष्प क्षेपे ।

(११) ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः मम पादौ रक्ष रक्ष स्वाहा।

(१२) ॐ ह्रां णमो अरहंताणं ह्रां पूर्वदिशात् आगत विघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर पूर्व दिशाकी ओर पुष्प क्षेपे। (१३) ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण ह्रीं दक्षिण दिशात् आगतविघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर दक्षिण दिशामें पुष्प क्षेपे।

(१४) ॐ ह्रूं णमो आइरीयाण ह्रू पश्चिमदिशात् आगतविघ्नान निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर पश्चिम दिशाकी ओर पु प क्षेपे। (१५) ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं उत्तरदिशात् आगतविघ्नान् निवारय निवारय मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर उत्तर दिशाकी ओर पुष्प क्षेपे।

(१६) ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः सर्वदिशात् आगत विघ्नान् निवारय निवारय रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर सर्व दिशाओं पर पुष्प क्षेपे।

(१७) ॐ ह्रां णमो अरहंताणं ह्रां मां रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर अपने भीतर अङ्गपर पुष्प क्षेपे।

(१८) ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं मम वस्त्रं रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर अपने वस्त्रोंपर पुष्प क्षेपे।

(१९) ॐ ह्रू णमो आइरीयाण ह्रूं मम पूजाद्रव्यं रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर पूजाकी सामग्री आदिपर पुष्प क्षेपे।

(२०) ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाण ह्रं ह्रौं मम स्थलं रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर पूजनके स्थानपर पुष्प क्षेपे।

(२१) ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूण ह्रः सर्व जगत् रक्ष रक्ष स्वाहा, इस मन्त्रको पढकर चारों तरफ लोगों पर पुष्प क्षेपे।

(२२) क्षां क्षीं क्षूं क्षः यह मन्त्र पढ सर्व दिशापर पुष्प क्षेपे।(२३) ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः यह मन्त्र पढ सब दिशापर पुष्प क्षेपे।

(२४) ॐ ह्रीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं श्रावय श्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूँ ब्लूँ द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय ठः ठः स्वाहा। इस मन्त्रको पढकर चुल्लूमे पवित्र जल ले मस्तक पर डाले। (२५) फिर ऐसा ध्यान करे कि अपने मस्तकरूपी मेरुपर्वतपर श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र स्थापित हैं अर देवोंके समूह अभिषेक कर रहे हैं, उस जलसे मैं पवित्र भया हूं।

(२६) फिर नीचे लिखे मन्त्रोंको नौवार जपे—ॐ ह्रीं णमो अरहन्ताणं णमो सिद्धाणं स्वाहा। ॐ ह्रीं णमो आइरीयाणं णमो उवज्झायाणं स्वाहा। ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं स्वाहा—पीछे मनमें अपने दोषोंकी आलोचना करे।

(२७) फिर दोनों हाथोंकी अंगुलियोंसे अपने हृदयका स्पर्श और यह मन्त्र पढें—ॐ ह्रां णमो अरहंताणं ह्रां स्वाहा।

(२८) इसी तरह ललाटको स्पर्शे व पढे—ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं स्वाहा।
(२९) इसी तरह सिरके दाहिनी ओर—ॐ ह्रूं णमो आइरीयाणं ह्रूं स्वाहा।
(३०) इसी तरह सिरके पीछे—ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं स्वाहा।
(३१) इसी तरह सिरके बांई ओर—ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः स्वाहा।
(३२) नीचे लिखा मन्त्र ७ बार पढकर पुष्पोंमें फूक देकर सर्व पात्रोंपर व प्रबन्धक आदि पर क्षेपें—ॐ नमोऽर्हते सर्व रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा। (३३) फिर नीचे लिखा मन्त्र ८ पुष्पोंको फूँक देकर सर्व विघ्नोंकी शांतिके लिये सर्व दिशाओं पर क्षेपे—ॐ क्षूं हूं फट् किरिटि घातय घातय परविघ्नान् स्फोटय २ सहस्र खण्डान् कुरु कुरु छिन्द छिन्द परमन्त्रान् भिंद भिंद क्षां क्षः फट् स्वाहा।

द्वितीय अध्याय।

यागमण्डलकी पूजा।

ऊपर कहे अनुसार प्रतिष्ठाके मुख्य पात्र जब अपनी शुद्धि कर चुकें व रक्षाका उपाय कर चुकें तब सबको खड़े होकर व हाथ जोडकर नीचे लिखी स्तुति पढनी चाहिये।

स्तुति

दोहा—वन्दौं श्री अरहंतको, वन्दौं सिद्ध महान्। आचारज उवझाय मुनि, वन्दौं करके ध्यान॥

पद्धरी छन्द।

जय वीतराग सर्वज्ञ देव, तुम ही मङ्गलकर देव देव। तुम ही अघहर्ता पूज्य देव, तुमरी शरणा सुख-हेतु देव॥१॥
तुम अक्षजीत तुम काम जीत, तुम द्वेषजीत तुम लाभ जीत। तुम रागजीत तुम कमजीत, तुम मोहजीत तुम मानजीत॥२॥
तुम जगतध्येय तुम सत्यध्यान, तुम ही गुण निर्मलके निधान। तुम समदर्शी समता अधीश, भवि भक्ति करै निज नाय शीस॥३॥
तुम ही जग पावन हो उदार, तुम ही दाता निज ज्ञान धार। तुम ही भव भ्रमण विनष्टकार, तुम ही भवदधिसे पारकार॥४॥
तुम ही प्रसन्न तुम नहिं निराश, तौ भी भक्तनकी पूर्ण आश। यह महिमा कैसे कही जाय, तुम ध्यानगम्य योगी लहाय॥५॥
वंदे तव पद हम बारबार, यह कार्य होय निर्विघ्न पार। कल्याणक पञ्च करन महान्, उमगे हम तुमरी शरण आन॥६॥

सब कार्य होंय सुख शांतिकार, होवें मङ्गल दिन दिन उदार। राजा पिरजा सब सुखी होय, जिनधर्मतनो उद्योत होय ॥७॥
हम ज्ञानहीन विधि ते अजान, तव भक्ति धरे हिय गुण पिछान। जो भूलें चूकें क्षम्य नाथ, विनती करते हम जोड हाथ ॥८॥

फिर अभिषेकपूर्वक नित्यनियम पूजा व सिद्ध पूजा करे।

अभिषेककी संक्षेपमें विधि—

(१) उच्च आसन पर चौकी या थाली विराजमान करे उस समय यह मन्त्र पढ़ें—ॐ ह्रीं अर्हं क्ष्मं ठः ठः श्री पीठ-स्थापनं करोमि स्वाहा।

(२) फिर उस थाली या चौकीको पवित्र जलसे धोवे तब यह मन्त्र पढ़ें—

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रजलेन श्री पीठप्रक्षालनं करोमि स्वाहा।

(३) फिर उसपर साथिया बनाकर श्री जिन प्रतिमाको स्थापित करे तब यह मन्त्र पढे—ॐ ह्रीं अर्हं श्रमतीर्थ-आदिनाथ (यहां अन्य तीर्थंकरका नाम ले जिस प्रतिमाको विराजमान करे) भगवान् यह पांडुकशिला पीठे तिष्ठ २ स्वाहा।

(४) फिर शुद्ध जल प्रासुक लेकर प्रतिमाका अभिषेक करे तब यह पढ़ें—

श्रीमद्भिः सुरसैर्निसर्गविमलैः पुण्याशयाभ्याहृतैः। शीतश्चारुघटाश्रितैरथितथैः सन्तापविच्छेदकैः ॥
तृष्णोद्रेकहरै रजः प्रशमकैः प्राणोपमैः प्राणिनां। तोयैर्जैनवचोऽमृतातिशयिभिः संस्नापयामो जिनम् ॥
सौरभेन परां शुद्धिं, धारिणा तीर्थधारिणा। स्वभावपदमापन्नं सिद्धं, संस्नापये जिनम् ॥

(६) गन्धोदक दो बड़े मुखके ग्लासमें भरे व दो ग्लास केवल जलसे भरे उसमें लवंग डाल दे। एक प्रवीण पुरुषको एक ग्लास गन्धोदकका व एक ग्लास जलका दे दे जो सर्व दर्शक पुरुषोंके पास ले जावें जो मस्तकादिपर लगावें। इसी तरह एक प्रवीण स्त्री या कन्याको दो ग्लास दे दिये जावें, यह स्त्रियोंको नमस्कार देवे। गन्धोदक गिरे नहीं इससे ग्लासमें देना ठीक है उंगली डबोकर ले लिया जावे फिर उनको दूसरेमें डबोकर शुद्ध कर लिया जावे। (७) अभिषेकके पीछे इन्द्र मुख्यतासे नित्यप्रति होनेवाली संस्कृत, देव—शास्त्र—गुरुपूजा करे जो पाठके अन्तमें दी हुई है। (८) फिर शान्तिके अर्थ तीनों कुण्डोंमें होम किया जावे।

होमकी विधि—तीन कुण्डोंमें चौकोर □ कुण्ड जो तीर्थंकरके निर्वाणकी अग्निका प्रद्योतक है मध्यमें बनावें, उसकी दाहिनी तरफ अर्द्धचन्द्राकार ◡ कुण्ड बनावे जो सामान्य केवलीकी निर्वाणकी अग्निका द्योतक है और बाईं तरफ

त्रिकोण △ कुण्ड बनावे जो गणधरके निर्वाणकी अग्निका बतानेवाला है। एक हाथ गहरे व इतनी ही इनको मुजायें हों, अर्द्धचन्द्रका व्यास आध हाथका हो। ये कुण्ड तीन कटनीदार हों। तीनों कटनीपर मन्त्र और साथिया बनावे—

(१) नीरजसे नमः—यह पढ़कर जहां होम करना है उस भूमिको पवित्र करे। (२) दर्पमथनाय नमः—यह पढ़कर वहां डाभका आसन बिछावे। हरएक कुण्डमें दो इन्द्र नियत हों। एक होमकी सामग्री डाले, दूसरा घी काष्ठकी कड़छीसे डाले। फिर हरएक इन्द्र आसन पर बैठ जावे। (३) शीलगन्धाय नमः—यह पढ़कर प्राशुक जलसे चारों ओर छींटे देवे। (४) विमलाय नमः—यह पढ़कर भूमिमें पुष्प चढ़ावे। (५) अक्षताय नमः—यह पढ़कर वहां अक्षत चढावे। (६) श्रुतधूपाय नमः—यह पढ़कर धूपायनमें धूप खेवे। (७) ज्ञानोद्योताय नमः—यह पढकर दीप चढावे या दीपसे आरती करे। (८) परमसिद्धाय नमः—यह पढकर नैवेद्य चढावे।

(९) कुंडमें साथिया बनावे और नीचे प्रकार लकड़ी इतनी चुने जिसकी लौ कुछ ऊँची कुण्डसे रहे, बहुत अधिक न बढ़े जिससे कोई प्रकारका भय हो। लाल चन्दन, सफेद चन्दन, कपूर, अगर, पीपल व आककी लकड़ी व अन्य शुद्ध लकड़ी जिसमें जन्तु न हों।

(१०) होमकी सामग्री—चन्दनका बुरादा, अगुरुका बुरादा, बादाम व पिस्ताकी गिरी, छुहारा, तोड़ा हुआ खोपड़ा, किशमिश, शक्कर देशी, लौंग, कपूर, छोटी इलायचीके दाने आदि सुगन्ध द्रव्योंकी धूप बनावे। करीब २ सेर हो व इतना ही शुद्ध घी हो।

(११) फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर होमकुण्ड व पात्रोंकी शुद्धि जलसे करे अर्थात् जल छिड़के।

ॐ ह्रीं नमः सर्वज्ञाय सर्वलोकनाथाय धर्मतीर्थंकराय श्री शान्तिनाथाय परमपवित्राय पवित्रजलेन होमकुण्डशुद्धिं पात्रशुद्धिं च करोमि स्वाहा।

(१२) फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ कुंडमें कपूर जलाकर अग्नि रक्खे—कुण्डमें थोड़ी सूखी घास भी रख दें।

जैनेन्द्रवाक्यैरिव सुप्रसन्नैः, सशुष्कदर्भाग्रगताग्निकीलैः। कुण्डस्थिते धेनशुद्धवह्नौ, संधुक्षणं सांप्रतमातनोमि॥

उसहाथि जिणे पणमामि सया, अमलो विरजो वरधम्मरुह।

सुख कामदुहा मम रक्खु सया, पुरविज्जुणुही पुरविज्जुणुही॥ ॐ ॐ ॐ ॐ रं रं रं रं स्वाहा।

(१३) फिर तीनों पवित्र अग्निको अर्घ चढावें। प्रथम तीर्थंकरकी अग्निको जो चौकुंठे कुण्डमें है ऐसा बोलकर अर्घ चढ़ावे—

तीर्थेश्वरस्यान्त्यमहोत्सवे यं, भक्त्यानताशेन्द्रकिरीटजातम्। आनर्चुरिन्द्राः सकलाहमेनं, यजे जलाद्यैरिह गार्हपत्यम् ॥

ॐ ह्रीं गार्हपत्य प्रणिताग्नये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। अर्घ। फिर त्रिकोण कुण्डको अग्निको यह कह अर्घ देवें—

गणाधिपस्यान्त्यमहोत्सवे यं, भक्त्यानताशेन्द्रकिरीटजातम्। आनर्चुरिन्द्राः सकलाहमेनं, यजाम्यहेद्याह्वनीयमग्निम् ॥

ॐ ह्रीं आह्वनीय प्रणिताग्नये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। फिर अर्धचन्द्राकार अग्निको अर्घ चढावे व यह कहे—

श्रीकेवलीशान्त्यमहोत्सवे य, भक्त्या नताशेन्द्रकिरीटजातम्। आनर्चुरिन्द्राः सकलासमेनं, यजामहे दक्षिणाग्निमग्निम् ॥

ॐ ह्रीं दक्षिणावर्त प्रणिताग्नये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। अर्घ।

(१४) फिर सिद्धार्चा सम्बन्धी पीठिका मन्त्रोंसे होम करे।

पीठिकाके मन्त्र—ॐ सत्यजाताय नमः ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय नमः ॥२॥ ॐ परमजाताय नमः ॥३॥ ॐ अनुपमजाताय नमः ॥४॥ ॐ स्वप्रधानाय नमः ॥५॥ ॐ अचलाय नमः ॥६॥ अक्षयाय नमः ॥७॥ ॐ अव्याबाधाय नमः ॥८॥ ॐ अनंतज्ञानाय नमः ॥९॥ ॐ अनंतदर्शनाय नमः ॥१०॥ ॐ अनंतवीर्याय नमः ॥११॥ ॐ अनंतसुखाय नमः ॥१२॥ ॐ नीरजसे नमः ॥१३॥ ॐ निर्मलाय नमः ॥१४॥ ॐ अच्छेद्याय नमः ॥१५॥ ॐ अभेद्याय नमः ॥१६॥ ॐ अजराय नमः ॥१७॥ ॐ अमराय नमः ॥१८॥ ॐ अप्रमेयाय नमः ॥१९॥ ॐ अगर्भवासाय नमः ॥२०॥ ॐ अक्षोभाय नमः ॥२१॥ ॐ अविलीनाय नमः ॥२२॥ ॐ परमघनाय नमः ॥२३॥ ॐ परमकाष्ठायोगरूपाय नमः ॥२४॥ ॐ लोकाग्रवासिने नमो नमः ॥२५॥ ॐ परमसिद्धेभ्यो नमो नमः ॥२६॥ ॐ अर्हत्सिद्धेभ्यो नमो नमः ॥२७॥ ॐ केवलिसिद्धेभ्यो नमो नमः ॥२८॥ ॐ अन्तःकृत्सिद्धेभ्यो नमो नमः ॥२९॥ ॐ परम्परासिद्धेभ्यो नमो नमः ॥३०॥ अनादिपरंपरासिद्धेभ्यो नमो नमः ॥३१॥ ॐ अनाद्यनुपमसिद्धेभ्यो नमो नमः ॥३२॥ ॐ सम्यग्दृष्ट्यासन्नभव्यनिर्वाणपूजार्हाग्नीन्द्राय स्वाहा ॥३३॥ इस तरह ३३ मंत्र पढ आहुति देकर फिर नीचे लिखा आशीर्वादसूचक मंत्र पढ आहुति देवे और पुष्प ले अपने सर्व पास बैठनेवालोंके ऊपर डाले।

सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु। अपमृत्युविनाशनं भवतु। समाधिमरणं भवतु।

अथ जाति मन्त्र—ॐ सत्यजन्मनः शरणं प्रपद्ये ॥१॥ ॐ अर्हज्जन्मनः शरणं प्रपद्ये ॥२॥ ॐ अर्हन्मातुः शरणं प्रपद्ये ॥३॥ ॐ अर्हत्सुतस्य शरणं प्रपद्ये ॥४॥ ॐ अनादिगमनस्य शरणं प्रपद्ये ॥५॥ ॐ अनुपमजन्मनः शरणं प्रपद्ये ॥६॥ ॐ रत्नत्रयस्य शरणं प्रपद्ये ॥७॥ ॐ सम्यग्दृष्टे २ ज्ञानमूर्ते २ सरस्वति २ स्वाहा ॥८॥ इस तरह जातिमन्त्र पढ आठ आहूति देकर आशीर्वादसूचक नीचे लिखा मन्त्र पढ आहूति दे पुष्प क्षेपे।

सेवाफल षट् परमस्थानं भवतु। अपमृत्युविनाशनं भवतु। समाधिमरणं भवतु।

अथ निस्तारक मन्त्र—ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ॥२॥ ॐ षट्कर्मणे स्वाहा ॥३॥ ॐ ग्रामपतये स्वाहा ॥४॥ ॐ अनादिश्रोत्रियाय स्वाहा ॥५॥ ॐ स्नातकाय स्वाहा ॥६॥ ॐ श्रावकाय स्वाहा ॥७॥ देवब्राह्मणाय स्वाहा ॥८॥ सुब्राह्मणाय स्वाहा ॥९॥ ॐ अनुपमाय स्वाहा ॥१०॥ ॐ सम्यग्दृष्टे २ निधिपते २ वैश्रवण वैश्रवण स्वाहा।

इसतरह ११ आहूति दे फिर वही "सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु। अपमृत्युविनाशनं भवतु"। आदि मन्त्र पढ आहूति दे पुष्प क्षेपे।

अथ ऋषि मन्त्र—ॐ सत्यजाताय नमः ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय नमः ॥२॥ ॐ निर्ग्रन्थाय नमः ॥३॥ ॐ वीतरागाय नमः ॥४॥ ॐ महाव्रताय नमः ॥५॥ ॐ त्रिगुप्ताय नमः ॥६॥ ॐ महायोगाय नमः ॥७॥ ॐ विविधयोगाय नमः ॥८॥ ॐ विविधर्द्धये नमः ॥९॥ ॐ अङ्गधराय नमः ॥१०॥ ॐ पूर्वधराय नमः ॥११॥ ॐ गणधराय नमः ॥१२॥ ॐ परमर्षिभ्यो नमो नमः ॥१३॥ ॐ अनुपमजाताय नमो नमः ॥१४॥ ॐ सम्यग्दृष्टे २ भूपते भूपते नगरपते नगरपते कालश्रमण कालश्रमण स्वाहा ॥१५॥

ऐसी १५ आहुति देकर वही निम्न लिखित आशीर्वाद सूचक मन्त्र पढ आहुति दे पुष्प क्षेपे।

"सेवाफल षट्परमस्थानं भवतु। अपमृत्युविनाशनं भवतु। समाधिमरणं भवतु॥"

अथ सुरेन्द्र मन्त्र—ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ॥२॥ ॐ दिव्यजाताय स्वाहा ॥३॥ ॐ दिव्यार्चिजाताय स्वाहा ॥४॥ ॐ नेमिनाथाय स्वाहा ॥५॥ ॐ सौधर्माय स्वाहा ॥६॥ ॐ कल्पाधिपतये स्वाहा ॥७॥ ॐ अनुचराय स्वाहा ॥८॥ ॐ परंपरेन्द्राय स्वाहा ॥९॥ ॐ अहमिन्द्राय स्वाहा ॥१०॥ ॐ परमार्हताय स्वाहा ॥११॥ ॐ अनुपमाय स्वाहा ॥१२॥ ॐ सम्यग्दृष्टे २ कल्पपते २ दिव्यमूर्ते २ वज्रनामन् २ स्वाहा ॥१३॥ इस तरह १३ आहूति दे वही पहिले लिखित आशीर्वादसूचक मंत्र पढ आहूति दे पुष्प क्षेपे।

अथ परमराजादि मन्त्र—ॐ सत्यजाताय स्वाहा ॥१॥ ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ॥२॥ ॐ अनुपमेन्द्राय स्वाहा ॥३॥ ॐ विजयार्च्यजाताय स्वाहा ॥४॥ ॐ नेमिनाथाय स्वाहा ॥५॥ ॐ परमजाताय स्वाहा ॥६॥ परमार्हताय स्वाहा ॥७॥ ॐ अनुपमाय स्वाहा ॥८॥ ॐ सम्यग्दृष्टे २ उग्रतेजः २ दिशांजनः २ मंत्र पढ़ आहुति दे पुष्प क्षेपे ॥९।

इस तरह ९ आहुति दे यही आशीर्वादसूचक मंत्र पढ आहुति दे पुष्प क्षेपे।

(१५) फिर नीचे मन्त्रसे १०८ आहुति क्षेपे-ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणशेषदोषाय दिव्यतेजोमूर्तये नमः श्री शांतिनाथाय शांतिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्युविनाशनाय सर्वपरकृतक्षुद्रोपद्रवविनाशनाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्वशांति कुरु कुरु स्वाहा। (१६) फिर नीचेकी स्तुति सर्व इन्द्र मिलकर व खड़े होकर पढ़ें—

तुभ्यं नमो दशगुणोर्जितदिव्यगात्र। कोटिप्रभाकरनिशाकरजैत्रतेजः॥
तुभ्य नमोऽतिचिरदुर्जयघातिजात। घातोपजात दशभारगुणाभिराम ॥ १ ॥
तुभ्य नमः सुरनिकायकृतैर्विहारे। दिव्यैश्चतुर्दशविधातिशयरुपेत ॥
तुभ्यं नमस्त्रिभुवनाधिपतित्व चिन्ह। श्री प्रातिहार्याष्टकलक्षितार्हन् ॥ २ ॥
तुभ्यं नमः परम केवलबोधवार्द्धे। तुभ्यं नमः समसमस्तपदावलोके ॥
तुभ्यं नमो निरुपमानमनन्तवीर्य। तुभ्यं नमो निजनिरंतरनित्यसौख्य ॥ ३ ॥
तुभ्य नमः सकलमंगलवस्तुमुख्य। तुभ्यं नमः शिवसुखप्रदपापहारिन् ॥
तुभ्यं नमस्त्रिजगतुत्तमलोकपूज्य। तुभ्यं नमः शरणभूत्रय रक्ष रक्ष ॥ ४ ॥
तुभ्य नमोस्तु नवकेवलपूर्वलब्धे। तुभ्यं नमोस्तु परमेश्वर्योपलब्धे ॥
तुभ्य नमोस्तु मुनिकुञ्जरयूथनाथ। तुभ्यं नमोस्तु भुवनत्रितयैकनाथ ॥ ५ ॥

श्री जिनेन्द्रके सामने बड़े भावसे स्तुति पढ़ें। आचार्य इसका भाव सर्व मण्डलीको समझावे। फिर सर्व मण्डली जो अब तक बैठी थी वह भी तथा सर्व प्रतिष्ठाके पात्र मस्तक भूमि पर लगाके दंडवत करें।

(१७) फिर नीचे लिखा मंत्र पढ इन्द्रादि होमभस्मको ललाटमें, दो भुजाओंमें, कण्ठमें व हृदयमें ऐसे पांच जगह लगावे।

रत्नत्रयार्चनमयोत्तमहोमभूतिर्युष्माकमावहतु वासवदिव्यभूतिम् ॥
षट्खण्डभूमिविजयप्रभवां विभूतिं। त्रैलोक्यराज्यविषयां परमां विभूतिम् ॥

तथा दो बड़े प्यालोंमें भस्म रखकर एक प्याला पुरुषको व एक प्याला स्त्रीको, सर्व पुरुष व स्त्रियोंको भस्म पांचों अङ्गोंमें लगानेको देवें।

(१८) मण्डलकी पूजा—अब इंद्र तथा मुख्य यजमान (पिता) वे दो मिलकर सामग्री चढावें, पूजन पढानेवाले आचार्यको सहायता देवें, पूजा शुद्ध स्वरसे पढी जावे, अन्य सब सुनें पहले सब पात्र खड़े होकर नीचे लिखे प्रमाण पढें—

ॐ जय जय जय, नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु, नन्द नन्द नन्द, पुनीहि पुनीहि पुनीहि, ॐ णमो अरहन्ताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरीयाणं, णमो उवज्झायाणं, णमोलोए सव्वसाहूणं।

स्थापना

प्रत्यर्थिव्रजनिर्जयाज्जिजगुणग्रामावनन्तात्मदृष्टिज्ञानचरित्र... सुखचित्संज्ञास्वभावाः परं
आगत्यात्र निवेशितांकिनपदैः अक्षौषडा द्विष्ठमो, स...रोपणसत्कृतैश्च वषडा गृह्णाध्वमर्चाविधिम् ॥४४१
भाषा:—गीता छन्द—कर्मनाशको हनन कर निजगुणप्रकाशन भानु हैं, अंत अर क्रम रहित दर्शन ज्ञानवीर्य निधान हैं।
सुख स्वभावी द्रव्य चित सत् शुद्ध परिणतिमें रमें, आइये सब विघ्न चूरण पूजते सब अघ वमें॥

ह्रीं अत्र जिनप्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिनमुनय अत्रावतरत अवतरत संवौषट्, ॐ ह्रीं अत्र जिनप्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिनमुनय अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः, ॐ ह्रीं अत्र जिनप्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिनमुनय अत्र मम संनिहिता भव भव वषट्। (यहां थापना मण्डलके बीचमें न रखके पूजाकी टेबुल ही पर रखके पुष्प क्षेपण करे।)

अष्टक।

प्रांशुस्वर्णमणिप्रभाततिभृनाभृंगारनालोच्छलद्, गंगासिंधुसरिन्मुखोपचितसत्पाथो भरेण त्रिधा।
जन्धारातिनिभञ्जनोबिमिलितेनोद्धूतगन्धालिना, चाये यागनिधिश्वरानघहृते निश्रेयसः प्राप्तये ॥४४३॥
भाषा—छन्द—चाल—गंगासिंधू वर पानी, सुवरणझारी भरलानी। गुरु पंचपरमसुखदाई, हम पूज ध्यान लगाई॥
ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वराजिनमुनिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।
घुसृणमलयजातैश्चन्दनैः शीतगन्धैर्भवजलनिधिमध्ये दुःखदो वाडवाग्निः।
तदुपशमनिमित्तं षट्कक्षैर्निमज्जद्–भ्रमरयुवभिरीडत् सान्द्रसान्द्रप्रवाहैः ॥४४४॥

भाषा-शुद्ध गन्ध लाय मनहारी, भवताप शमन कर्तारी। गुरु पंच परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥४४४॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वर जिनमुनिभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशांकस्पर्द्धद्भिः कमलजननैरक्षतपदाधिरूढैः, आमण्यं शुचिसरलयाग्रैर्गुणधरैः।

हसद्भिः साम्राज्याधिपतिचमनार्हैः सुरभिभि-र्जिनार्चोर्हि पांची विपुलतरपुञ्जैः परियजे ॥४४५॥

भाषा-शशिसम शुचि अक्षत लाए, अक्षयगुणहित हुलसाए। गुरु पञ्च परमसुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥४४५॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो अक्षयगुणप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

दुरन्तमोहानलदीप्यदन्तु कामेन नष्टीकृतमाशुविश्वं, तद्बाणराजीशमनाय पुष्पयजामि कल्पद्रुमसञ्जतैर्वा ॥४४६

भा.-शुभ कल्पद्रुमन सुमना ले, जग घाकर काम नशाले, गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥४४६

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पीयूषपिंडनिवहैर्घृतखाद्यकरान्नयोगोद्भवैनयनचित्तविलासदक्षैः।

चामीकरादिशुचिभाजनसंस्थितैर्वा, क्षुत्पूजयाम्यशनबाधनबाधनाय। ४४७॥

भाषा-पकवान मनोहर लाए, जासे क्षुद्ररोग नशाए। गुरु पञ्च परमसुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥४४७॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो क्षुधारोगनिवारणाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अमितमोहतमोविनिवृत्तये घटितरत्नमणिप्रभवात्मभिः। अथमहं खलु दीपकनामकैर्जिनपदाग्रभुजं परिदीपये ॥

भाषा-मणिरत्नमयी शुभ दीपा, तममोहहरण उद्दीपा। गुरु पञ्चपरम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥४४८॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपोद्घ्राणैर्यजनविधिषु प्रीणिताशेषदिक्कैरुद्यद्धूम्रान्धगुरुमलयापीडकान् सन्दहद्भिः ॥

अर्चे कर्मक्षपणकरणे कारणैरात्मघातकैर्यक्षाधीशानिव बहुविधैर्धूपदानप्रशस्तैः। ४४९॥

भा.-शुभ गंधित धूप चढाऊँ कर्मोंके वंश जलाऊँ। गुरु पञ्च परम सुखदाई हम पूजें ध्यान लगाई ॥४४९॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

निःश्रेयसपदलब्ध्यै कृतावतारैः प्रमाणपटुभिरिव। स्याद्वादभंगनिकरैर्यजामि सर्वज्ञमनिशममरफलैः ॥४५०॥

भा.-सुन्दर दिवि भव फल लाए, शिवहेतु सुचरण चढाये गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पात्रे सौवर्णे कुम्भमानन्दजयषकृ पूजार्हतं विस्फुरितानां हृदयेऽत्र।
तोयाद्यष्टद्रव्यसमेतैर्भूनमर्घं शास्तृणामग्रे विनयेन प्रणिदध्मः ॥४५१॥

भा.–सुवरणके पात्र धराये, शुचि आठों द्रव्य मिलाए, गुरु पंचपरम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई ॥४५१॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठोत्सवे सर्वयज्ञेभ्यो जिनमुनिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(अब २५० कोठोंमें स्थापित पुष्पोंको अलग अलग अर्घ चढाना, थालीमें ही;—

अनन्तकालमनन्तभवभ्रमणभीतितो निर्वाय नन्दयन् स्वय शिवोत्तमायसद्मनि।
जिनेशविश्वदर्शिविश्वनाथमुख्यनामाभिः स्तुतं जिनं महामि नीरचन्दनैः फलैरहं ॥४५२॥

भाषा अडिल्ल–काल अनन्ता भ्रमण करत जग जीव हैं। तिनको भवते काढ करत शुचि जीव हैं॥
ऐसे अर्हत तीर्थनाथ पद ध्यायके। पूजूं अर्घ बनाय सुमन हरषायके ॥ ४५२ ॥

ॐ ह्रीं अनन्त भवार्णवभयनिवारकानन्तगुणस्तुताय अर्हते अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मकाष्ठहुतभुक्स्वशक्तितः सप्रकाश्यमहनीयभानुभिः। लोकनस्वतमचले निजात्मनि संस्थितं शिवमहीपतिं यजे ॥४५३॥

भाषा–हरिगीताछन्द–कर्म-काष्ठ महान जाले ध्यान–अग्नि जलायके। गुण अष्ट लह व्यवहारनय निश्चय अनंत लहायके।
निज आतममें थिर रूप रहके, सुधा स्वाद लखायके।
सो सिद्ध हैं कृतकृत्य चिन्मय, भजूं मन उमगायके। ४५३॥

ॐ ह्रीं अष्टकर्मविनाशक निजात्मतत्त्वविभासक सिद्धपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सार्थवाहमनवद्यविद्यया शिक्षणान्मुनिमहात्मनां वरं। मोक्षमार्गमलघुप्रकाशकं संयजे गुरुपरंपरमेश्वरम् ॥४५४

भाषा–त्रिभंगीछन्द–मुनिगणको पालत आलस टालत आप संभालत परम यती।
जिनवाणि सुहानी शिवसुखदानी भविजन मानी धर सुमती॥
दिक्षादे दाता भवसे त्राता समसुखमाता ज्ञानपती।
शुभ पञ्चाचारा पालत प्यारा हैं आचारज कर्महती॥

ॐ ह्रीं अनवद्यविद्याविद्योतनाय आचार्यपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३)

द्वादशांगपरिपूर्णसच्छ्रुतं यः परानुपदिशेत पाठतः। बोधयत्यभिहितार्थसिद्धये तानुपास्य यजयामि पाठकान् ४५५

भाषा त्रोटक छन्द–जय पाठक ज्ञान कृपान नमो, भवि जीवन दुरा अज्ञान नमो ॥
निज आतम महानिधि धारक हैं। सशय घन ध्वान्त निवारक हैं ॥४५५॥

ॐ ह्रीं द्वादशांगपरिपूर्णश्रुतपाठनोद्यत बुद्धिविभवोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

उग्रमध्यतपसासिसंस्कृतिं ध्यानमानविनिवेशितात्मकं। साधकं शिवरमासुखामृते साधुमीड्यपदलब्धये-
ऽर्चये ॥४५६॥

भाषा–द्रुतविलम्बित छन्द–सु अग तप द्वादश कर्तार हैं। ध्यान सार महान प्रचार हैं ॥
मुकति साथ अचल गति साधते। सुख सु आतम जन्य समहारते ॥ ४५६ ॥

ॐ ह्रीं घोरतपोऽतिमंगलध्यानसाधनमनिरत साधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्हन्नेष त्रिभुवनजनानन्दनानमण्डलं त्वां, विघ्नध्वंसं निजमतिकृताद्दुष्टमघोघनोद्यात् ॥
संकुर्वन्नत्रकृतिरपि स्वच्छमानन्दसुयाचिन्त्येव। स्मृत्वा जलचरुफलैरर्चयामि त्रिवारं ॥४५७॥

भाषा मालिनीछन्द–अरि हनन सु अरिहन्त पूज्य अर्हन् बनाये। सब पाप गलनहेतु मंगल ध्यान लाए ॥
जग सुखकारण मंगलार्क जगाए। ध्यानी छवि तेरी देखते दुख नशाए ॥४५७॥

ॐ ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिमङ्गलाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (६)

स्मारं स्मारं गुणगणमणिस्फारसामर्थ्यमुच्चैर्यत्प्राप्त्यर्थं प्रयतति जनो मोक्षतत्त्वेऽनवद्ये ॥
प्रत्यूहानां भवभयगतानां प्रघातप्रकल्प्त्यै सिद्धानेष प्रतिप्रतिपलादर्चये संविचार्य ॥४५८॥

भाषा–चौपाई–जय जय सिद्ध परमसुखकारी। तुम गुण सुमरत कर्म निवारी।
विघ्नसमूह सहज हरतारे। मंगलमय मंगल करतारे ॥४५८॥

ॐ ह्रीं सिद्ध मङ्गलेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (७)

रागद्वेषोरगपरिशमे मन्त्ररूपस्वभावा, सिद्धे यात्रौ समकुरुहदानंदमांगल्यरूपाः।
येषां नामस्मरणमपि सन्मंगलं मुक्तिदायीत्यर्चे भक्त्या वसुविधिविघ्नप्रोणनः प्राणिपूज्यं ॥४५९॥

भाषा- शार्दूलविक्रीडित–रागद्वेष महानसर्प शमने शक्य सन्त्रधारी यती। शत्रू मित्र समान भाव करके भवतापहारी यती
मंगल सार महानकार अघहर सत्वानुकम्पी यती। संयम पूर्णप्रकार साध तपको संसारहारी यती ॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (८)

मूर्छा मूर्छा गुरुलघुभिदा द्वैधवर्त्मप्रदिष्टो, जैनो धर्मः सुरशिवगृहद्वारदर्शी नितांतं ।
सेव्यो विघ्नप्रहरणविधावुत्तमार्थैः प्रशस्तः, सपूजेऽहं यजनमननोद्दामसिद्धयर्थमद्य ॥४६०॥

भाषा–छप्परछन्द–जिनधर्म है सुखकार जगमें घरत भव भयघंत। स्वर्ग मोक्ष सुद्वार अनुपम घरे सो जयवंत ॥
सम्यक्त ज्ञान चरित्र लक्षण भजत जगमें संत। सर्वज्ञ रागविहीन वक्ता है प्रमाण महन्त ॥४६०

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्त धर्ममङ्गलाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (९)

येषां पादस्मृतिसुखसुधायोगपरतार्थनाम प्रापुः पुण्यं यदवनतिना जन्मसार्थं लभन्ते ।
लोका धात्र्यां वनगिरिभुवश्चोत्तमत्वं जिनेन्द्रा–नर्चे यज्ञप्रभवविधिषु व्यक्तये मुक्तिलक्ष्म्याः ॥४६१॥

भाषा–झूलनाछन्द–चर्ण संस्पर्शते वन गिरि शुद्ध हो नाम सत्तीर्थको प्राप्त करते भए ।
दर्श जिनका करे पूजते दुःख हरे जन्म निज सार्थ भविजीव मानत भए ॥
देव तुम लेखके देव सब छोडके देव तुम उत्तमा सन्त ठानत भए ।
पूजते आपको टालते तापको मोक्षलक्ष्मी निकट आप जानत भए ॥

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१०

दृष्टिज्ञानप्रतिभटतया कर्मभीमांतरायाऽन्यान्, श्वभ्रे संपातयति त्रिविधा वेदनाः संकरोति ।
तेषां मूलं निखिलपरमज्ञानखड्गेन छत्वा, निःकर्मत्वं समधिगतवानर्च्यते सिद्धनाथः ॥४६२॥

भाषा भुजंगप्रयातछंद–दरश ज्ञान वैरी करम तीव्र आए। नरक पशुगता मांहि प्राणी पठाए।
तिन्हें ज्ञान असिते हनन नाथ कीना। परम सिद्ध उत्तम भजूं रागहीना ॥

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (११)

सूर्याचन्द्रौ मरुदधिपतिर्भूमिनाथोऽसुरेन्द्रो, यस्यांह्यब्जे प्रणतशिरसा लोलुठाति त्रिशुद्धया ।
सोऽयं लोके प्रवरगणनापूजितः किं न वा स्याद् यस्माद् वै मुनिपरिवृढं स्यात्नुवायप्रकत्वा ॥४६३॥

भाषा छन्दचौपैया–सूरज चन्द्र देवपति नरपति पद सरोज नित वंदे। लोट २ मस्तक धर पगमें पातक सब निकंदे ॥
लोकमांहि उत्तम यतिपनमें जैनसाधु सुख कंदे। पूजन सार आतमगुणपावन होवत आप स्वच्छंदे ॥

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१२)

यत्र प्राणिप्रवरकरुणा यत्र मिथ्यात्वनाशो। यत्रोपांते शिवपदसमान्वेषणां कामनष्टिः।
यत्र प्रोक्ता दुराविरतिः सोयमर्घ्यः कथं न। यस्माद् धर्मो निखिलहितकृत् पूज्यतेऽसौमयाऽपि ॥४६३॥

भाषा छंदस्रग्गणी—जो दया धर्म विस्तारता विश्वमें। नाश मिथ्यात्व अज्ञान कर विश्वमें ॥
काम अघ दूर कर, मोक्ष कर विश्वमें। सत्य जिनधर्म यह धार ले विश्वमें ॥

(१३)

ॐ ह्रीं केवलीप्रज्ञप्त धर्मलोकोत्तमाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवाजीवद्विविधशरणान्वेषणे स्थैयभक्त ज्ञात्वा त्यक्त्वाऽन्यतरशरणं नश्वर मद्विधानां।
इन्द्रादिनामितिपरिचयाद्यात्मरत्नोपलब्धि-मिष्टैः प्राप्तुं निचितमनसा पूज्यतेऽर्हन् शरण्यः ॥४६४॥

भाषा—छन्द मरहठा—
भव भ्रमण कराया शरण नपाया जीव अजीवहिं खोज। इन्द्रादिक देवा जाको पूजें जगगुण गावें रोज ॥
ऐसे अर्हतकी शरण आये, रत्नत्रय प्रकटाय। जासे ही जन्ममरण भय नाशे, नित्यानन्दा थाय ॥४६५॥

(१४)

ॐ ह्रीं अर्हत् शरणेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

यावद्देहे स्थितिरूपचरः कर्मणामास्त्रवेण, तावत्सौख्यं क्वुन उपलभेतस्तत्त्रोटनेच्छुः।
एतत्कृत्यं न भवति विना सिद्धभक्ति यतो मे, पूर्णार्घौघप्रयजनविधावाश्रितोऽहं शरण्यम् ।४६६॥

भाषा-छंद नाराच—सुखी न जीव हो कभी जहां कि देह साथ है। सदा हि कर्म आस्रवै न शांतता लहात हैं ॥
जो सिद्धको लखाय भक्ति एक मन करात है वही सुसिद्ध आप हो स्वभाव आत्मघात है ॥

(१५)

ॐ ह्रीं सिद्धशरणेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

रागद्वेषव्यपगमनतो निःस्पृहा धीरधीराः, संसाराब्धौ विषमगहने मज्जनां निर्निमित्तं।
दत्वाधर्मोद्धरणतरणि पश्यन्तो मुनीशास्तानर्घेण स्थिरगुणधिया प्रार्चयामि त्रिशुध्या ॥४६७।

भाषा—छन्द त्रोटक—नहि राग न द्वेष न काम धरें, भवदधि नौका भवि पार करें।
स्वारथ बिन सब हितकारक हैं, ते साधु जजूं सुखकारक हैं ॥

(१६)

ॐ ह्रीं साधुशरणेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

मित्रं सम्यक् परभवगधावक्रमे सार्थदायि, नान्यो धर्माद्दुरितदहन प्लोषणेऽनुप्रयाहः।
जानन्तं मां समदृषिधियां सन्निधानाच्छरण्य, त्रायस्व त्वं त्वयि धृतगतिं पूजनार्घेण युक्तं ॥४६८॥

भाषा–छन्द चामरो–धर्म ही सु मित्र सार साथ नाहि त्यागता, पापरूप अग्निको सुमेघ सम बुझावता।
धर्म सत्य शर्ण यही जीवको सम्हारता, भक्ति धर्म जो करैं अनन्त ज्ञान पावता ॥
ॐ ह्रीं धर्मशरणेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मर्थो ते तान् तत्त्वचन्द्रप्रमाणान्, जापध्यानस्तोत्रमन्त्रै कदृच्य।
हृव्यक्षेत्रस्फूर्तिमज्जातकाक्षां, नत्वार्घेण प्राशुनं सस्मरामि ॥ ४६९ ॥

भाषा–दोहा–पञ्च परम गुरु सार हैं, मङ्गल उत्तम जान। शरणा राखनको बली, पूजूं कर उर ध्यान ॥४६९॥
ॐ ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिप्रभृतिधर्मशरणांतप्रथमवलयस्थितसप्तदशजिनाधीशमन्त्रदेवताभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

इति पूर्णार्घ—(यहां पूर्णार्घ देकर एक छोटासा नारियल सुन्दरताके साथ पहले वलयमें कहीं पर रख दे जिससे विदित हो कि पहले वलयकी पूजा हो चुकी, यदि वहां तक हाथ न पहुंचे तो मण्डलके किनारेकी तरफ एक नारियल रख दे)। अब दूसरे वलयमें २४ भूतकालके तीर्थङ्करोंकी पूजा करनी

निर्वाणदेवं श्रितभव्यलोकं निर्वाणदातारमनन्तसौख्यं। संपूजयेऽहं सखमद्धिहेतो रघोश्वरं प्राथमिकं जिनेन्द्रं ॥
भाषा–पद्धरी छन्द–भविलोक शरण निर्वाणदेव, शिवसुखदाता सब देव देव।
पूजूं शिवकारण मन लगाय, जासे भवसागर पार जाय ॥ ४७० ॥
ॐ ह्रीं निर्वाण जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीसागर वीतसमस्तरागद्वेषं कृताशेषजनप्रसादं। समर्चये नीरफलप्रदीपैरुद्दीपिताशेषपदार्थमालं ॥४७१॥
भाषा–तज रागद्वेष ममता निवार, पूजक जन सुख अनुपम लहाय।
गुणसागर सागर जिन लखाय, पूजूं मन वच अर काय लाय ॥४७१॥
ॐ ह्रीं सागरजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीमन्महासाधुजिनं प्रमाणनयप्रमाणाकुलजीवतत्त्व। स्याद्वादभङ्गप्रणिधानहेतुं समर्चये यज्ञविधानसिद्ध्यै ॥
भाषा–नय अर प्रमाणसे तत्त्व पाय, निज जीवतत्त्व निश्चै कराय। साधो तप केवलज्ञान दाय, ते साधु महा वन्दौं सुभाय ॥४७२॥
ॐ ह्रीं महासाधु जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०)

यस्यातिसाज्ज्ञानविशालदीपेप्रभासमानं जगदल्पसारं। त्रिलोकयते सर्पवत् कराग्रे समर्चयेऽहं विमलप्रभाख्यं ॥
भाषा–दीपक विशाल निजज्ञान पाय, त्रैलोक लखे बिनश्रम उपाय। विमलप्रभ निर्मलता कराय, जो पूजे जिनको अर्घ लाय ॥
ॐ ह्रीं विमलप्रभाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१)

समाधिमानां मनसो विशुद्धय, कृतावनाऽं मुनिशीलकीर्तिम् ।
प्रणम्यय शेऽहमुदंचयामि शुद्धाभदेवं चरुभिः प्रदीपैः ॥ ४७४ ॥

भाषा—भवि शरण गेह मन शुद्धिकार, गावें थुति मुनिगण यश प्रचार ।
शुद्धाभदेव पूजू विचार, पाऊँ आतम गुण मोक्ष द्वार ॥ ४७४ ॥
ॐ ह्रीं शुद्धाभदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२२)

लक्ष्मीद्वंयघाख्य गतांतरङ्गमेऽश्मपदाङ्गे विलुलोठ यस्य । यस्मात्सदा श्रीधरकीर्तिमापत्तन्नर्येधाभिलभव्यसार्थम् ॥

भाषा—अंतर बाहर लक्ष्मी अधीश, इन्द्रादिक सेवत नाय शीस । श्रीधरचरण श्रीशिवकराय, आश्रयकर्ता भवदधि तराय ॥
ॐ ह्रीं श्रीधराय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३)

श्रिय ददातीह सुभक्तिभाजां, वृन्दाय यस्मादिह नाम जातं ।
श्रीदत्तदेवं भवभीति मुक्त्यै, यजामि नित्यादृभुताधामलक्ष्म्यै ॥४७६॥

भाषा—जो भक्ति करें मन वचन काय, दाता शिवलक्ष्मीके जिनाय ।
श्रीदत्त चरण पूजू महान् भवभय छूटे लहूँ अमल ज्ञान ॥
ॐ ह्रीं श्रीदत्त जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४)

सिद्धाभभांगस्य धिमर्षिणी तनूमध्येजन्तुः स्वपकदर्शनेन ।
स्वयंविशुद्धिर्मनसो यतस्त्वां सिद्धाभ ! यजेऽर्चयितु समीहे ॥ ४७७ ॥

भाषा—भामण्डल छवि बरणी न जाय, जहं जीव लखें भव सप्त आय ।
मन शुद्ध करें सम्यक्त पाय, सिद्धाभ भजे भवभय नशाय ॥ ४७७ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धाभ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२५)

प्रभामतिः भक्तिरनेकधा हि, सदूध्यानलक्ष्म्या यत उत्तमार्थैः ।
सङ्गायते त्वं ह्यमलां बिभर्षि, यतोऽर्चये त्वाममलप्रभाख्यं ॥ ४७८ ॥

भाषा—अमलप्रभ निर्मल ज्ञान धरे, सेवामें इन्द्र अनेक खड़े । नित मंगलमंगल गान करें, निज आतमसार विलास करें ॥
ॐ ह्रीं अमलप्रभ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२६)

अनेकसंसारगतं भ्रमेभ्य उद्धारलंति बुधास्त्वादि । यतो मम भ्रांतिमपाकुरु स्वमुद्धारदेव प्रयजे भवंतं ॥४७९॥

भा.—उद्धार जिनं उद्धार करें, भव कारण भ्रांति विनाश करें, हम डूब रहे भवसागरमें, उद्धार करो निज

ॐ ह्रीं उद्धार जिनाय अघ निर्वपामीति स्वाहा। (२७)

दुष्टाष्टकर्मेंधनदाहकर्ता यतोऽग्निनामाभ्युदिते यथार्थम्। ततो ममामाततृणव्रजेऽपि तिष्ठाचये त्वां किमु पौनरुक्ते। आस्मरमें ॥४७९॥

भाषा—अग्निदेव जिनं हो अग्निमई, अठ कर्मन ईंधन दाह दई।

हम असात तृणं कर दग्ध प्रभो, निज सम करले जिनराज प्रभो ॥ ४८० ॥

ॐ ह्रीं अग्निदेव जिनाय अघ निर्वपामीति स्वाहा। (२९)

प्राणेन्द्रियद्वैधसुसंयमस्य दातारमुच्चैः कथयामि सार्थं। महत्तमर्घं जिनसंगृहाण सुसंयमं स्वीयगुणं प्रदेहि ॥४८१॥

भाषा—संयम जिन द्वैविध संयमको, प्राणीरक्षण इन्द्रिय दमको। दीजे निश्चय निज संयमको, हरिये हम सर्व असंयमको ॥

ॐ ह्रीं संयम जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२९)

स्वयं शिवः शाश्वतसौख्यप्राप्ति, स्वायं प्रभुः स्वात्मगुणप्रसन्नः।

तस्मात्तदर्थप्रतिपन्नकामस्त्वामर्चये प्राञ्जलिना नतोऽस्मि ॥ ४८२ ॥

भाषा—शिव जिन शिव शाश्वत सौख्यकरी, निज आतम विभूति स्वहस्त करी।

हम शिव वाञ्छक कर जोड़ नमें, शिव लक्ष्मी दो नहिं काहु नमें ॥ ४८२ ॥

ॐ ह्रीं शिव जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३०)

सत्कुन्दमल्लाजलजादिपुष्पैरभ्यर्च्यमानः श्रियमावधाति।

नाम्नाऽप्यसौ तादृश एव यस्मात्, पुष्पांजलिं त्वां प्रतिपूजयामि ॥ ४८३ ॥

भाषा—पुष्पांजलि पुष्प नितें जजिये, मम काम व्यथा क्षणमें हरिये।

निज शील स्वभाव थिरम रहिये, जिन आतम जनित सुखको लहिये ॥ ४८३ ॥

ॐ ह्रीं पुष्पांजलि जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३१)

उत्साहयन् ज्ञानघनेश्वराणां, शाक्याम्बुधिं संयमचन्द्रकीर्तेः।

उत्साहनाथो यजनोत्सवेऽस्मिन्, संपूजितो मे स्वगुणं ददातु ॥४८४॥

भाषा—उत्साह जिनं उत्साह करें, निज संयम चन्द्र प्रकाश करें।

समभाव समुद्र बढावत हैं, हम पूजत तव गुण पावत हैं ॥ ४८४ ॥

ॐ ह्रीं उत्साह जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३२)

नमोऽस्तु नित्यं परमेश्वराय, कृपा यदीयाक्षणसंनिधानात् ।
करोति चिन्तामणिरीप्सितार्थमिवांचये तं परमेश्वराख्यं ॥४८५॥
भाषा—चिन्तामणि सम चिन्ता हरिये, निज सम करिये भव तम हरिये ।
परमेश्वर जिन ऐश्वर्य धरें, जो पूजे ताके विघ्न हरें ॥ ४८५ ॥
ॐ ह्रीं परमेश्वरजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३३)

यज्ज्ञानरत्नाकरमध्यवर्ती, जगत्त्रयं बिन्दुसमं विभाति ।
तं ज्ञानसाम्राज्यपतिं जिनेन्द्रं, ज्ञानेश्वरं संप्रति पूजयामि ॥४८६॥
भाषा—ज्ञानेश्वर ज्ञान समुद्र पाय, त्रैलोक बिंदुसम जहं दिखाय ।
निज आतमज्ञान प्रकाशकार, वन्दूँ पूजूं मैं बार बार ॥ ४८६ ॥
ॐ ह्रीं ज्ञानेश्वर जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३४)

तपोबृहद्भानुसमूहतापकृतात्मनमलयन्निर्मलानाम् । अस्मादृशां तद्गुणमाददान संपूजयामो विमलेश्वरं तं ॥
भाषा—कर्मोंने आतममलीन किया, तप अग्नि जला निज शुद्ध किया ।
विमलेश्वर जिन मो विमल करो, मल ताप सकल ही शांत करो ॥४८७॥
ॐ ह्रीं विमलेश्वर जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३५)

यशः प्रसारे सति यस्य विश्वं, सुधामयं चंद्रकलावदातं । अनेकरूपं विकृतस्वरूपं, जातं स्मर्चे हि यशोधरेशं ॥
भाषा—यश जिनका विश्व प्रकाश किया, शशि कर इव निर्मल व्याप्त किया ।
भट मोह अरीने शांत किया, यशधारी सार्थक नाम किया ॥ ४८८ ॥
ॐ ह्रीं यशोधर जिनेशाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

क्रोधस्मराशातविघातनाय, संजाततीव्रक्षुधिवात्मनाम ।
प्राप्तं तु कृष्णेति नु शुद्धियोगात् , तं कृष्णमर्चे शुचितामपन्न ।४८९॥
भाषा—समता भय क्रोध विनाश किया, जग काम रिपूको शान्त किया ।
शुचिता वर शुचिकर नाथ जजूँ, श्री कृष्णमती जिन नित्य भजूं ॥४८९॥
ॐ ह्रीं कृष्णमतये जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा । (३७)

ज्ञानं मतिर्भाव उपाश्रयादिरेकार्थएवप्रणिधानयोगात्। ज्ञानेमतिर्यस्य समासजातेयथार्थनामानमहं यजामि ॥

भाषा–शुचि ज्ञानमती जिन ज्ञान धरे, अज्ञान तिमिर सब नाश करे।

जो पूजे ज्ञान बढावत है, आतम अनुभव सुख पावत है ॥४९०॥

ॐ ह्रीं ज्ञानमतये जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३८)

समस्यमानान्यपदार्थजातं, धुरंधरं धर्मरथांगनेमिः। जिनेश्वरं शुद्धमतिं यजेत, प्राप्नोति श्रद्धां मतिमेव ना सः॥

भाषा–शुद्ध मती जिनधर्म–धुरन्धर, जानत विश्व सकल एकीकर।

शुद्ध बुद्धि होवे जो पूजे, ध्यान करे भवि निर्मल हूजे ॥ ४९१ ॥

ॐ ह्रीं शुद्धमतये जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३९)

संसारलक्ष्म्या अतिनश्वराय, जन्मक्षमुद्रामिव कुत्सयन्त्वा। भद्रा शिवश्रीरिति योगयुक्त्या श्रीभद्रमीशं रमसार्चयामि ॥४९२॥

भाषा–संसार विभूति उदास भये, शिवलक्ष्मी सार सुहात भए।

निज योग विशाल प्रकाश किया, श्रीभद्र जिनं शिव वास लिया ॥४९२॥

ॐ ह्रीं श्रीभद्र जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (४०)

अनन्तवीर्यादिगुणप्रसन्नमात्मप्रभवानुभवैकगम्य। अनन्तवीर्यं जिनपं स्तवीमि, यज्ञार्थमार्गैरुपलाल्यमानं ॥

भाषा–सतवीर्य अनन्त प्रकाश किये, निज आतम तत्व विकाश किये।

जिन वीर्य अनन्त प्रभाव धरे, जो पूजे कर्म कलङ्क हरे ॥४९३॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्य जिनाय अ निर्वपामीति स्वाहा। (४१)

पूर्वं विसर्पिण्यथ कालमध्ये, सञ्जातकल्याणपरम्पराणाम्।

संस्मृत्य सार्धं प्रगुणं जिनानां, यज्ञसमाहूय यजे समस्तान् ॥४९४॥

भाषा दोहा–भूत भरत चौबीस जिन, गुण समरूं हरबार। मङ्गलकारी लोकमें, सुख शांति दातार ॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवे याज्ञखण्डलेभ्यः द्वितीयवलयोन्मुद्रितनिर्वाणाद्यनन्तवीर्यान्तेभ्यो भूतजिनेभ्यो पूर्णार्घं नि०।

अब तीसरे वलयमें वर्तमान चौवीस जिन पूजा करनी।

मनुनाभिमहीधरजातप्रभुं, मरुदेव्युदराबतरन्तमहं। प्रणिपत्य शिरोभ्युदयाय यजे, कृतमुख्यजिनं वृषभं २॥

भाषा चाल छंद—मनु नाभि महीधर आये, मरुदेवि उदर उतराए। युग आदि सुधर्म चलाया, वृषभेश जजों शुभ पाया ॥

ॐ ह्रीं ऋषभ जिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (४२)

जितशत्रुगृहं परिभूषयितुं व्यवहारदिशा तनुभूप्रभवं। नयनिश्चयतः स्वयमेवभुवजितं जिनमर्चतु यज्ञपरं॥४९४

भाषा—जितशत्रु जने व्यवहारा, निश्चय आयो अवतारा। सब कर्मन जीत लिया है, अजितेश सुनाम भया है ॥

ॐ ह्रीं अजित जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (४३)

दृढराजसुवंशनभोमिहर त्रिजगत्त्रयभूषणमभ्युदयं। जिनसंभवमूर्ध्वगतिप्रदमर्चनया प्रणमामि पुरस्कृतया ॥

भाषा—दृढराज सुवंश अकाशो, सूरजसम नाथ प्रकाशो जग भूषण शिव गति दानी, संभव जज केवलज्ञानी ॥

ॐ ह्रीं संभव जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (४४)

कपिकेतनमीश्वरमर्थयतो मृत्युजन्मजरापदनोदयतः। भविकस्य भवेत्मवसिद्धिमियादय एव यजे ह्यभिनंदनकं॥

भाषा—कपिचिह्न धरे अभिनंदा, भवि जीव करे आनन्दा जन्मन मरणा दुख टारें, पूजे ते मोक्ष सिधारें ॥४९८

ॐ ह्रीं अभिनन्दन जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (४५)

सुमतिं श्रितमर्थमतिप्रकरार्पणतोऽर्थकरात्मगवाप्तशिवं। महयामि पितामहमेतदधिक्रमतीश्वमूर्जितभक्तिनुतः

भाषा—सुमतीश जजों सुखकारी, जो शरण गहें मतिधारी।
मति निर्मल कर शिव पावें, जग भ्रमण हि आप मिटावें ॥४९९।

ॐ ह्रीं सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (४६)

धरणेशभवं भवभावमितं, जलजप्रभमीश्वरमानमताम्। सुरसंपदियर्त्ति न केति यजे, चरुदीपफलैः सुरवासभवैः,

भाषा—धरणेश सुनृप उपजाए, पद्मप्रभ नाम कहाये। है रक्त कमल पग चिह्ना, पूजत सन्ताप विछिन्ना ॥५००

ॐ ह्रीं पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (४७)

शुभपार्श्वजिनेश्वरपादभुवां, रजसां श्रयतः कमलातनयः।
कति नाम भवन्ति न यज्ञभुवि, नयितुं महयामि महध्वनिभिः ॥५०१॥

भाषा—जिनचरणा रज सिर दीनी, लक्ष्मी अनुपम कर कीनी। हैं धन्य सुपारश नाथा, हम छोड़ें नहि जगसाथा ॥

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (४८)

मनसा परिचिंत्य विधुः स्वरसात, मम कांतिहृतिर्जिनदेहघृणेः।

इति पादयुगं भितवानिव तं, जिनचन्द्रपदांबुजमाश्रयत ॥ ५०२ ॥

भाषा—शशि तुम लखि उत्तम जगमें, आया बसने तव पगमें।
हम शरण गही जिन चरणा, चन्द्र प्रभ भवतम हरणा ॥ ५०२ ॥

ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (४९)

सुमदंतजिनं नवमं सुविधीतिपराहमखंडमनंगहरं। शुचिदेहततिप्रसरं प्रणुनात् सलिलादिगणैर्यजतां विधिना॥

भाषा—तुम पुष्पदन्त जितकामी, है नाम सुविधि अभिरामी।
वन्दूँ तेरे गुण चरणा, जासे हो शिवतिय वरणा ॥ ५०३ ॥

ॐ ह्रीं पुष्पदन्त जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५०)

... . ॥५०४॥

भाषा—श्री शीतलनाथ अकामी, शिव लक्ष्मीवर अभिरामी। शीतल कर भव आतापा, पूजूँ हर मम संतापा॥

ॐ ह्रीं शीतलनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५१)

श्रेयो जिनस्य चरणौ परिधार्य चित्ते, संसारपञ्चतयदुभ्रमणव्ययाय।
श्रेयोऽर्थिनां भवति तत्कृतये मयाऽपि, सपूज्यते यजनमद्भिविधिषु प्रकाशे ॥५०५॥

भाषा—श्रेयांस जिना तुम चरणा, चित धारु मङ्गल करणा। परिवर्तन पञ्च विनाशे, पुजनते ज्ञान प्रकाशे ॥५०५॥

ॐ ह्रीं श्रेयांस जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५२)

इक्ष्वाकुवंशतिलको वसुपूज्यराजा, यज्जन्मजातकविधौ हरिणार्चितोऽभूत्।
तद्वासुपूज्यजिनपार्श्वलया पुनीतः, स्यामद्य तत्प्रतिकृतिं चरुभिर्यजामि ॥ ५०६ ॥

भाषा—इक्ष्वाकु सुवंश सुराया, वसुपूज्य तनय प्रकटाया। इंद्रादिक सेवा कीनी, हम पूजें जिनगुण चीन्ही ॥

ॐ ह्रीं वासुपूज्य जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५३)

कांपिल्यनाथकृतवर्मगृहावतारं, श्यामाजयाहजननीसुखदं नमामि।
कोलध्वजं मिश्वरमध्वरेऽस्मिन्नर्चे, द्विरुक्तमलहापनकर्मसिद्ध्यै ॥ ५०७ ॥

भाषा—कांपिल्य पिता कृतवर्मा, माता श्यामा शुचि वर्मा। श्रीविमल परम सुखकारी, पूजा है मल हरतारी ॥

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५४)

साकेतनाथनृपस्य च सिंहसेननाम्नस्तनूजममरार्चितपादपद्मं ।
सम्पूजयामि विधिनार्हणया ह्यनन्तनाथं चतुर्दशजिनं सलिलाक्षतौघैः ॥५०८।

भाषा–साकेता नगरी भारी, हरिसेन पिता अविकारी। सुर असुर सदा जिनचरणा, पूजें भवसागर तरणा।

ॐ ह्रीं अनन्तनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५५)

धर्मं द्विधोपदिशता सदसीद्धधार्ये, किं किं न नाम जनताहितमन्वदर्शि ।
श्री धर्मनाथ! भवतेति सदर्थनाम, सम्प्राप्तयेऽर्चनविधिं पुरतः करोमि ॥ ५०९ ॥

भाषा–समवशरण द्विविध धर्मा, उपदेशो श्रीजिनधर्मा। हितकारी तत्व बताए, जासे जन शिवमग पाये ॥

ॐ ह्रीं धर्मनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५६)

श्री हस्तिनागपुरपालकविश्वसेनः, स्वांके निवेश्य तनयामृतपुष्टितुष्टः।
ऐराऽपि सा सुकुरुवंशनिधानभूमिर्यस्माद् बभूव जिनशांतिमिहाश्रयामि ॥५१०॥

भाषा–कुरुवंशी श्री विश्वसेना, ऐरादेवी सुखदैना। श्री हस्तिनागपुर आए, जिनशांति जजों सुख पाए ॥

ॐ ह्रीं शांतिनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५७)

श्री कुन्थुनाथजिनजन्मनिषट्निकायजीवाः सुखं निरुपमं बुभुजुर्विशङ्कं ।
किं नाम तत्स्मृतिनिराकुलमानसोऽहं भुञ्जे न सत्वरमतोऽर्चनमारभेय ॥५११॥

भाषा–श्रीकुन्थु दयामय ज्ञानी, रक्षक षटकाया प्राणी। सुमरत आकुलता भाजे, पूजत ले द्रव सु ताजे ॥५१२

ॐ ह्रीं कुन्थुनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५८)

सद्दर्शनप्लुतसुदर्शनभूपपुत्रं, त्रैलोक्यजीववररक्षणहेतुमित्रम् ।
श्री मित्रसेनजननीखनिरत्नमर्चे, श्री पुष्पचिन्हमरनाथजिनेन्द्रमध्यम् ॥५१२॥

भाषा–शुभदृष्टी राय सुदर्शन, अर जाए त्रय भू पर्शन। माता सेना उर रतन, धर चिह्न सुमन जजं यत्न ॥

ॐ ह्रीं अरनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५९)

कुम्भोद्भवं धरणिदुःखहरं प्रजावत्यानंदकारकमतंद्रमुनींद्रसेव्यं ।
श्रीमल्लिनाथविभुमध्वरविघ्नशांत्यै, सम्पूजये जलसुचन्दनपुष्पदीपैः ॥५१३॥

भाषा–नृप कुम्भ धरणिसे जाए, जिन मल्लिनाथ मुनि नाये। जिन यज्ञ विघ्न हरतारे, पूजूँ शुभ अर्घं उतारे ॥

ॐ ह्रीं मल्लिनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६०)

राजत्सुराजहरिवंशनिभोविभास्वान्, वप्राम्बिकाप्रियसुतो मुनिसुव्रताख्यः ।
सम्पूज्यते शिवपथप्रतिपत्यहेतुयज्ञ, मया विविधवस्तुभिरर्हणेऽस्मिन् ॥५१४॥

भाषा–हरिवंश सु सुन्दर राजा, वप्रा माता जिनराजा। मुनिसुव्रत शिवपथ कारण, पूजूं सब विघ्न निवारण ॥

ॐ ह्रीं मुनिसुव्रत जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६१)

सन्मैथिलेशविजयाह्वगृहेऽवतीर्णं, कल्याणपञ्चकसमर्चितपादपद्मं ।
धर्माम्बुसारपरिपोषितभव्यशस्यं, नित्यं नमिं जिनवरं महसार्चयामि ॥५१५॥

भाषा–मिथुलापुर विजय नरेन्द्रा, कल्याण पांच कर इन्द्रा । नमि धर्मामृत वर्षाया, भव्यन खेती अकुलाया ॥

ॐ ह्रीं नमिनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६२)

द्वारावतीपतिसमुद्रजयेशमान्यं, श्री यादवेशबलकेशवपूजितांघ्रिम् ।
शंखाङ्कमंबुधरमेचकदेहमर्चे, सद्ब्रह्मचारिणमिनेमिजिनं जलाद्यैः ॥५१६॥

भाषा–द्वारावति विजयसमुद्रा, जन्मे यदुवंश जिनेन्द्रा । हरिबल पूजित जिनचरणा, शंखांक अंबुधर वरणा ॥

ॐ ह्रीं नेमिनाथ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (६३)

काशीपुरीशनृपभूषणविश्वसेनसेव्याग्रिम कमठजातविघ्नखण्डनेनं ।
पद्माहिराजविकृतातपवारकं, वन्देऽर्चयामि शिरसा नतमौलिनीलं ॥५१७॥

भाषा–काशी विश्वसेन नरेशा, उपजायो पार्श्वजिनेशा। पद्मा अहिपति पग वन्दे, रिपु कमठ मान निःकंदे ॥

ॐ ह्रींपार्श्वजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६४)

सिद्धार्थभूपतिगणेन पुरस्क्रियायामानन्दनाण्डवविधौ स्वजनु शशासे ।
श्री श्रेणिकेन सदसि प्रभुपभूत्प्राप्य, यज्ञेऽर्चयामि वरवीरजिनेन्द्रमास्मिन् ॥५१८॥

भाषा–सिद्धार्थराय अघ ज्ञानी, सुत वर्द्धमान गुणखानी । समवसृत श्रेणिक पूजे, तुम सम है देव न दूजे ॥

ॐ ह्रीं वर्द्धमान जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (६५)

अत्राहूतसुपर्वपर्वनिकरे, बिम्बप्रतिष्ठोत्सवे सम्पूज्याश्चतुरुत्तरा जिनवरा, विंशप्रभाः सम्प्रति ॥
सञ्जातसमयादयैकसुकृतानुधार्य मोक्षं गतास्तेऽत्रागत्य समस्तमध्वरकृत गृह्णन्तु पूजाविधिं ॥

भाषा दोहा—वर्तमान चौबीस जिन, उद्धारक भवि जीव। बिम्बप्रतिष्ठा साधने, यजूं परम सुखनीव ॥५१९॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् यागमण्डले मलयुग्स्यार्चिततृतीयवलयोन्मुद्रितवर्तमानचतुर्विंशतिजिनेभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

यहां १ नारियल तीसरे वलयमें कहींपर या मण्डलके किनारे रख दे। अब चौथे वलयमें भविष्य चौबीस तीर्थङ्करों-की पूजा करनी।

पद्मा चलेत्यकनलुप्तिकामा, जिनस्य पादावचलौ विचार्य।
यत्पादपद्मे वसति चकार, सोऽयं महापद्मजिनोऽर्च्यतेऽर्घैः ॥५२०॥

भाषा चौपाई—महापद्म जिन आदीनाथ, श्रेणिक जीव जगत विख्यात। लक्ष्मी चञ्चल लिप्टी आन, तब चरणा पूजूं भगवान ॥

ॐ ह्रीं महापद्म जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (६६)

देवाश्चतुर्भेदनिकायभिन्नास्तेषां पदौ मूर्धनि सन्दधानः। तेनैव जातं सुरदेवनाम तमर्चये यज्ञविधौ जलाद्यैः॥

भाषा—देव चतुर्विधि पूजे पाय, नाम २ सुरप्रभ जिनराय मैं सुमरण करके हरषाय, पूजूं हर्ष न अङ्ग समाय॥

ॐ ह्रीं सुरप्रभ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (६७)

सेवार्थमुत्प्रेक्ष्य न भूतिदाता, कारुण्यबुद्ध्यैव ददाति लक्ष्मीम्।
यतो जिनः सुप्रभुराप्तसार्थो नामार्चयेऽहं विधिनाध्वरोग्यः ॥५२१॥

भाषा—सुप्रभु जिनके वंदूं पाय, सेवकजन सुखसार लहाय। करुणाधारी धनदातार, जो अविनाशी जियसुखकार॥

ॐ ह्रीं सुप्रभ जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (६८)

न केनचित्पदविधायि मोक्षसाम्राज्यलक्ष्म्याः स्वयमेव लब्धं। स्वयंप्रभत्वं स्वयमेवजातं यस्यार्चते पादसरोजयुग्मं॥

भाषा—मोक्ष राज्य देवे नहिं कोय, स्वयं आत्मबल लेवें सोय।
देव स्वयंप्रभ चरण नमाय, पूजूं मन वच ध्यान लगाय ॥५२३॥

ॐ ह्रीं स्वयंप्रभदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (६९)

सर्वं मनःकायवचःप्रहारे कर्मारिसां शस्त्रमभूद् यतो यः। सर्वायुधाख्यामगमन्मया संपूज्यतेऽसौ क्रतुभागभाज्यैः॥

भाषा—मन वच काय गुप्ति धरतार, तीव्र शस्त्र अघ मारणहार।
सर्वायुध जिन साम्य प्रचार, पूजत जग मङ्गल करतार ॥५२४॥

ॐ ह्रीं सर्वायुधदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (७०)

कर्मद्विषां मूलमपास्य लब्धो, जयोऽन्यमर्त्यैरपि योऽनवाप्यः
ततो जयाख्यामुपलभ्यमानो, मयार्हणाभिः परिपूज्यतेऽसौ ॥५२५॥

भाषा–कर्म शत्रु जीतन बलवान, श्रीजयदेव परम सुखखान पूजत मिथ्यातम विघटाय, तत्त्व कुतत्त्व प्रकट दशाय॥

ॐ ह्रीं जयदेवाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा (७१)

आत्मप्रभावोद्गमनान्वितात्, लब्धोदयत्वादुदयप्रभाख्यां ।
समाप यस्मादपि सार्थकत्वात्, कृतार्चनं तस्य कृतो भवामि ॥५२६॥

भाषा–आत्मप्रभाव उदयजिन भयो, उदयप्रभजिन तातैं थयो। पूजत उदय पुण्यका होय, पापबन्ध सब डाले खोय ॥

ॐ ह्रीं उदयप्रभजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (७२)

प्रभा मनीषा प्रकृतिर्मतिर्ज्ञा, प्रभृत्युदीर्णैकफलेति मत्वा ।
जाता प्रभादेव इति प्रशस्तिस्ततोऽर्चनातोऽहमपि प्रयामि ॥५२७॥

भाषा–प्रभा मनीषा बुद्धिप्रकाश, प्रभादेवजिन छूटी आश। पूजत प्रभा ज्ञान उपजाय, संशयतिमिर सबै छूट जाय ॥

ॐ ह्रीं प्रभादेवजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (७३)

उदंकदेव त्वयि भक्तियोग्या, घटी घटी सा न तदुच्यते हा ।
त्वामेव लब्ध्वा जननं प्रयात, वरं यतस्त्वामहं महामि ॥५२८॥

भाषा–भव्यभक्तिजिनराजकराय, सफल काल तिनका हो जाय। देव उदंक पूज जो करैं, मनुषदेह अपनी घर करैं ॥

ॐ ह्रीं उदङ्कदेवजिनाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (७४)

सुरासुरस्वांतगत भ्रमैकविध्वंसने प्रश्नकृतोपपत्त्या । कीर्तिं ययौ प्रोष्ठिलमुख्यनामस्तथैर्निरुक्तोऽहमुदंचयामि ॥

भाषा–सुरविद्याधर प्रश्न कराय, उत्तर देत भरम टल जाय। प्रश्नकीर्तिजिन यशके धार, पूजत कर्मकलंक निवार ॥५२९॥

ॐ ह्रीं प्रश्नकीर्तिजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (७५)

पापाश्रवाणां दलनाद् यशोभिर्व्यक्तेर्जयात् कीर्तिसमागमेन ।
निरुक्तलक्ष्म्यै जयकीर्तिदेवं, स्तवस्रजा नित्यमुपाचरामि ॥५३०॥

भाषा–पापदलनते जयको पाय, निर्मल यश जगमें प्रकटाय। गणधरादि नित वन्दन करैं, पूजत पापकर्म

ॐ ह्रीं जयकीर्तिजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७६) दुख हरें ॥

कैवल्यभानातिशये समग्रा, बुद्धिप्रवृत्तियत उत्तमार्था । तत्पूर्णबुद्धेश्चरणौ पवित्राववद्यतः यायजिम सत्प्रणष्टय ॥

भाषा—बुद्धिपूर्ण जिन वन्दूँ पाय, केवल ज्ञान ऋद्धि प्रकटाय ।

चरण पवित्र करण सुखदाय, पूजत भवबाधा नश जाय ॥५३१॥ ॐ ह्रीं पूर्णबुद्धिजिनाय अर्घं निर्व० स्वाहा ।

क्रोधादयश्चात्मस्वरूपभावं, स्वधर्मनाशाय जहत्युदीर्णं ।

तेषां हतिर्येन कृता व्यशक्तेस्तं, निःकषायं प्रयजामि नित्यं ॥५३२॥

भाषा—हैं कषाय जगमें दुखकार, आतमधर्मके नाशनहार । निःकषाय होगे जिनराज, तातें पूजूं मङ्गल काज ॥

ॐ ह्रीं निःकषायजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७८)

मलव्यपायान्मननात्मलाभाद्, यथार्थशब्दं विमलप्रभेति ।

लब्धं कृतो स्वीयविशुद्धिकामाः, सम्पूजयामस्तमनद्यजात ॥५३३॥

भाषा—कर्मरूप मल नाशनहार, आत्म शुद्धकर्ता सुखकार । विमलप्रभ जिन पूजूं आय, जासे मन विशुद्ध हो जाय ॥

ॐ ह्रीं विमलप्रभदेवाय अ० निर्वपामीति स्वाहा । (७९)

भास्वद्गुणग्रामविभासनेन, पौरस्त्यसत्प्राप्तविभावितानं ।

संस्मृत्य काम्यं बहुलप्रभं तं, समर्चये तद्गुणलब्धिलुब्धः ॥५३४॥

भाषा—दीप्तवन्त गुणधारणहार, बहुलप्रभ पूजों हितकार । आतमगुण जासों प्रगटाय, मोहतिमिर क्षणमें विनशाय ॥

ॐ ह्रीं बहुलप्रभदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८०)

नीराञ्जनानि सुनिर्मलानि, भवाद्ययेशोऽन्तरबाह्यिनां वै ।

येन द्विधा कर्ममलो निरस्तः, स निर्मलः पातु सदर्चितो माम् ॥५३५॥

भाषा—जलन भरत विमल कहवाय, सो अभून व्यवहार बताय । भाव कर्म अठकर्म महान, हत निर्मल जिन पूजूँ जान ॥

ॐ ह्रीं निर्मलजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८१)

मनोवचःकायनियन्त्रणेन, चित्राऽस्ति गुप्तिप्रवृत्तिप्रपूर्तेः तं चित्रगुप्ताह्वयमर्चयामि, गुप्तिप्रशंसाप्तिरियं मम स्यात् ॥

भाषा—मनवचकाय गुप्ति धरतार, चित्रगुप्ति जिन हैं अविकार । पूजूँ पग तिन भाव लगाय जासें गुप्तित्रय प्रगटाय ॥५३६॥

ॐ ह्रीं चित्रगुप्तिजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८२)

अपारसंसारगतौ समाधिर्लब्धो न यस्माद् विहितः स येन ।
समाधिगुप्तिजिनमर्चयित्वा, लभे समाधिं स्थिति पूजयामि ॥५३७॥

भाषा–चिर भव भ्रमण करत दुख सहा, मरण समाधि न कबहूं लहा। गुप्तिसमाधि शरणको पाय, जजत समाधि प्रगट होजाय ॥

ॐ ह्रीं समाधिगुप्तिजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (८३)

स्व विनाऽन्यस्य सुयोगमात्मस्वशक्तिमुद्माप्य निजस्वरूपे।
व्यक्तोबभूवेति जिनः स्वयंभूदघात् शिवं पूजनयानयाच्चैः ॥५३८॥

भाषा–अन्यसहाय बिना जिनराज, स्वयं लेय परमातमराज। नाथ स्वयंभू मग शिवदाय, पूजत बाधा सब टल जाय ॥

ॐ ह्रींस्वयंभूजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (८४)

कन्दर्पनाम स्मरसद् भटस्य, सुधैव नामेति तदर्दनोद्घः। प्रशस्तकदर्पं ध्याय शक्तिं, यतोऽर्चयेऽहं तदयोगबुद्धये ॥ (५३९)

भाषा–मनदर्पके नाशनहार, जिनकंदर्प आत्मबलधार। दप अयोग बुद्धिके काज, पुजू अर्घ लिए जिनराज ॥

ॐ ह्रीं कन्दर्पजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (८५)

अनेकनामानि गुणैरनन्तै, र्जिनस्य बोध्यानि विचारवद्भिः।
जयं तथा न्यायसमर्थकर्शिवगमनाजल समप्रति पूजयामि ॥५४०॥

भाषा–गुण अनंत ते नाम अनंत, श्रीजयनाथ धरत भगवंत। पूजू अष्टद्रव्य कर लाय, विघ्न सकल जासे टल जाय ॥५४०॥

ॐ ह्रीं जयनाथजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (८६)

अभ्यर्हितात्मप्रगुणस्वभावं, मलापहं श्रीविमलेशमोशं। पात्रेनिधायार्घमफल्गुशीलोद्धरप्रशक्त्यै जिनमर्चयामि

भाषा–पूज्य आत्म गुणधर मलहार, निर्मलनाथ जग परम उदार। शील परम पावनके काज, पूजूं अघ लेय जिनराज ॥५४१॥

ॐ ह्रीं विमलजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (८७)

अनेकभाषा जगति प्रसिद्धा, परन्तु दिव्यो ध्वनिरर्हतो यै।
एवं निरूप्यात्मनि तत्त्वबुद्धिमभ्यर्चयामो जिनदिव्यवादं ॥५४२॥

भाषा–दिव्यवाद अर्हन्त अपार, दिव्यध्वनि प्रगटावनहार। आत्मतत्त्वज्ञाता सिरताज, पूजूँ अघ लेय जिनराज ॥

ॐ ह्रीं दिव्यवादजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (८८)

शक्तेरपारश्चिन्न एव गीतस्तथापि तद्व्यक्तिमियर्ति लब्ध्या।
अनन्तवीर्य त्वमगाः सुयोगात्स्वामचये त्वत्पदघृष्टमूर्ध्ना ॥५४३॥

भाषा–शक्ति अपार आत्मधरनार, प्रगट करें जिनयोग संभार वीर्य अनंतनाथको ध्याय, नत मस्तक पूजूं हरषाय ॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा (८९)

काले भाविनि ये सुतीर्थकरणात् पूर्वं प्रवृत्यागमे, विख्याता निजकर्मसन्ततिमपाकृत्य स्फुरच्छक्तयः ॥

तानत्र प्रतिकृतपावनमखे सत्पूजिता र्चिताः, प्राप्ताशेषगुणास्तदीप्तिमलपदावाप्त्यै तु सन्तु श्रिये ॥५४४

भाषा दोहा–तीर्थराज चौबीस जिन भावी भव हरतार । बिम्बप्रतिष्ठा कार्यमें, पूजूं विघ्न निवार ॥

ॐ ह्रीं बिम्बप्रतिष्ठावसरे भूतवर्तमानभविष्यच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं नि० ।

यहां १ नारियल चौथे वलयमें ... रखे आगे पांचवें वलयमें बीस विदेह तीर्थंकरोंकी पूजा करनी ।

सीमन्धरं मोक्षनगर्याः. श्रीमच्चित्तोद्भव भानुमन्तं । यत्पुण्डरीकाख्यपुरस्वजात्या, पूतीकृतं तं महसाचयामि॥

भाषा छन्द स्रग्विणी–मोक्ष नगराधपति हम राजा सुतं पुण्डरीका पुरी राजते दुखहतम्

श्रीमन्धर जिना पूजते दुखहना, फेर होवे न या जगतमें आवना ॥५४५॥ ॐ ह्रीं सीमन्धरजि० अ० नि०

युगमंधरं धर्मनयप्रमाणवस्तुव्यवस्थादिषु युग्मवृत्तेः ... भारण ... भूपजातं, प्रणम्य पुष्पांजलिनाचयामि ॥

भाषा–धर्मद्वय वस्तु द्वय नय प्रमाणद्वय, नाथ जुगमन्धरं कथित ... द्वयं ।

भूपश्री रुह सुतं ज्ञानकेवल गतं, पूजिये भक्तिसे कर्मशत्रू हनं ॥५४६॥ ॐ ह्रीं जुगमन्धरजि० अ० नि०

सुग्रीवराजोद्भवमेणचिह्नं सुसीमपुर्यां विजयाप्रसूतं । बाहु त्रिलोकोद्धरणाय बाहुं, मखे पवित्रेऽर्चितमर्घयामि ॥

भाषा–भूपसुग्रीव विजयासे जाए प्रभू, एणचिह्न धरे जानते नाम भू ।

स्वच्छ सीमापुरी राजते बाहुजिन पूजिये साधुको राग रुष दोष बिन ॥५४७॥ ॐ ह्रीं बाहुजिनाय अ०

निःशल्यवंशाभ्र... सुनन्दया लालितमुग्रकीर्ति ।

अयन्ध्यदेशाधिपतिं सुबाहु तोयादिभिः पूजितुमुत्सहेऽहं ॥५४८॥

भाषा–वंशनभ निर्मल सूर्यसम राजते, कीर्तिमय वत्सविन क्षेत्र शुभ शोभते ।

मात सुन्दर सुनन्दा सु ... भवहतं, पूजते बाहु शुभ भवभय निर्गतं । ॐ ह्रीं सुबाहुजिनाय अ० नि०

श्रीदेवसेनात्मजमर्थमाक विदेहवर्षेऽलकापुरिस्थं । ... लक्ष्मं, पुण्यजनुर्धरत्वात्, साथोंकयचेंऽत्र मखे जलाद्यैः ॥

भाषा–जन्म अलकापुरी देवसेनात्मजं, पुण्यमय जन्मए नाथ ... ।

पूजिये भावसे द्रव्य आठों लिये, और रस त्याग कर, आत्मरसको पिये ॥५४९॥

ॐ ह्रीं संजातकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वयकृतात्मप्रभवत्वहेतोः, स्वयंप्रभुं सद्गुरुयस्वभूत । सन्मङ्गलापुःस्थमनुष्णकांतिचिह्नं यजामोऽत्र महोत्सवेषु॥

भाषा–जन्मपुर मङ्गला चन्द्र चिह्न धरे, आपसे आप ही भव उदधि उद्धरे ।

प्रभस्वयं पूजते विघ्न सारे टरे, होय मङ्गल महा कर्मशत्रू हरे ॥५५०॥ ॐ ह्रीं स्वयंप्रभजिनाय अर्घं नि०

श्रीवीरसेना प्रसवं सुसीमाधीशं, सुराणामृषभाननं त । ईशं सुसौभाग्यमुषं महेशमर्चे विशालैश्चरुभिर्नवीनैः॥

भाषा–वीरसेना सुमाता सुसीमापुरी, देवदेवी परमभक्ति उरमें धरी ।

देव ऋषभानन आनन सार है, देखते पूजते भव्य उद्धार है ॥५५१॥ ॐ ह्रीं ऋषभाननदेवाय अर्घं नि०

यस्यास्ति वीर्यस्य न पारमत्र, तारागणाभ्येव नितांत रम्यं । अनन्तवीर्यप्रभुमर्चयित्वा कुनीमवाम्यत्रमखे पवित्रे॥

भाषा–वीर्यका पार ना ज्ञानका पार ना, सुक्खका पार ना ध्यानका पार ना ।

आपमें राजते शांतमय छाजते, अनन्तविन वीर्यको पूज अघ भाजते ॥५५२॥ अनन्तवीर्यजिनाय अर्घं नि०

वृक्षांकमुच्चैश्चरणे बिभाति, यस्यापरस्ताद् वृषभूतिहेतुः ।

सूरिप्रभु तं विधिनामहामि, वार्मुख्यतत्त्वैः शिवतत्वलब्ध्यै ॥५५३॥

भाषा अंकवृष धारते धर्म वृष्टी करें, भाव सन्तापहर ज्ञान सृष्टी करें ।

नाथ सूरिप्रभं पूजते दुखहनं, मुक्ति नारी वर पावुपे निजधनं ॥ ॐ ह्रीं सूरप्रभजिनाय अर्घं नि० (९८)

वीर्येशभूमीरुहपुष्पमिंद्रमल्लांछनं पुण्डरपुरिकिरीट । विशालमीशं विजयाप्रसूनमर्चामि सद्ध्यानपरायणोऽहं ॥

भाषा–पुण्डर पुरवर मात विजया जने, वीर्य राजा पिता ज्ञानधारी तने ।

जुग्मचरण भजे ध्यान इकतान हो, जिनविशालप्रभ पूज अघहान हो ॥५५४॥ ॐ ह्रीं विशालप्रभजि०....

करस्थलापद्मरथांगजातं, शखांकमुच्चैः श्रियमीशितारं ।

संमान्य त वज्रधरं जिनेन्द्र, जलाक्षतैरर्चितमुत्करोमि ॥५५५॥

भाषा–वज्रधर जिनवरं पद्मरथके सुतं, शख चिह्न धरे मान रुष भयगतं ।

मात सरसुति वड़ी इन्द्र सन्मानिता, पूजते जासको पाप मथ भाजना ॥ ॐ ह्रीं वज्रधरजिनाय अर्घं नि०

पालमीकवंशांवुविधिशीतरश्मि, दयावतीमातृकमंकपगावं ।

सत्पुण्डरीकिण्यधनं जिनेन्द्र चन्द्रानन पूजयताज्जलाद्यैः ॥५५६॥

भाषा—चन्द्र आनन जिनं चन्द्रको जयकरं, कर्मविध्वंसकं साधुजनशमकरं ।
मात करुणावती नग्र पुण्ड्रीकिनी, पूजते मोहकी राज्यधानी छिनी ॥ ॐ ह्रीं चन्द्राननजिनाय अर्घं नि०

श्री रेणुकामातृकमब्जचिह्न, देवेशसुतपुत्रमुदारभावं ।
श्री चन्द्रबाहु जिनमर्चयामि, कृतुप्रयोगे विधिना प्रणम्य ॥५५७॥

भाषा—श्रीमती रेणुका मात है जासकी, पद्मचिह्न धरे मोहको मात दी ।
चन्द्रबाहुजिनं ज्ञानलक्ष्मीधरं, पूजते जासके मुक्तिलक्ष्मीवरं ॥ ॐ ह्रीं चन्द्रबाहुजिनाय अर्घं नि० स्वाहा ।

भुजङ्गम स्वीयभुजेन मोक्षपन्थावरोहाद्धृतनामकीर्तिम् । महाबलक्ष्मीपतिपुत्रमर्चे चन्द्रांकयुक्तं महिमाविशालं॥

भाषा—नाथ निज आत्मबल मुक्ति पथ पग दिया, चन्द्रमा चिह्न धर मोहतम हर लिया ।
बलमहाभूपती हैं पिता जासके, गमभुजं नाथ पूजे न भवमें छके ॥५५८। ॐ ह्रीं भुजङ्गमजि० अ० नि०

ज्वालाप्रसूर्येन सुकान्तिमासा, कृतार्थश्चा वा गलसेन भूपः ।
सोऽयं सुसीमाधनिरीश्वरो मे, बोधिं ददातु त्रिजगद्विलासं ॥५५९॥

भाषा—मात ज्वाला सती सेन गल भूपती, पुत्र ईश्वर जने पूजते सुरपती ।
स्वच्छ सामानगर धर्म विस्तारकर, पूजते हो प्रगट बोधिमय भास्कर ॥ ॐ ह्रीं ईश्वरजिनाय अर्घं नि०

नेमिप्रभं धर्मरथांगवाहे, नेमिस्वरूपं तपनांकमीडे । वार्श्चन्दनैः शालिसुमप्रदीपैः, धूपैः फलश्चारुचरुप्रतानैः ॥

भाषा—नाथनेमिप्रभं नेमि हैं धर्मरथ, सूर्य चिह्न धरे चालते मुक्तिपथ ।
अष्ट द्रव्य लिये पूजते अघ हने, ज्ञानवैराग्यसे बोधि पावें घने ।५६०॥ ॐ ह्रीं नेमिप्रभजिनाय अ० नि०

श्री वीरसेनाप्रभवं प्रदुष्टकर्मारिसेनाकरिणे मृगेन्द्रः ।
यः पुण्डरीशं जिनवीरसेनं, सद्भूमिपालात्मजमर्चयामि ॥५६१॥

भाषा—वीरसेना सुतं कर्मसेना हतं, सेनशूर जिन इन्द्रसे वन्दितं ।
पुण्डरीक नगर भूमि पालक नृप, हैं पिता ज्ञानसूरा करूं मैं जपं ॥ ॐ ह्रीं वीरसेनजिनाय अ० नि०

यो देवराजक्षितिपालवंशादिनामणिः पूर्विजयेश्वरोऽभूत् ।
उमाप्रसूनो व्यवहारयुक्त्या, श्रीमन्महाभद्र उदर्चयतेऽसौ ॥५६२॥

भाषा—नम्र विजया तने देव राजा पती, अरु उमामातके पुत्र सशय हती ।
जिन महाभद्रको पूजिये भद्रकर, सर्व मङ्गल करैं मोह सन्तापहर ॥ ॐ ह्रीं महाभद्र जिनाय अर्घं नि० ।

॥ ४६ ॥

गङ्गाफनिस्फारमणि सुसीमापुरीश्वरं वै स्वभूतिपुत्रं । स्वस्तीपद देवयशोजिनेन्द्र मर्चामि मत्स्वस्तिकलांछनोयं॥
भाषा–है सुसीमा नगर भूप भूतिस्वं, मात गङ्गा जने द्योतते त्रिभुवं ।
लांछण स्वस्तिकं जिनयशोदेवको, पूजिये वन्दिये मुक्ति गुरुदेवको ॥५६३॥ ॐ ह्रीं देवयशोजिनाय अ० नि०
कनकभूपलितोकमकोपकं, कृनलपद्मरणाद्रिलमोहकं । अजितवीर्यजिनं सरसीरुहविषदाचिह्नमहं परिपूजये ॥
भाषा–पद्म चिन्ह धरे मोहको वश करे, पुत्र राजा कनक क्रोधको क्षय करे ।
ध्यान मण्डित महावीय अजितं धरे, पूजते जासको कर्मबन्धन टरे ॥५६४॥ ॐ ह्रीं अजितवीर्यजि० अर्घं...
एवं पञ्चमकोष्ठपूजितजिनाः सर्वे विदेहोद्भवा । नित्यं ये स्थितिमादधुः प्रतिपतत्तन्नाममन्त्रोत्तमाः ।
कस्मिंश्चित्समयेऽप्यदृष्टविधुमितं पूर्ण जिनानां मतं । ते कुर्वन्तु शिवात्मलाभमनिशं पूर्णार्घ सम्मानिताः॥५६५॥
भाषा दोहा–राजत बीस विदेह जिन, कबहिं साठ शत होंय । पूजन वन्दन जासको, विघ्न सकल क्षय होंय ॥
ॐ ह्रीं बिम्बप्रतिष्ठाध्वरोद्यापने मुख्यपूजार्हपञ्चमवलयोन्मुद्रितविदेहक्षेत्रे सुषष्ठिप्रहितैकमत्तजिनेशसंयुक्त नित्यविहरमाण-विंशतिजिनेभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा । इस तरह पञ्चम वलयमें बीस जिनपूजा करके एक नारियल वहां पर या मंडलके किनारे चढ़ावे ।

अब छठे वलयमें आचार्य परमेष्ठीके ३६ गुणोंकी पूजा करनी ।

मोहत्रयवादापहराः प्रपञ्चविंशातिचाररञ्जनावृपापेनां ।
सम्यक्त्वशुद्धि प्रतिरक्षतोऽर्चे, आचार्यवर्यान् निजभावशुद्धान् ॥५६६॥

भाषा–भुजङ्गप्रयात छन्द–हटाये अनन्तानुबन्धी कषाये, करणसे हैं मिथ्यात तीनों खपाये ।
अतीचार पचीसको हैं बचाए, सु आचार दर्शन परम गुरु धराये ॥
ॐ ह्रीं दर्शनाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

विपर्ययादिप्रहतेः पदार्थज्ञानं, समासाद्य परात्मनिष्ठं । दृढप्रतीतिं दधतो मुनीन्द्रानर्चे स्पृहाध्वंसनपूर्णहर्षान् ॥
भाषा–न संशय विपर्यय न है मोह कोई परम ज्ञान निर्मल धरे तत्त्व जोई ।
स्वपरज्ञानसे भेद विज्ञान धारे, सु आचार ज्ञानं स्व अनुभव मझारे ॥५६७॥
ॐ ह्रीं ज्ञानाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

जातमस्वभावे स्थितिमादधानांश्चारित्रचारुव्रतधौर्यधर्तॄन् ।

द्विधा चरित्राद्चलत्स्वभावानार्यान् यजे सद्गुणरत्नभूषान् ॥५६८॥

भाषा—सुचारित्र व्यवहार निश्चय सम्हारे, अहिंसादि पांचों व्रतें शुद्ध धारे।

अचल आतमसें शुद्धता सार पाए, जजूँ पद गुरूके दरब अष्ट लाए ॥५६८॥

ॐ ह्रीं चारित्राचारसयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (११२)

बाह्यांतरद्वैधतपोअभियुक्तान्, सुदर्शनाद्रिं इसतोऽचलत्वात्।

गाढावरोहात्मसुखस्वभावान्, यजामि भक्त्या मुनिसंघपूज्यान् ॥५६९॥

भाषा—तपैं द्वादशों तप अचल ज्ञानधारी, सहै गुरु परीषह सुसमता प्रचारी।

परम आत्म रस पीवते आपही तैं, भजूँ मैं गुरु छूट जाऊँ भवों तैं ॥ ॐ ह्रीं तपाचारसयुक्ताचार्यपर० अर्घं

स्वात्मानुभावोद्भटवीर्यशक्तिदृढ़ाभियोगावनतः प्रशक्तान्। परीसहापीडनदुष्टदोषागतो स्ववीर्यप्रवणान् यजेऽहं

भाषा—परम ध्यानमें लीनता आप कीनी, न हटते कभी घोर उपसर्ग दीनी।

सु आतम बलीवीर्यकी ढाल धारी, परम गुरु जजूँ अष्ट द्रव्यें सम्हारी ॥ ५७० ॥

ॐ ह्रीं वीर्याचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (११४)

चतुर्विधाहारविमोचनेन, द्वित्र्यादिघस्रषु तृषाक्षुधाद्रेः। अम्लानभावं दधतस्तपस्थानर्चामि यज्ञे प्रवरावतारान् ॥

भाषा—तपः अनशनं जो तपैं धीरवीरा, तजें चारविध भोजनं शक्ति धीरा।

कभी मास पक्षं कभी चार त्रय दो, सु उपवास करते जजूँ आप गुण दो ॥५७१॥

ॐ ह्रीं अनशनतपोयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (११५)

त्रिभागभोज्ये क्षितिवेदवह्निग्रासाशने तुष्टिमतोमुनींद्रान्।

ध्यानावधानाभिवृद्धिपुष्टान्, निद्रालसौ जेतुमितान् यजामि ॥५७२॥

भाषा—सु ऊनोदरी तप महा स्वच्छकारी, करे नींद आलस्यका नहिं प्रचारी।

सदा ध्यानकी सावधानी सम्हारे, जजूँ मैं गुरुको करम घन विदारें ॥

ॐ ह्रीं अवमोदर्यतपोऽभयुक्ताचार्य परमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (११६)

शृङ्गाग्रलग्नं वमनं नवीनं, रक्तंनीरीक्ष्यैव भुजिं करिष्ये। इत्यादिवृत्तौ निरतानलक्ष्यभावान् मुनींद्रानहमर्चयामि॥

भाषा—जभी भोजना हेतु पुरमें पधारें, तभी दृढ़ प्रतिज्ञा गुरु आप धारें।
यही वृत्तिपरिसंख्य तप आचाहारी, भजूँ जिन गुरु जो कि धारें विचारी ॥५७३॥
ॐ ह्रीं वृत्तिपरिसंख्या तपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (११७)

मिष्टान्नदुग्धादिरसापवृत्तेः, परस्य लक्ष्येऽप्यवभासनेन।
त्यागे मुदं चेच्छिन्नमतययोगात्, भर्तॄन् गणेशाधिपतीन् यजामि ॥५७४॥
भाषा—कभी छः रसोंको कभी चार त्रय दो, तजें राग वर्जन गुरू लोभजित हो।
धरें लक्ष्य आतम सुधा सार पीले, जजू मैं गुरूको सभी दोष बीते ॥
ॐ ह्रीं रसपरित्यागतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दरीषु भूध्रोपरिषु श्मशाने, दुर्गे स्थले शून्यगृहाचलोषु, शय्यासने योगदृढासनेन, सधार्यमाणान् परिपूजयामि ॥
भाषा—कभी पर्वतों पर गुहा वन मशाने, धरें ध्यान एकांतमें एकताने।
धरें आसना दृढ़ अचल शांतिधारी, जजूँ मैं गुरूको भरम तापहारी ॥५७५॥
ॐ ह्रीं विविक्तशय्यासनतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्रीष्मे महीध्रे सरितां तटेषु, शीतेषु वर्षासु चतुष्पथेषु। योगं दधानान् तनुकष्टदाने, प्रीतान् मुनीन्द्रान् चरुभिः पूजयामि ॥५७६॥
भाषा—ऋतु उष्ण पर्वत शरद्रितु नदी तट, अधोवृक्ष वर्षातमें याकि चउ पथ।
करें योग अनुपम सहें कष्ट भारी, जजू मैं गुरूको सुसम दम पुकारी ॥
ॐ ह्रीं कायक्लेशतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

संभाव्य दोषाननयं गुरुभ्य, आलोचनापूर्वमहर्निशाये। तच्छुद्धिमात्रे निपुणा यतीशा, संतर्पयामि न मुदं विचारः ॥
भाषा—करें दोष आलोचना गुरु सकाशे अरें दण्ड करिसों गुरू जो प्रकाशे।
सुतप अन्तरङ्ग प्रथम शुद्ध कारी, जजूँ मैं गुरूको स्व आतम विहारी ॥५७७॥
ॐ ह्रीं प्रायश्चित्ततपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सद्दर्शनज्ञानचारित्ररूपप्रभेदतश्चात्मगुणेषु पञ्च—पूज्येष्वशल्यं विनयं दधानाः, मां पांतु यज्ञेऽन्यथा पदिष्ठाः ॥
भाषा—दरश ज्ञान चारित्र आदि गुणोंमें, परम पदमयी पांच परमेष्ठियोंमें।

विनय तप धरें शल्य त्रयको निवारें, हमें रक्ष श्रीगुरु जजूं अर्घ धारे ॥५७८॥

ॐ ह्रीं विनयतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ निवपामीति स्वाहा ।

दिक्संख्यसंघे खलु वातपित्तकफादिरोगक्रमजार्तिसंघौ, दयार्द्रचित्तान्मुनियेंगितज्ञांस्तद्दुःखहंतॄनहमाश्रयामि

भाषा—यती संघ दस विध यदी रोग धारे, तथा खेद पीडित मुनी हों विचारे ।

करें सेव उनकी दया चित्त ठाने, जजूं मैं गुरूको भरम ताप हाने ॥ ५७९ ॥

ॐ ह्रीं वैय्यावृत्तितपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ निवपामीति स्वाहा ।

श्रुतस्य बोधं स्वपरार्थयोर्वा, स्वाध्याययोगादवभासमानान् ।

आम्नायपृच्छादिषु दत्तचित्तान्, सम्पूजयामोऽर्घविधानमुख्यैः ॥५८०॥

भाषा—कर बोध निज तत्त्व पर तत्त्व रुचिसे, प्रकाशें परम तत्त्व जगको स्वमतिसे ।

यही तप अमोलक करमको खपावे, जजूं मैं गुरूको कुबोधं नशावे ॥

ॐ ह्रीं स्वाध्यायतपोभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ नि० स्वाहा ।

विनश्वरे देहकृते ममत्वत्यागेन कायोत्सृजतोपि पद्मा—सनादियोगानवधार्थचात्मसंपत्सु सदाहमश्रयामि ॥

भाषा—अपावन विनाशीक निज देह लखके, तजें सब ममत्वं सुधा आतम चखके ।

कर तप सु व्युत्सर्ग सन्तापहारी, जजूं मैं गुरूको परम पद विहारी ॥ ५८१ ॥

ॐ ह्रीं व्युत्सर्गतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ नि० स्वाहा ।

येषां मनोऽनिशमार्त्तरौद्रभूमेरनङ्गीकरणाद्धि धर्म्ये । शुक्लोपकण्ठे परिवर्त्तमानं तानाश्रये बिंबविधानयज्ञ ॥

भाषा—जु है आर्तरौद्र कुध्यानं कुज्ञानं, उन्हें नहिं धरें ध्यान धर्मं प्रमाणं ।

करें शुद्ध उपयोग कर्मप्रहारी, जजूं मैं गुरूको स्व अनुभव सम्हारी ॥५८२॥

ॐ ह्रीं ध्यानावलम्बननिरताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ नि० स्वाहा ।

येषां भ्रुवः क्षेपणमात्रतोऽपि, शक्रस्य शक्रत्वविघातनं स्यात् ।

एवंविधा अप्युदितक्रुधार्तौ, क्षमा भजन्ते ननु तान् महामि ॥५८३॥

भाषा—करें कोय बाधा वचन दुष्ट बोले, क्षमा ढालसे क्रोध मनमें न कुछ लें ।

धरें शक्ति अनुपम तदपि शाम्यधारी, जजूं मैं गुरूको स्व धर्मप्रचारी ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमापरमधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

न जातिलाभैश्वर्यविदङ्गरूपमदाः कदाचिज्जननं प्रयांति।
येषां मृदिम्ना गुरुणाद्रचित्तास्ते वर्गुरीशाः स्तवनाच्छिवं मे ॥५८४॥

भाषा–धरैं मद न तप ज्ञान आदी स्व मनमें, नरम चित्तसे ध्यान धारैं सु वनमें।
परम मार्दवं धर्म सम्यक् प्रचारी, जजूं मैं गुरूको सुधा ज्ञान धारी॥

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्मधुरन्धराचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

सवत्र निश्छद्मदशासु वल्लीप्रतानमानमारोहति चित्तभूमौ।
तपोयमोद्भूतफलेरवन्ध्या, शाम्यांबुसिक्ता तु नमोऽस्तु तेभ्यः ॥५८५॥

भाषा–परम निष्कपट चित्त भूमी सम्हारे, लता धर्म वर्धन करे शांति धारैं।
करम अष्ट हन मोक्ष फलको विचारें, जजूं मैं गुरूको सु ज्ञान धारैं॥

ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्मवरिष्ठाचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

भाषासमित्या भयलोभमोहमूलङ्कसत्यादनुभूनया च। हितं मितं भाषयतां मुनीनां, पादारविंदद्वयमर्चयामि

भाषा–न रुष लोभ भय हास्य नहिं चित्त धारे, वचन सत्य आगम प्रमाणे उचारे।
परम हितमित मिष्ट वाणी प्रचारी, जजूं मैं गुरूको सु समता विहारी ॥५८६॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मप्रतिष्ठिताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

न लोभ रक्षोऽभ्युदयो न तृष्णागृद्धी पिशाच्यौ सविधं मदेनः।
तस्मात् शुचित्वात्मविभा चकास्ति, येषां तु पादस्थलमर्चयेऽहं ॥५८७॥

भाषा–न है लोभ राक्षस न तृष्णा पिशाचा, परम शौच धारैं सदा जो अजाचो।
करैं आतम शोभा स्व संतोष धारी, जजूं मैं गुरूको भवातापहारी॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

मनोवचःकायभिदानुमोदादिभङ्गनश्चेन्द्रियजन्तुरक्षा। वर्तंति सत्संयमबुद्धिधीरास्तेषां सपर्याविधिमाचरामि॥

भाषा–न संयम विराधें करैं प्राणिरक्षा, दमैं इन्द्रियोंको मिटावैं कुइच्छा।

निजानन्द राचें खरे संयमी हो, जजू मैं गुरूको यमी अरु दमी हो ॥५८८॥

ॐ ह्रीं उत्तमद्विविधसंयमपात्राचार्यपरमेष्ठिभ्यो अघ निर्वपामीति स्वाहा

तपोविभूषा हृदयं बिभर्ति, येषां महाघोरतपोगुणाग्रयाः ।

इन्द्रादिधैर्यच्यवनं स्वतस्त्यं, तथा युता एव शिवैषिणः स्युः ॥

भाषा—तपो भूषण धारते यति विरागी, परम धाम सेवी गुणग्राम त्यागी ।

करें सेव जिनकी सु इन्द्रादि देवा, जजू मैं चरणको लहूं ज्ञान मेवा ॥ ॐ ह्रीं उत्तमतपोऽतिशयधर्मसं० पर०

समस्तजतुष्वभय प्रायसंपत्करी ज्ञानशुद्धिविशिष्टा धर्मौषधीशा अपिते मुनीशास्त्यागेश्वरा द्रातुं मनोमलानि ॥

अभयदान देते परम ज्ञान दाता, सुधर्मौषधी बाटते आत्म ध्याता ।

परम त्याग धर्मी परम तत्त्व मर्मी, ज मैं गुरूको शमूं कर्म गर्मी ॥ ५९० ॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मप्रधानाचार्यपरमेष्ठिभ्यो अ निर्वपामीति स्वाहा ।

आत्मस्वभावादपरे पदार्था, न हेऽथवाऽहं न परस्य बुद्धिः ।

येषामिति प्राणघति प्रमाणं, तेषां पदाब्जौ करवाणि नित्य ।५९१॥

भाषा—न पर वस्तु मेरी न संबन्ध मेरा, अलख गुण निरञ्जन शमी आत्म मेरा ।

यही भाव अनुपम प्रकाशे सुध्यानं, जजूं मैं गुरूको लहूं शुद्ध ज्ञानं ॥ ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्मसं०चा०प०

रंभावशा यन्मनसो विकारं, कर्तुं न शक्ताऽत्मगुणानुभावान् ।

शीलेशतामादधुरुत्तमार्था, यजामि तानार्यवरान् मुनीन्द्रान् ।५९२।

भाषा—परम शील धारी निजाराम चारी, न रंभा सु नारी करे मन विकारी ।

परम ब्रह्मचर्या चलत एकतानं, जजू मैं गुरूको नमो पापहानं । ॐ ह्रीं उ०ब्र०महानु० धर्मसहितोपाचार्यपरमे०

संरोधनान्मानसभङ्गवृत्त, विकल्पसङ्कल्पपरिक्षयाच । शुद्धोपयोगं भजतां मुनीनां, गुप्तिं प्रशस्यात्र यजामहे तान्

भाषा—मनः गुप्तिधारी विकल्प प्रहारी, परम शुद्ध उपयोगमें नित विहारी ।

निजानन्दसेवी परम धाम वेवी, जजू मैं गुरूको धरम ध्यान टेवी ।।५९३॥ ॐ ह्रीं मनोगुप्तियुक्ताचार्यप०

धर्मोपदेशात्तदते कथाया, आभषणात् संभ्रमतादिदोषैः ।

वियोजनाद् ध्यानसुधैकपानाद्, गुप्तिं वचोगामटितान् यजामि ॥५९४॥

भाषा—वचन गुप्तिधारी महासौख्यकारी, करें धर्म उपदेश संशय निवारी।
सुधा सार पीते परम ध्यान धारी, जजूं मैं गुरूको सदा निर्विकारी॥ ॐ ह्रीं वचनधारिकाचार्यपरमे०

वन्याः समिद्धिरचितां दृषदुत्कीर्णामिवांगपतिमां निरीक्ष्य।
कण्डूतिनांगानि लिहन्ति येषां, धाराग्रमर्घेण यजामि सम्यक्॥५९५॥

भाषा—अचल ध्यान धारी खड़ी मूर्ति प्यारी, जजू खुजावें मृगी अंग अपना सम्हारी।
धरी काय गुप्ति निजानन्द धारी, जजूं मैं गुरूको सु समता प्रचारी॥ ॐ ह्रीं कायगुप्तिसंयुक्ताचार्यपरमे०

सामायिकं जाहति नोपदिष्टं, त्रिकालजातं ननु सर्वकाले।
रागक्रुधोर्मूलनिवारणेन, यजामि चावश्यककर्मधातृन्॥५९६॥

भाषा—परम साम्य भावं धरें जो त्रिकालं, भरम राग द्वेष मद मोह टालं।
पिवें ज्ञान रस शांति समता प्रचारी, जजूं मैं गुरूको निजानन्द धारी॥ ॐ ह्रीं सामायिकावश्यककर्मधारि०

सिद्धश्रुति देवगुरूश्रुतानां, स्मृतिं विधायापि परोक्षजातं।
सद्वन्दनं नित्यमपार्थहानं, कुर्वंति तेषां चरणौ यजामि॥५९७॥

भाषा—करें वन्दना सिद्ध अर्हन्त देवा, मगन तिन गुणोंमें रहें सार लेवा।
उन्हींसा निजातम जु अपने विचारें, जजूं मैं गुरूको परम ध्यान धारें॥ ॐ ह्रीं वन्दनावश्यकनिरताचार्यप०

तेषां गुणानां स्तवनं मुनींद्रा, वचोभिरुद्धूतमनोमलांकैः।
कुर्वंति चावश्यकमेव यस्मात् पुष्पांजलिं तत्पुरतः क्षिपामि॥५९८॥

भाषा—करें संस्तवं सिद्ध अरहन्त देवा, करें गान गुणका लहें ज्ञान मेवा।
करें निर्मलं भावको पाप नाशें, जजूं मैं गुरूको सु समता प्रकाशे॥ स्तवनावश्यकसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठि०

मलोत्सृजादौ कृतनाप्रदोष प्रतिक्रमेणापनुदन्ति वृद्धं।
साधुं समुद्दिश्य निशादियोगदोषान् जहत्यर्चनया धिनोमि॥५९९॥

भाषा—लगे दोष तन मन वचनके फिरनसे, कहें गुरु समीपे परम शुद्ध मनसे।
करें प्रतिक्रमण अर लहें खण्ड सुखसे, जजूं मैं गुरूको छुटूं सर्व दुःखसे॥ ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणावश्यकनिर०

स्वो नाम चात्माऽध्ययते यदर्थः, स्वाध्याययुक्ता निजभानुबुद्धः।

श्रुतस्य चिन्ताऽपिदर्थबुद्धिस्तामाश्रये स्वामिमलार्थसिद्ध्य ॥६००॥

भाषा—करें भावना आत्मकी ज्ञान ध्यावें, पढ़ें शास्त्र रुचिसे सुबोधं बढ़ावें।
यही ज्ञान सेवा करम मल छुड़ावे, जजूं मैं गुरूको अबोधं हटावे ॥ ॐ ह्रीं स्वाध्यायावश्यककर्मनिरताचार्यप०

भुजप्रलंबपादिविधिज्ञतायाः, पौरस्त्यमाध्याधिगमं वहन्तः।
व्युत्सर्गमात्रा वशिनः कृतार्थो, अस्मिन् मखे यान्तु विधिज्ञपूजां ॥६०१॥

भाषा—तजें मय ममत्व शरीरादि सेती, खड़े आतम ध्यावें छुटे कर्म रेती।
लहैं ज्ञान भेदं सु व्युत्सर्ग धारें, जजूं मैं गुरूको स्व अनुभव विचारें ॥

ॐ ह्रीं व्युत्सर्गावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

गुणोद्देशादेषा प्रणिधिवशतोऽनंतगुणिनां। कृता ह्याचार्याणामपचितिरियं भावबहुला ॥
समन्तात् संस्मृत्य श्रमणमुकुटानर्घमलघु। प्रपूर्त्त संहब्धं मम मखविधिं पूरयतु वै ॥६०२॥

भाषा दोहा—गुण अनन्त धारी गुरू, शिवमग चालन हार। संघ सकल रक्षा करे, यज्ञ विघ्न हरतार ॥

ॐ ह्रीं अंजनप्रतिष्ठोद्यापने पूजा (मुख्य) षष्ठवलयोन्मुदित आचार्यपरमेष्ठिभ्योपूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

इस तरह पूजा करके एक नारियल छठे वलयमें या मण्डलके किनारे रक्खे।

अब सातवें वलयमें स्थापित उपाध्याय परमेष्ठीके २५ गुणोंकी पूजा करनी।

आचाराङ्गं प्रथम मागरमुनीशाचरणभेदकथं। अष्टादशसहस्रपदं यजामिसर्वोपकारसिद्ध्यर्थ ॥६०३॥

भाषा द्रुतविलम्बित छन्द—प्रथम अङ्ग कथन आचारको, सहस अष्टादश पद धारतो।
पढ़त साधु सु अन्य पढावते, जजूं पाठकको अति चावसे ॥

ॐ ह्रीं अष्टादश सहस्रपदकाचाराङ्गज्ञाताउपाध्याय परमेष्ठिभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

सूत्रकृताङ्गं द्वितीय षट्त्रिंशत्सहस्रपदकृतमहितं। स्वपरसमयविधानं पाठकपठित यजामि पूजार्ह ॥६०४॥

भाषा—द्वितीय सूत्रकृतांग विचारते. स्वपर तत्त्व सु निश्चय लावते।
पद छत्तीस हजार विशाल है, जजूं पाठक शिष्य दयालु हैं ॥

ॐ ह्रीं षट्त्रिंशत्सहस्रपदसंयुक्तसूत्रकृतांगज्ञाताउपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

स्थानांग द्विकचत्वारिंशत्पदकं षडर्थहृद्यासरणेः, एकादिसुभेदयुजः कथकं परिपूजये वसुभिः ॥६०५॥

भाषा-तृतीय अङ्ग स्थान छः द्रव्यको, पद हजार वियालिस धारतो ।
एक द्वै त्रय भेद बखानता, जजूँ पाठक तत्त्व पिछानता ॥
ॐ ह्रीं द्विचत्वारिंशत्पदसंयुक्तस्थानांगज्ञाताउपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
समवायाङ्गं लक्षैकं चतुरितषष्टीसहस्रपदविशदं । द्रव्यादिचतुष्टयेन तु साम्योक्तिर्यत्र पूजये विधिना ॥६०६॥
भाषा-द्रव्य क्षेत्र समय अर भावसे, साम्य झलकावे विस्तारसे ।
लख सहस्र चौसठ पद धारता, जजू पाठक तत्त्व विचारता ॥
ॐ ह्रीं एकलक्षचतुःषष्टिपदन्यासमहस्रसमवायांगज्ञाताउपाध्याय मे ष्ठिनेऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
व्याख्याप्रज्ञप्त्यंगं द्विलक्षसहिताष्टविंशतिसहस्रपदं । गणधरकृतषष्टिसहस्रप्रश्नोक्तियत्र पूज्यते महसा ॥६०७॥
भाषा-प्रश्न साठ हजार बखानता, सहस अठविंशति पद धारता ।
द्विलख और विशद परकाशता, जजूँ पाठक ध्यान समहारता ॥
ॐ ह्रीं द्विलक्षअष्टविंशतिपदसहस्रव्याख्याप्रज्ञप्त्यंगज्ञाताउपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा।
ज्ञातृधर्मकथांगं शरलक्षसषट्कपञ्चाशत पदसहित वृषचर्चाप्रश्नोत्तरपूजित महये ॥६०८॥
भाषा धर्म चर्चा प्रश्नोत्तर करे, पांच लाख सहस्र छप्पन धरे ।
पद सु मध्यम ज्ञान बढ़ावता, जजू पाठक आतम ध्यावता ॥
ॐ ह्रीं पंचलक्षषट्पंचाशतसहस्रपदमङ्गज्ञातृधर्मकथांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
उपासकपाठकशिवलक्षसमसप्ततिसहस्रपदभंगं । (?)
व्रतशीलाधानादिक्रियाप्रवीणं, यजामि सलिलाद्यैः ॥६०९॥
भाष-व्रत सुशील क्रिया गुण श्रावका, पद सुलक्ष इग्यारह धारका ।
सहस सप्तति और मिलाइये, जजूं पाठक ज्ञान बढ़ाइये ॥
ॐ ह्रीं एकादशलक्षसप्ततिसहस्रपदशोभितोपासकाध्ययनांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।
अन्तकृदंगं दश दश साधुजनोपसर्गकथकमधितीर्थम् ।
तेषां निःश्रेयसलंभनमपि, गणधरपठित यजामि मुदा ॥६१०॥
भाषा-दश यती उपसर्ग सहन करे, समय तीर्थंकर शिवतिय वरे ।

सहस अठाइस लख तेइसा, पद धरें पाठक जिन भाषिता ॥

ॐ ह्रीं त्रिविंशतिलक्षअष्टाविंशतिसहस्रपदशोभितांतकृतदशाङ्गधारकोपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

उपपादानुत्तरकं द्विचत्वारिंशल्लक्षैसहस्रपदं । (?) विजयादिषु नियमेन मुनिगतिकथकं यजामि महनीय ॥

भाषा-दश यती उपसर्ग सहन करे, समय तीर्थ अनुत्तर अवतरे ।

सहस चव चालिस लक्ष बानवे, पद धरे पाठक बहु ज्ञान दे ॥६११॥

ॐ ह्रीं द्विनवतिलक्षचतुश्चत्वारिंशत्पदशोभितानुत्तरोपपादिकांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रश्नव्याकरणांगं त्रिणवतिलक्षाधिषोडशसहस्रपदं । नष्टोद्दिष्टंसुखदुःखगतिभाविकथं पूजये चरुफलाद्यैः ॥

भाष-प्रश्नव्याकरणांग महान थे, सहस सोलह लाख तिरानवे ।

पद धरे सुख दुःख विचारता, जजूं पाठक धर्म प्रचारता ॥६१२॥

ॐ ह्रीं त्रिनवतिलक्षषोडशसहस्रपदशोभितप्रश्नव्याकरणांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अंग विपाकसूत्रं कोट्येकचतुरशीतिसहस्रपदं । कर्मोदयसत्वानानोदीर्णादिकथं यजनभागतोऽर्चामि ॥६१३॥

भाषा-सहस चवरसि कोटि एक पद, धरत सूत्रविपाक सुज्ञान प्रद ।

करम-बन्ध उदय सत्वादिक कथं, जजूँ पाठक जोते कामरथ ॥

ॐ ह्रीं एककोटिचतुरशीतिसहस्रपदशोभितविपाकसूत्रांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

उत्पादपूर्वकोटिपदपद्धतिजीवसुखषट्कं । निजनिजस्वभावघटितं कथयतमर्चामि भक्तिभरः ॥६१४॥

भाषा-कथन षट् द्रव्योंकी भारता, एक कोटि पदको धारता ।

पूर्व है उत्पाद सु जानकर, जजू पाठक निज रुचि ठान कर ॥

ॐ ह्रीं उत्पादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

अग्रायणीयपूर्वषण्णवतिकोटिपद तु यत्र तत्वकथा । सुनयदुर्णयतत्स्वप्रामाणग्रपरूपकं प्रयजे ॥६१५॥

भाषा-सुनय दुर्नय आदि प्रमाणता, नवति छ कोटि पद धारता ।

पूर्व अग्रायण विस्तार है, जजू पाठक भवदधि तार है ॥

ॐ ह्रीं अग्रायणीयपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

वीर्यानुवादमधिसप्ततिलक्षपादं, द्रव्यस्वतत्स्वगुणपर्ययवादमथ्य ।

तत्तत्त्वभावकतिवीर्यविधानदक्षं, सम्पूजये निजगुणप्रतिपत्तिहेतोः ॥६१६॥

भाषा—द्रव्य गुण पर्याय बल कथत है, लाख सत्तर पद यह भरत है।
पूर्व है अनुवाद सु वीर्यका, जजूं पाठक यतिपद धारका ॥

ॐ ह्रीं वीर्यानुवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा

नास्त्यस्तिवादमधिषष्टिलक्षपादं सप्तोद्भवभंगरचनाप्रतिपत्तिमूल। स्याद्वादनीतिमिरुदस्तविरोधमात्रं संपूजये जिनमतप्रबलैकहेतुम् ॥

भाषा—नास्ति अस्ति प्रवाद सुअंग है, साठ लख मध्यम पद संग है। सप्तभंग कथत जिन मार्गकर, जजूं पाठक मोहनिवारकर ॥

ॐ ह्रीं अस्तिनास्तिप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानप्रवादमामकोटिपदं तु हीनमेकेन नाणमितभावविवरणांकं कुज्ञानरूपमपि नश्वरं समर्चे यत्पाठकः क्षणमिते समये विचार्यम् ॥

भाषा—ज्ञान आठ सुभेद प्रकाशता, एककम कोटीपद धारता।
सतत ज्ञान प्रवाद विचारता जजूं पाठक संशय टारता ॥

ॐ ह्रीं ज्ञानप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्यप्रवाद्मधिकं रसपादजातैः कोटीपदं निखिलसत्यविचारदक्षं।
श्रोतृवक्तृगुणभेदकथापि यत्र तं पूर्वमुख्यमभिवादय उक्तमंत्रैः ॥

भाषा—कथत असत्य सु भावको कोटि अरु षट्धारी पूर्वको।
पठत सत्यप्रवाद जिनागमा, जजूं पाठय ज्ञाता आगमा ॥६१९॥

ॐ ह्रीं सत्यप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यो ऽर्घं नि० स्वाहा (१६०)

आत्मप्रवादरसविंशतिकोटिपादान, जीवस्य कर्तृगुणभोक्तृगुणादिवादान्।
शुद्धेतरप्रणयतत्कथनं तु येषु वंदामहे तदभिलाषगुणप्रवृत्त्यै ॥ ६२० ॥

भाषा—सकल जीव स्वरूप विचारता कोटि पद छव्वीस सुधारता।
पठत आत्मप्रवाद महानको, जजूं पाठक दुर्धनि हानको ६२०॥

ॐ ह्रीं आत्मप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१६१)

कर्मप्रवादकमथे त्रिंशुसंख्यकोटीसंख्यानशीतिलयुतान् वसुकर्मणां च ।
सत्थापवर्तणनिर्जरसुखानुभावे, पश्चात् स्थितानमिलपूजनया धिनोमि ॥६२१॥

भाषा—कर्मबंध विधान बखानता, कोटि पद अस्सीलाख धारता ।
पठत कर्म प्रवाह सुहानसे, जजूं पाठक शुद्ध विधानसे ॥६२१॥

ॐ ह्रीं कर्मप्रवादपूर्वज्ञाककोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० । (१६४)

प्रत्याख्यातेश्चतुरशीतिसुलक्षपद्यान् निक्षेपसंस्थितिविधानकथप्रसिद्धान् ।
न्यासप्रमाणलपलक्षणसंयुजोऽर्थे यागार्चने सुखकरस्तपनोपयुक्तान् ॥६२२॥

भाषा—नयप्रमाण सुन्यास विचारता, लाख पद चौरासी धारता ।
पूर्व प्रत्याहार जु नाम है, जजूं पाठक ज्ञानाराम है ॥६२२॥

ॐ ह्रीं प्रत्याहारपूर्वज्ञाककोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० स्वाहा । (१६५)

विद्यानुवादसुवि चन्द्रसुकोटिकाष्टालक्षा पद्या यदुधिसंज्ञविधिप्रकारः ।
संरोहिणीप्रभृतिदीर्घविद्या, प्रज्ञप्तस्तं पूजये गुरुमुखांबुजकोशजात ॥६२३॥

भाषा—मंत्र विद्याविधिको साधता, लक्ष दशकोटि पद धारता ।
पूर्व है अनुवाद सुज्ञानका, जजूं पाठक सन्मति दायका ॥६२३॥

ॐ ह्रीं विद्यानुवादपूर्वज्ञाककोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० स्वाहा । (१६६)

कल्याणवादमनघश्रुतमंगलघ्नं, षड्विंशतिप्रमितकोटिपदं समर्चे ।
यत्रास्ति तीर्थकरकामवर्तखिखडि,जन्मोत्सवादिविधिरुत्तमभावना च ॥६२४॥

भाषा—पुरुष त्रेशठ आदि महानका, कथन वृत्त सकल कल्याणका ।
कोटि छब्बीस पदको धारता, जजूं पाठक अघ सब टारता ॥

ॐ ह्रीं कल्याणवादपूर्वज्ञाककोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घं नि० स्वाहा । (१६७)

प्राणप्रवादयतां नराणां, त्रिभ्रप्रमाणमितकोटिपदाभियुक्तं ।
काऽऽर्तिभवेन्निरयघोरभवस्य, चायुर्वेदादिसुस्वरसूनं परिपूजयामि ॥६२५॥

भाषा—कथन भेद सुवैद्यक शास्त्रका, कोटि तेरह पदका धारका ।

पूर्व नाम सुप्राण प्रवाद है, जजूं पाठक सुर नत पाद है ।१६८॥

ॐ ह्रीं प्राणप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि० । (१६८)

क्रियाविशालनवकोटिपदैर्युक्तं सुसंगीतकलाविशिष्टं छन्दोगणाद्यानमावयंतमध्यापकानम्र विधीयजामि ६२६

भाषा-कथन छंदकला संगीतको, कोटि नव पद अध्यम रीतको।

पूर्व नाम सु क्रिया विशाल है, जजूं पाठक ज्ञानदयाल है ॥६२६॥

ॐ ह्रीं क्रियाविशालपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि० । (१६९)

त्रैलोक्यबिंदौ शिवतत्वचिंता, सार्द्धा सुकोटी द्विदशप्रमाणाः।

पदाः त्रिलोकीस्थितिसिद्धिधानमभ्यार्चये भ्रांतिविनाशनाय ।६२७॥

भाषा-तीन लोक विधान विचारता, कोटि अर्द्ध सु द्वादश धारता।

पूर्वबिन्दु त्रिलोक विशाल है, जजूं पाठक करत निहाल है ।।६२७॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यबिंदुपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि० । (१७०)

इत्थं श्रीश्रुतदेवतां जिनधराम्भोध्युद्गतां गृद्धिभृन्मुख्यैर्ग्रंथनिबद्धाक्षरकृतामालोकयन्तीं त्रयं।

लोकानां तदवाप्तिपाठनधियोपाध्यायशुद्धात्मनः कृत्वाराधनसिद्धिधिधूतमहार्घेणार्चये भक्तितः॥६२८॥

भाषा—अंग एकादश पूर्वदश, चार सुभागक साध। उजूं गुरुके चरण को, यजन सु अव्याबाध ॥

ॐ ह्रीं अस्मिन् [illegible] एकादशांगश्रुतदेवतास्यस्तदाराधकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यश्च ।

पूर्णार्घं नि०

अब एक नारियल वलयमें मंडलके किनारे रखके आगे आठवें वलयमें स्थापित साधु परमेष्ठीके २८ गुणोंकी पूजा करनी।

जीवाजीवद्विरधिकरणव्यासदोषव्युदासात्, सूक्ष्मस्थूलव्यवहृतिहतेः सर्वथात्यागभावात्।

सूक्ष्माणां व्यकलविरतिं संदधानान्मुनींद्रा—नाहिंसाख्यव्रतपरिवृतान् पूजये भावशुद्ध्या ॥६२९॥

भाषा—[illegible]—तजे सु रागद्वेष भाव शुद्ध भाव धारते, परम स्वरूप आपका समाधिसे विचारते।

करैं दया सुप्राणि जंतु चर अचर बचावते, जजों यति महान प्राणिरक्ष व्रत निभावते ॥

ॐ ह्रीं अहिंसामहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्याभाषामलविगमात प्राप्तवाक्शुद्ध्युपेतान् स्याद्वादेशान् विविधसनयैर्धर्ममार्गप्रकाशम्।

संकुर्वाणानांतचरणधीदूरगानात्मसंवित्–सम्राज्यस्तांश्चरूपलगणैःपूजयाम्यध्वरेऽस्मिन् ॥६३०॥

भाषा–असत्य सर्व त्याग वाक् शुद्धता प्रचारते, जिनागमानुकूल तत्त्व सत्य सत्य धारते।
अनेक नय प्रकारसे वचन विरोध टारते, जजों यति महान सत्यव्रत सदा सम्हारते ॥६३०॥

ॐ ह्रीं अनृतत्यागमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्य ऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१७२)

आकर्णाऽये ध्वनि? शिखपदगृहे रतुकामाः पृथक्त्वं देहात्मीयं करगतमिवाध्यक्षमादर्शयंतः।
प्राणग्राह्यं तृणमपि ... परकीयं त्यजमममतापतां ये चरणवरिवस्याप्रशक्ता मुनींद्राः ॥६३१॥

भाषा–अचौर्यव्रत महान ... शौच भाव भावते, जजों यती सदा सु ज्ञान ध्यान मन रमावते।
स्वतृप्त हैं ... सौख्य पावते, जजों यती सदा सु ज्ञान ध्यान मन रमावते ॥६३१॥

ॐ ह्रीं महाव्रत... कसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१७३)

निर्यन्मर्त्यामरगतिजुषः ... स्त्रियः काष्ठचित्रा–लेप्याश्मान्याश्चिदचिदुभियस्तास्वपलात्रियोगं।
स्वाप्ने ... दृशि ... तिचुद्रः स्मरंतो (?) ये वै शीलं परिहृतममुस्तान्यजेऽहं त्रिशुद्ध्या ॥६३२॥

भाषा–सु ब्रह्मचर्य व्रत महा ... शील पालते, न काष्ठमय कलत्र देख भामनी विचारते।
मनुष्यणी सु पशुतिय ... न मन रमावते, जजों यती न स्वप्नमाहिं शीलको गमावते॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्यव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१७४)

रागद्वेषप्रकृतपरावृत्तकोपांतरंगा ये बाह्याः स्युर्दशधा ते ह्यकिंचन्यभावात्।
नापि स्थैर्यं ह्युपकरणग्राहिणो स्वांतसंस्थे, अथा येषां चरणधरणि पूजयाम्यादरेण ॥६३३॥

भाषा–न राग द्वेष आदि अतरंग संग धारते, न क्षेत्र आदि बाह्य संग एक भी सम्हारते।
सदैं सुभावना ... आप पर पृथक् विचारते, जजों यती ममत्व हीन आकृपता प्रचारते ॥६३३॥

ॐ ह्रीं परिग्रहत्यागधारकसाधुपरमेष्ठिभ्य ऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१७५)

ईर्यापथाविभागमत्वाद्येतस्तयदर्हाद्ध्रुवयोगा–भाग्रच्छद्रोयुगमितधरालोकनेनापि येषां।
वर्षाकालार्थनियमभूजंतुजालि विहाय त ... गुरुनतिवशाद् गच्छतोऽर्चे यतींद्रान् ॥६३४॥

भाषा–सुचार हाथ भूमि अग्र देख पाय धारते, न जीव घात हाय यत्न सार मन विचारते।
सुचार मास वृष्टि काल एक थल विराजते, जजूं यती सु सन्मती जो ईर्या सम्हारते॥

ॐ ह्रीं ईर्यासमितिगणक्रमाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१७६)

लोभक्रोधारिगणजयाद् भीतिमोहोपमर्दा-निःशल्याख्यान् जिनपचिसुधाकंठपानप्रपुष्टान् ।
याथातथ्यं श्रुतनिगमयोर्ज्ञानःपङ्क्तौ वाग्भिप्राय वचनसमितिधारकान् पूजयामि ॥६३५॥

भाषा—न क्रोध लोभ हास्य भय कुगाय साम्य धारते, वचन सुमिष्ट इष्ट जिन प्रमाण ही निवारते ।
यथार्थ शास्त्र ज्ञायका सुधा सु आतम पीवते, जजूं यतीश दर्व भाव तत्त्व माहिं जीवते ॥६३५॥

ॐ ह्रीं भाषासमितिनामाक्रमाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१७७)

षट्चत्वारिंशदतिचरणाक्षेपत्यागयोगात्, दोषाणां चातुर्दशमलभुवां क्षपणात् कायहानिं ।
कल्पासीनामसूनविषेणारसाललोग्र कृतार्थो (?) मन्त्रानःस्तेऽशनविरलगः पांतु पादाश्रितं मां ॥६३६॥

भाषा—छियाल दोष छयालिसों सु टार ग्रास लेत हैं, पड़े जु अन्तराय तुर्त ग्रास त्याग देत हैं ।
मिले जु भोग पुण्यसे उसीमें सब्र धारते, जजूं यताश काम जीत रागद्वेष टारते ॥

ॐ ह्रीं एषणासमितिधारकमाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१७८)

वस्तुग्राह्यं स्वं परिणामादानिक्षेपयोगा (? —भावः पूर्वं दृष्टपरिचयाद्विषते शुद्ध एवं ।
पिच्छ कुण्डाग्रहणमपि ये रक्षणायारहेनोः कुर्वन्तोऽप्यत्र निखिलदृशस्तान्यजे सत्यमित्यै ॥ ६३७ ॥

भाषा—धरें उठाय वस्तु देख शाध खूब लेन हैं, न जन्तु कोय कष्ट पाय इम विचार लेत हैं ।
अतः सु मोर पिच्छिका सुमार्जिका सुधारते, जजूं यता दया निधान जीव दुःख टारते ॥

ॐ ह्रीं आदाननिक्षेपणसमितिधारकमाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा (१७९)

व्युत्सर्गाख्यां समितिमधृणां नासिकानेत्रपायू-पस्थस्थानान् मलहानिविधौ सूत्रमार्गानुकूलं ।
रक्षन्तोऽन्यानपि सदयता पोषयन्तोऽप्युदग्रां, धन्या दान्तेन्द्रियधारका आर्हदर्चनां मे ॥ ६३८ ॥

भाषा—धरैं जु अङ्ग नेत्र नासिकादि मल सु देखके, न होय जन्तु घात थान शुद्धता सुपेखके ।
परम दया विचार सार व्युत्सर्ग साधते, जजूं यतीश चाह दाह शांति पथ बुझावते ॥

ॐ ह्रीं व्युत्सर्गसमितिपालकमाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा (१८०)

उष्णः शीतो मृदुलकठिनौ स्निग्धरूक्षौ गुरुर्वा, स्तोकः स्पर्शोऽप्यनय उदितस्पर्शनात् सप्रमादं ।
रागद्वेषावपि न दधतश्चेतनाचेतनेषु, किं च स्त्रीणां वपुषि विषये तान्यजेहं मुनीन्द्रान् ॥ ६३९ ॥

भाषा—न उष्ण शीत मृदु कठिन गुरु लघू स्पर्शते, न चीकने रूक्ष वस्तुसे मिलाप पावते ।
न रागद्वेषको करें समान भाव धारते, जजूं यती इसे अपनो ज्ञान भाव सारते ॥
ॐ ह्रीं स्पर्शनेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१८१)
भिष्टतिक्तकटुकषायाम्ललवण एवं रसजाग्राहुः, प्रोक्तो रसनविषयस्तत्र रागद्वेषौ ।
त्यक्त्वात्मानं प्रकृतिनियतेः पुद्गलस्य स्वभावं, संजानन्तो मुनिपरिवृढाः पांतु आपच्चिनाशे ॥ ६४० ॥
भाषा—न मिष्ट तिक्त लोण कटुक आम्ल स्वाद चाहते, कषाय न रागद्वेष शौच आपको निवारते ।
सुजानते सुभाव पुद्गलादि भाव धारते जजूं यती भला जु चाह दाहको निवारते ॥
ॐ ह्रीं रसनेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमे ष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१८२)
घ्राणेन्द्रियातुष्टिविकुर्वदाद्विष उत्कट-दुर्गन्धस्य प्रकृतिनियमात् सुप्रसिद्धोऽयलक्ष्यः ।
ज्ञात्वात्मा ह्यमुमसुभगद्वेषगन्धौ विजानन्, वस्तुभावं भजति समतां तं यतीन्द्रं यजेऽहं ॥ ६४१ ॥
भाषा—जगत पदार्थ पुद्गलादि आत्म गुण न त्यागते, सुगन्ध गन्ध दुःखदाय साधु जहां पावते ।
न रागद्वेष भाव घ्राणका विषय निवारते, जजूं यतीश एक रूप शांतता प्रचारते ॥
ॐ ह्रीं घ्राणेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमे ष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा (१८३)
चक्षुर्दृहय नयनविषये तेषु नैष्ठ्यानना ये जन्मारातिं त्रिजगद्भितश्चक्रवर्तीपानात् ।
कृष्णे नीले हरितकपिशारजुसे पौद्गलेक्षणोऽप्यपारोऽमन्निति परिणतः पुद्गलेऽस्मै अयाम ॥ ६४२ ॥
भाषा—सफेद लाल कृष्ण पीत नील रंग देखते, स्वरूप वा कुरूप देख वस्तु रूप पेखते ।
करें न रागद्वेष भाव भावको सम्हारते, जजूँ यती महान चक्षु रागको निवारते ॥
ॐ ह्रीं चक्षुरिन्द्रियविकार विरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१८४)
एकः स्तोत्रं रचयितु मुदा गद्यपद्यानवद्यर्शंकयैरन्यः श्रवण जननी तेऽद्य भार्या समेति ।
श्रुत्वा शब्दं भर्त्सि जडतामेष्य तोषं न कोपं, धत्ते शान्तोऽप्यमरमहिमस्तस्य पूजां विदधमः ॥ ६४३ ॥
भाषा—करे स्तुती बनाय एक गद्य पद्य भारते, कहे असभ्य बात एक क्रूरता प्रचारते ।
न रोष तोष धारते पदार्थको विचारते, जजूं यती महान कर्ण रागद्वेष टारते ॥
ॐ ह्रीं श्रोत्रेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमे ष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (१८५)

सामर्थ्यं यस्य स्फुरति हृदये निर्व्यलीकं कदाचित्, दायातेऽपि ध्रुवमशुभसमयावद्धपाकावतारे (?)
घोरोपद्रावसदसि वपुसि स्पृष्टस्मृति सन्दधानो, बाहुभ्यामंबुधिमिव तरत्येष साधुमयाचर्यः ॥ ६४४ ॥
भाषा—धरैं महान शान्तता न रागद्वेष भावते, चलं नहीं सुयोगसे विराट कष्ट आवते।
तरैं समुद्र कर्मको जहाज ध्यान खेवते, यजूं यता स्वरूप मांहि बैठ तत्त्व वेवते ॥
ॐ ह्रीं सामायिकावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१८६)
स्मारं स्मारं प्रकृतिसरसानां तु पंचेश्वराणां, प्रत्यक्षं वा मननविषयं वन्दमानस्त्रिकालं।
कर्मव्यूहक्षपणसमयं धर्मतोयात्मवन्तं शुद्धस्फारं गमयति शिवं तं महांतं यजामि ॥ ६४५ ॥
भाषा—करैं त्रिकाल वन्दना सुपूज्य सिद्ध साधुको, विचार बार बार आत्म शुद्ध गुण स्वभावको।
करैं जु नाश कर्म जो कि मोक्षमार्ग रोकते, यजूं यती महान साथ नाग नाग ढोकते ॥
ॐ ह्रीं वन्दनावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१८७)
चेतोरक्षाप्रवणमनिशं कर्मणो नीर्थनाथ—पादाब्जेषु प्रतिगुणगणे दत्तचित्तो मुनीन्द्रः।
तेषां स्तोत्रं पठति परमानन्दमात्मानुभावं, किं वा शुद्धं स्तुवति स यथा पूज्यते तद्गुणाप्त्यै ॥६४६॥
भाषा—करैं सुगान गुण अपार तीर्थनाथ देवके, मन विकारका विडार स्वात्मसार सेवके।
बनाय शुद्ध भाव माल आत्मकंठ डारते, यजूं यता महान कर्म आठ चूर डारते ॥
ॐ ह्रीं स्तवनावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१८८)
कोपाभावोऽथ निशिदिवाहारनीहारकृत्ये, ज्ञाताज्ञातप्रभवकालो जन्तुसंमर्दितः स्यात्।
नित्यं तस्य प्रतिक्रमणतश्चातुरस्य मनः स्वयं यो, दोषजालैर्नहि जुड न तं वारंवार यजामि ॥६४७॥
भाषा—करैं विचार दोष शोध नित्य कार्य साधते, क्षमा कराय सर्व जन्तु जाति कष्ट पावते।
आलोचना सुकृत्यसे स्वपापको मिटावते, यजूं यती महान ज्ञान अम्बुसे नहावते ॥
ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१८९)
नित्यं चेतःकपिरचलतां नेति तत्संयमार्थं स्वाध्यायाख्यैः प्रगुणनिगडैर्बध्यमानोऽथ मह्ये।
मार्गे शुद्धपापपरिणामभागसोपानो, वृत्तिं शुद्धां श्रयति स महात्मार्थतोऽतीन्द्रियबुद्धिः ॥६४८॥
भाषा—रखैं सुथांव मन कपी महान है जु नट खटा, बनाय सांकलान शास्त्र गाठसे जुटावता।

धरैं स्वभाव शुद्ध नित्य आत्मको रमावते जजूं यती उदय महान ज्ञानसूर्य पावते ॥

ॐ ह्रीं स्वाध्यायावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९०)

आमे भांडे कुथितकुणपे यादृशा नश्वदेय-बुद्धिः कार्ये तन्नियमा वीतरागेश्वराणां ।

व्यक्तीकर्तुं शिखरिविपिनान्तस्तनोर्निर्ममत्वे कायोत्सर्गं रचयति मुनिः सोऽत्रपूजां प्रयातु ॥ ६४९ ॥

भाषा—तजैं ममत्व कायका इसे अनित्य जानते जु कांच खण्ड मृत्तिका सु पिण्ड सम प्रमाणते ।

खड़े वनी गुफा महा स्वध्यान प्यार धारते, जजूं यती महान मोह रागद्वेष टारते ॥

ॐ ह्रीं कायोत्सर्गावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९१)

पूते हर्म्ये मणिगणचिताने रूपर्यंकशय्या, माऽयं योगस्थलमृगपतिस्थान गेन्द्रकारे ।

भूध्रप्रवोपरितलभुवि स्वप्नशतिर्कचिदात्त—निद्रो यस्य स्मरणमपि संहन्ति पापं स मेऽर्च्य ॥ ६५० ॥

भाषा—करैं शयन सु भूमिमें कठोर कंकडादिको, कभी नहीं विचारते पलंग खाट पालकी ।

मुहूर्त एक भी नहीं गमावते कुनींदमें, जजूं यतीश सोवते सु आत्म तत्व नींदमें ॥

ॐ ह्रीं भूशयनत्वनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९२)

ग्रीष्मे रेणूत्कर विकरणव्यग्रवातप्रचंडु-धूलिपुंजे मलिनवपुषि त्यक्तमस्कारवांछ ।

अस्नानत्वं द्विजगमशरीरोऽनिधानेऽप येषां लेपां पादांबुजयुगमह पारिजातश्चर्चे ॥ ६५१ ॥

भाषा—करैं नहीं नहान सर्व गात देहका हते पसेव ग्रीष्ममें पड़े न शीत अम्बु चाहते ।

यती प्रबल पवित्र और अन्त शुद्ध धारते जजूं यतीश शुद्ध पार कर्म मैल टारते ॥

ॐ ह्रीं अस्नाननियमधारकसाधुपरमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१९३)

बाल्कं फालं चलनसुपसंत्यागकौपीनखण्ड—कान्तारस्थितेऽप्युपधिसमये नैव वांछन्तपस्वी ।

दैगंबर्यं परमकुशलं जातरूपप्रवृत्तं, अन्वर्थैवं नयति परमानन्दधामीं समर्चे ॥ ६५२ ॥

भाषा—करैं नहीं कबूल छाल वस्त्र खण्ड धोवता, दिगम्बर वस्त्र धार लाज सङ्ग त्याग रोवतो ।

बने पवित्र अङ्ग शुद्ध बालसे विचार हैं, जजूं यतीश काम जीत शील खड्ग धार हैं ॥

ॐ ह्रीं सर्वथावस्त्रत्यागनियमधारकसाधुपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१९४)

क्षौरं शस्त्रोज्जनिपरार्धोलनापात्रमेव (?) जूडा मूर्धन्यतुल्कूमिदा भूतशीर्षाकृतिस्था ।

दोषायैवेति विहितकचोत्पाटनो मुष्टिमात्रात्, साक्षान्मोक्षाध्वनिधृतिपदः पूज्यते श्रोतकर्मा ॥ ६५३ ॥
भाषा–करैं सु केशलोंच मुष्टि मुष्टि धैर्य भावते, लखाय जन्म जन्तुका स्व केश ना बढ़ावते।
ममत्व देहसे नहीं न शस्त्रसे लुभावते, जजूं यती स्वतन्त्रता विहार चित्त रमावते ॥
ॐ ह्रीं कृतकेशलोचननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (१९५)

एकद्वित्रिप्रभृतिदिवसप्रोषधाद्विप्रकर्तु–रास्यम्लानिर्भवति नितरां दन्तशुद्धिं विनाऽत्र।
दौर्गंध्यान्धु वपुषमकृतस्थैर्यमापन्निदानं, जानन् योगं मलिनयति नो तं समर्चे मुनीन्द्रम् ॥६५४॥
भाषा–करैं न दन्तधवन कभी तजा सिंगार अङ्गका, लहैं स्व खानपान एकवार साध्य अङ्गका।
तथापि दंत कणिका महान ज्योति त्यागती, जजूं यतीश शुद्धता अशुद्धता निवारती ॥
ॐ ह्रीं दन्तधावनवर्जननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१९६)

यांचादैन्योदरविघटनादीगतादीनि येषां, निर्मूलतो मनसि च मनालाभलाभांतराये। (?)
तुल्या दृष्टिस्तदपि सकृदेकाह्निभुक्तिप्रमाणं, तेषां धर्म्यावगमस्तुगमत्वाय पादौ यजामि ॥ ६५५ ॥
भाषा–धरें न चाह भोग रोगके समान जानते, शरीर रक्ष काज एकवार भक्त ठानते।
सकल दिवस सु ध्यान शास्त्र पाठमें बितावते, जजूं यती अलाभ अन्न लाभ सा निभावते ॥
ॐ ह्रीं एकभुक्तनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (१९७)

यावद्देह स्थितिधृतिधराशक्तिमङ्गीकरोति, यावज्जंघाबलमचलतां नोज्झिहीते मुनित्वे।
यावत्तथाप्ये तदुपगमने भोजनत्याग एवं, सन्यासस्य ग्रहणमिति यद् यस्य नीतिस्तमर्चे ॥६५६॥
भाषा–खड़े रहे सुलेय अन्न देह शक्ति देखते, न होय बल विहार तब मरण समाधि पेखते।
करें सु आत्म ध्यान भी खड़े खड़े पहाड़ पर, जजूं यती विराजते निजानुभव चट्टान पर ॥
ॐ ह्रीं आस्थितभोजननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा (१९८)

अष्टाविंशतिसद्गुणग्रथितसद्रत्नघाभूषणं, शीलेशिस्थलनुत्ररक्षितवपुः कामेषुभिर्नाहतं।
आर्हंत्यादिपदस्य बीजमनघं येषां परं पावनं, साधूनां समुदायमुत्तमकुलालंकारमाशास्महे ॥६५७॥
भाषा–दोहा–अठविंशति गुण धर यती, शील कवच सरदार। रत्नत्रय भूषण धरें, टारें कर्म प्रहार ॥
ॐ ह्रीं अस्मिन् बिम्बप्रतिष्ठोत्सवे मुख्यपूजार्हअष्टमवलयोन्मुद्रितसाधुपरमेष्ठिभ्यस्तन्मूलगुणग्रामेभ्यश्च पूर्णार्घं नि०।

पूर्णार्घ देकर एक नारियल आठवें वलयपर या मंडलके किनारे रक्खे ।

अब नौमें बलयमें स्थित ४८ ऋद्धिधारी मुनीश्वरोंकी पूजा करनो ।

त्रैलोक्यवर्तिसकलं गुणपर्यायाढ्यं, यस्मिन्करामलकवत् प्रतिवस्तुजातं ।

आभासते त्रिसमयप्रतिषद्धमर्चे, कैवल्यभानुमधिपं प्रनिपत्य मूर्ध्ना ॥ ६६८ ॥

भाषा-दोहा-लोकालोक प्रकाशकर, केवलज्ञान विशाल । जो धारें तिन चरणको, पूजूं नमूं निज भाल ॥

ॐ ह्रीं सकललोकालोकप्रकाशकनिरावरणकैवल्यलब्धिधारकेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा । (१९९)

वक्रर्जुभावघटितापरचित्तवर्तिभावावभासनपरं विपुलर्जुभेदात् ।

ज्ञानं मनोऽधिगतपर्ययमस्य जातं तं पूजयामि जलचन्दनपुष्पदीपैः ॥

भाषा-वक्र सरल पर चित्तगत, मनपर्यय जानेय । ऋजु विपुलमति भेद धर, पूजूं साधु सुध्येय ॥

ॐ ह्रीं ऋजुमतिविपुलमतिमनःपर्ययधारकेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा । (२००)

देशावधिं च परमावधिमेव सर्वावध्यादिभेदमतुलावमदेशपृक्तं ।

ज्ञानं निरूप्य तदवाप्तियुतं मुनीन्द्रं संपूज्य चित्तभवसंशयमाहरामि ॥

भाषा-देश परम सर्वा अवधि, क्षेत्र काल मर्याद । द्रव्य भावको जानता, धारक पूजूं साध ॥

ॐ ह्रीं अवधिधारकेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा । (२०१)

अन्योपदेशमनपेक्ष्य यथा सुकोष्ठे बीजानि तद्गृहपतिर्विनियुज्यमानः ।

ग्रंथार्थबीजबहुलान्यनतिक्रमाणि संधारयन्नृषिवरोऽर्च्यत उत्तममन्त्रैः (?) ॥ ६६१ ॥

भाषा-कोष्ठ धरे बीजानिको, जानत जिम क्रमवार । तिम जानत ग्रन्थार्थको, पूजूं ऋषिगुण सार ॥

ॐ ह्रीं कोष्ठबुद्ध्यर्द्धिप्राप्तेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा । (२०२)

एक पदार्थमुपगृह्य मुखान्तमध्यस्थानेषु तच्छ्रुतसमस्तपदग्रहोक्तिम् ।

पादानुसारिधिषणाद्यभियोगभाजां संपूज्य तन्मतिधरं तु समर्चयामि ॥ ६६२ ॥

भाषा-ग्रन्थ एक पद ग्रह कहीं, जानत सब पद भाव । बुद्धि पाद अनुसारि धर, जजूं सार धर भाव ॥

ॐ ह्रीं पादानुसारीबुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा । (२०३)

कालादियोगम सृत्य यथाप्रमत्र, कोटिप्रदं भवति बीजमनिंद्रियादि ।

वीर्यांतरायशमनक्षयहेतवनेकपादावधारणमतीन् परिपूजयामि ॥ ६६३ ॥

भाषा—एक बीज पद जानके, कोटिक पद जानेय। बीज बुद्धि धारी मुनी, पूजूं द्रव्य सुलेय ॥

ॐ ह्रीं बीजबुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०४)

ये चक्रिसैन्यगजवाजिखरोष्ट्रमर्त्यनानाविधस्वनगणं युगपत् पृथक्त्वात्।

गृह्णन्ति कर्णपरिणामवशान्मुनीन्द्रास्तानर्घयामि क्रतुभागसमर्पणेन ॥ ६६४ ॥

भाषा—चक्री सेना नर पशु, नाना शब्द करात। पृथक् पृथक् युगपत् सुने, पूजूं यति भय जात ॥

ॐ ह्रीं संभिन्नश्रोतृऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०५)

दूरस्थितान्यपि सुमेरुविधुप्रभास्वत्सन्मण्डलानि करपादनखांगुलीभिः।

संस्पर्शशक्तिसहितर्द्धिवशात् स्पृशंतस्तान् शक्तियुक्तपरिणामगतान् यजामि ॥ ६६५ ॥

भाषा—गिरि सुमेरु रविचन्द्रको, कर पदसे छू जात। शक्ति महत धारी यती, पूजूं पाप नशात ॥

ॐ ह्रीं दूरस्पर्शशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०६)

नास्वादयन्ति न च तत्सदने समीहा, तत्रापि शक्तिरमितेति रसग्रहादौ।

ऋद्धिप्रवृद्धिसहितात्मगुणान् सुदूरस्वादावभासनपरान् गणपान् यजामि ॥ ६६६ ॥

भाषा—दूरक्षेत्र मिष्टान्न फल, स्वाद लेन बल धार। ना वांछा रस लेनकी, जजूं साधु गणधार ॥

ॐ ह्रीं दूरास्वादनशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०७)

उत्कृष्टनासिकहृषीकगतिं विहाय, तत्स्थोर्ध्वगन्धसमवायनशक्तियुक्तान्।

उत्कृष्टभागपरिणामविधौ सुदूरगन्धावभासनमतो नियतान् यजामि ॥ ६६७ ॥

भाषा—घ्राणेन्द्रिय मर्यादसे, अधिक क्षेत्र गन्धान, जान सकत जो साधु हैं, पूजूं ध्यान कृपान ॥

ॐ ह्रीं दूरघ्राणविषयग्राहकशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०८)

निर्णीतपूर्णनयनोत्थहृषीकवार्ता, चक्रेश्वरस्य नियता तदधिक्यभावात्।

दूरावलोकनजशक्तियुतान् यजामि, देवेन्द्रचक्रधरणींद्रसमर्चितांहि ॥ ६६८ ॥

भाषा—नेत्रेंद्रियका विषय बल, जो चक्री जानन्त। तातें अधिक सुजानते, जजूं साधु बलवन्त ॥

ॐ ह्रीं दूरावलोकनशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०९)

श्रोत्रेंद्रियस्य नवयोजनशक्तिरिष्टा, नातः परं तदधिकावनिसंस्थशब्दान् ।
श्रोतुं प्रशक्तिरुदयत्यतिशायिनी च, येषां तु पादजलजाश्रयणं करोमि ॥ ६६९ ॥
भाषा-कर्णेन्द्रिय नवयोजना, शब्द सुनत चक्रीश । तातें अधिक श्रुशक्तिधर, पूजूं चरण मुनीश ॥
ॐ ह्रीं दूरश्रवणशक्तिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१०)
अभ्यासयोगविहतावपि यन्मुहूर्तमात्रेण पाठयति दिग्प्रमपूर्वसार्थं ।
शब्देन चाथपरिभावनया श्रुतं तच्छक्तिप्रभूनधियजामि अखस्य सिद्धचै ॥ ६७० ॥
भाषा-बिन अभ्यास मुहूर्तमें, पढ़ जानत दश पूर्व । अर्थ भाव सब जानते, पूजूं यती अपूर्व ॥
ॐ ह्रीं दशपूर्वित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२११)
एवं चतुर्दशसुपूर्वगतश्रुतार्थं शब्देन ये ह्यमितशक्तिमुदाहरन्ति ।
तानत्र शास्त्रपरिलब्धिविधानभूतिसम्पत्तयेऽहमधुनार्हणया धिनोमि ॥ ६७१ ॥
भाषा-चौदह पूर्व मुहूर्तमें, पढ़ जानत अधिकार । भाव अर्थ समझें सभी, पूजूं साधु चितार ॥
ॐ ह्रीं चतुर्दशपूर्वित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१२)
अन्योपदेशविरहेऽपि सुसंयमस्य, चारित्रकोटिविषयः स्वयमुद्भवन्ति ।
प्रत्येकबुद्धमतयः खलु ते प्रशस्यास्तेषां मनाक् स्मरणतो मम पापनाशः ॥ ६७२ ॥
भाषा-बिन उपदेश सुज्ञान लहि, संयम विधि चालन्त । बुद्धि अमल प्रत्येक धर पूजूं साधु महन्त ॥
ॐ ह्रीं प्रत्येकबुद्धित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा (२१३)
न्यायागमस्मृतिपुराणपठित्यभावेऽप्याविर्भवंति परवादविदारणोद्धाः ।
वादित्वबुद्धय इति श्रमणाः स्वधर्मं, निर्वाहयंति समये खलु तान् यजामि ॥ ६७३ ॥
भाषा-न्याय शास्त्र आगम बहू, पढ़ें बिना जानन्त । परवादी जीतें सकल, पूजूं साधु महन्त ॥
ॐ ह्रीं वादित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१४)
जंघाग्निहेतिकुसुमच्छदतंतुबीजश्रेणीसमाजगमना इति चारणांकाः ।
ऋद्धिक्रियापरिणता मुनयः स्वशक्तिसंभावितास्त इह पूजनमालभंतु ॥ ६७४ ॥
भाषा-अग्नि पुष्प तंतू चलें, जंघा श्रेणी चाल । चारण ऋद्धि महान धर, पूजूं साधु विशाल ॥

ॐ ह्रीं जलजंघातंतुपुष्पपत्रबीजश्रेणिवह्न्यादिनिमित्ताश्रयचारणऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१५)

आकाशयाननिपुणा जिनमंदिरेषु, मेर्वाद्यकृत्रिमधरासु जिनेशचैत्यान्।
वंदंत उत्तमजनानुपदेशयोगानुद्धारयंति चरणौ तु नमामि तेषां ॥ ६७५ ॥

भाषा—नभमें उड़कर जात हैं, मेरु आदि शुभ थान। जिन वन्दत भविबोधते, जजूं साधु सुख खान।

ॐ ह्रीं आकाशगमनशक्तिचारणर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१६)

ऋद्धिः सुविक्रियगता बहुलप्रकारा, तत्र द्विधाविभजनेष्वणिमादिसिद्धिः।
सुखभासिन तत्परिचयप्रतिपत्तिमन्त्रान् यायज्मि तत्कृतविकारविवर्जितांश्च ॥ ६७६ ॥

भाषा—अणिमा महिमा आदि बहु, भेद विक्रिया रिद्धि। धरैं करैं न विकारता, जजूं यती समृद्धि ॥

ॐ ह्रीं अणिमामहिमालघिमागरिमाप्राप्तिप्राकाम्यवशित्वईशित्वऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१७)

अन्तर्दधिप्रमुखकामविकीर्णशक्तिर्येषां स्वयं तपस उद्भवति प्रकृष्टा।
तद्विक्रियाद्वितयभेदमुपागतानां, पादप्रधावनविधिर्मम पातु पाणिं ॥ ६७७ ॥

भाषा—अंतर्दधि कामेच्छ बहु, ऋद्धि विक्रिया जान। तप प्रभाव उपजे स्वयं, जजूं साधु अघहान ॥

ॐ ह्रीं विक्रियायां अंतर्धानादिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१८)

षष्ठाष्टमद्विदशपक्षकमासमात्रानुष्ठेयभुक्तपरिहारमुदीर्य योगं।
आमृत्युमुग्रतपसा ह्यनिवर्तकास्ते, पांत्वर्चनाविधिमिमं परिलम्भयन्तु ॥ ६७८ ॥

भाषा—मास पक्ष दो चार दिन, करत रहैं उपवास। आमरणं तप उग्र धर, जजूं साधु गुणवास ॥

ॐ ह्रीं उग्रतपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१९)

घोरोपवासकरणेऽपि बलिष्ठयोगान्, दौर्गंध्यविच्युतमुखान् महदीप्तदेहान्।
पद्मोत्पलादिसुरभिश्वसयान्मुनींद्रान्, यायज्मि दीप्त तपसो हरिचन्दनेन ॥ ६७९ ॥

भाषा—घोर कठिन उपवास धर, दीप्तमई तन धार। सुरभि श्वास दुर्गंधबिन, जजूं यती भव पार।

ॐ ह्रीं दीप्तऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२०)

वैश्वानरौघपतितांबुकणेन तुल्यमाहारमाशु विलयं ननु याति येषां।
विण्मूत्रभावपरिणाममुदेति नो वा, ते सन्तु तप्ततपसो मम सद्विभूत्यै ॥ ६८० ॥

भाषा—अग्नि माहिं जल सम विलय, भोजन पय होजाय। मल कफ मूत्र न परिणमें, जजूं यती उमगाय ॥

ॐ ह्रीं तप्ततपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२१)

हारावलीप्रभृतिघोरतपोऽभियुक्ताः, कर्मप्रमाथनधियो यत उत्सहन्ते।

ग्रामाटवीष्वशनमप्यतिपातयन्ति, ते सन्तु कार्मणतृणाग्निचयाः प्रशान्त्यै ॥ ६८१ ॥

भाषा—मुक्तावली महान तप, कर्मन नाशन हेतु। करत रहें उत्साहसे, जजूं साधु सुख हेतु ॥

ॐ ह्रीं महातपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा (२२२)

कासज्वरादिविविधोग्ररुजादिसत्त्वेष्वप्यच्युतानशनकायदमान् श्मशाने।

भीमादिगह्वरदरीतटिनीषु दुष्टसंक्लृप्तबाधनसहानहमर्चयामि ॥ ६८२ ॥

भाषा—कास श्वास ज्वर गृसित हो, अनशन तप गिरि साध। दुष्टन कृत उपसर्ग सह, पूजूं साधु अबाध ॥

ॐ ह्रीं घोरतपऋद्धिप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२३)

पूर्वोदितासु विधियोगपरंपरासु, स्फारीकृतोत्तरगुणेषु विकाशवत्सु।

येषां पराक्रमहतिर्न भवेत्तमर्चे, पादस्थलीमिह सुघोरपराक्रमाणां ॥ ६८३ ॥

भाषा—घोर घोर तप करत भी, होत न बलसे हीन। उत्तर गुण विकसित करें, जजूं साधु निज लीन ॥

ॐ ह्रीं घोरपराक्रमऋद्धिप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (२२४)

दुःस्वप्नदुर्गतिसुदुर्मतिदौर्मनस्यमुख्याः, क्रिया व्रतविघातकृते प्रशस्ताः।

तासां तपोबिलसनेन समूलकाषं, घातोऽस्ति ते सुरसमर्चितशीलपूज्याः ॥६८४॥

भाषा—दुष्ट स्वप्न दुर्मति सकल, रहित शील गुण धार, परमब्रह्म अनुभव करें, जजूं साधु अविकार ॥

ॐ ह्रीं घोरब्रह्मचर्यगुणऋद्धिप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२५)

अन्तर्मुहूर्त्तसमये सकलश्रुतार्थसंचिन्तनेऽपि पुनरुद्धृतसूत्रपाठाः।

स्वच्छा मनोऽभिलषिता रुचिरस्ति येषां, कुर्यान्मनोबलिन उत्तममांतरं मे ॥ ६८५ ॥

भाषा—सकल शास्त्र चिन्तन करें, एक मुहूर्त मंझार। घटत न रुचि मन वीरता, जजूं यती भवतार ॥

ॐ ह्रीं मनोबलऋद्धिप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२६)

जिह्वाश्रुतावरणवीर्यशमक्षयाप्तावन्तर्मुहूर्त्तसमयेषु कृतश्रुतार्थाः।

प्रश्नोत्तरोत्तरचयैरपि शुद्धकण्ठदेशाः सुवाक्यबलिनो मम पांतु यज्ञं ॥ ६८६ ॥

भाषा—सकल शास्त्र पढ़ जात हैं, एक महूर्त मंझार। प्रश्नोत्तर कर कण्ठ शुचि, धरत यजूं हितकार ॥

ॐ ह्रीं वचनबलऋद्धिप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२७)

मेर्वादिपर्वतगणोद्धरणेषु शक्ता, रक्षःपिशाचशतकोटिबलाधिवीर्याः।
मासर्तुवत्सरयुगाशनमोचनेऽपि हानिर्न कायबलिनः परिपूजयामि ॥ ६८७ ॥

भाषा—मेरु शिखर राखन बली, मास वर्ष उपवास। घटै न शक्ति शरीरकी, यजूं साधु सुखवास ॥

ॐ ह्रीं कायबलऋद्धिप्राप्तेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥ (२२८)

स्पर्शात्करांह्रिजनिताद् गदशांतनं स्यादामर्षजा यव इति प्रतिपत्तिमाप्तान्। (?)
येषां च वायुरपि तत्स्पृशतां रुजार्तिनाशाय तन्मुनिवराग्रधरां यजामि ॥ ६८८ ॥

भाषा—अंगुलि आदि सपर्शते, श्वास पवन छू जाय। रोग सकल पीड़ा टले, जजूं साधु सुख पाय ॥

ॐ ह्रीं आमर्षौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ (२२९)

निष्ठीवनं हि मुखपद्मभवं रुजानां, शांतये मुत्कटतपोविनियोगभाजां।
क्ष्वेलौषधास्त इह संजनितावतारा:, कुर्वंतु विघ्ननिचयस्य हतिं जनानां ॥ ६८९ ॥

भाषा—मुखते उपजे राल जिन, शमन रोग करतार। परम तपस्वी वैद्य शुभ, जजूं साधु अविकार ॥

ॐ ह्रीं क्ष्वेलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीतिस्वाहा। (२३०)

स्वेदावलंबितरजोनिचयो हि येषामुत्क्षिप्य वायुविसरेण यदंगमेति।
तस्याशु नाशमुपयाति रुजां समूहो, जल्लौषधीशमुनयस्त इमे पुनन्तु ॥ ६९० ॥

भाषा—तन पसेव सह रज उड़े, रोगीजन छू जाय। रोग सकल नाशे सही, जजूं साधु उमगाय ॥

ॐ ह्रीं जलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (२३१)

नासाक्षिकर्णरदनादिभवं मलं यन्नैरोग्यकारि वमनज्वरकासभाजां।
तेषां मलौषधसुकीर्तिजुषां मुनीनां, पादार्चनेन भवरोगहतिर्नितांतं ॥ ६९१ ॥

भाषा—नाक आंख कर्णादि मल, तन स्पर्श हो जाय। रोगी रोग शमन करें, जजूं साधु सुख पाय ॥

ॐ ह्रीं मलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३२)

उच्चार एव तदुपाश्रितवायुरेणू, अंगस्पृशौ च निहतः किल सर्वरोगान् ।
पादप्रक्षालनजलं मम मूर्ध्निपातं, किं दोषशोषणविधौ न समर्थमस्तु ॥ ६९२ ॥

भाषा-मल निपात पर्शी पवन, रजकण अंग लगाय । रोग सकल क्षणमें हरे, जजूं साधु अघ जाय ॥

ॐ ह्रीं विप्रौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्यो अघ निर्वपामीति स्वाहा । (२३३)

प्रत्यंगदन्तनखकेशमलादिरस्य, स्पर्शो हि तन्मिलितवायुरपि ज्वरादि ।
कासापतानकमिशूलभगंदराणां, नाशाय ते हि भविकेन नरेण पूज्याः ॥ ६९३ ॥

भाषा-तन नख केश मलादि बहु, अंग लगी पवनादि । हरै मृगी शूलादि बहु, जजूं साधु भवव्यादि ॥

ॐ ह्रीं सर्वौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्यो अघ निर्वपामीति स्वाहा । (२३४

येषां विषाक्तमशनं मुखपक्षपातं, स्यान्निर्विषं खलु तदंह्रिवरापि येन ।
स्पृष्टा सुधा भवति जन्मजरामृत्युध्वंसो भवेत्किमु पदाश्रयणे न तेषाम् ॥ ६९४ ॥

भाषा-विष मिश्रित आहार भी, जह निर्विष होजाय । चरण धरें भू अमृती, जजूं साधु दुःख जाय ॥

ॐ ह्रीं आस्याविषऋद्धिप्राप्तेभ्यो अघ निर्वपामीति स्वाहा । (२३५)

येषां सुदूरमपि दृष्टिसुधानिपातो, यस्योपरिस्खलति तस्य विषं सुतीव्रं ।
अप्याशु नाशमयते नयनाविषास्ते, कुर्वन्त्वनुग्रहममी कृतुभागभाजः ॥ ६९५ ॥

भाषा-पड़त दृष्टि जिनकी जहां, सर्वहिं विष टल जाय । आतम रमी शुचि संयमी, पूजूं ध्यान लगाय ॥

ॐ ह्रीं दृष्टयविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३६)

ये यं ब्रुवन्ति यतयोऽकृपया म्रियस्व, सद्यो मृतिर्भवति तस्य च शक्तिभावात् ।
येषां कदापि न हि रोषजनिर्घटेत, व्यक्ता तथापि यजतास्यविषान् मुनीन्द्रान् ॥ ६९६ ॥

भाषा-मरण होय तत्काल यदि, कहैं साधु मर जाव ।
तदपि क्रोध करते नहीं, पूजूं बल दरशाव ॥

ॐ ह्रीं आशीविषऋद्धिप्राप्तेभ्यो निर्वपामीति स्वाहा । (२३७)

येषामशातनिचयः स्वयमेव नष्टोऽन्येषां शिवोपचयनात्सुखमाददानाः ।

ते निग्रहाक्तमनसो यदि सम्भवेयुर्दृष्ट्यव हंतुमनिशं प्रभवो यजे तान् ॥ ६९७ ॥

भाषा–दृष्टि क्रूर देखें यती, तुर्त काल वश थाय। निज पर सुखकारी यती, पूजूं भक्ति बढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं दृष्टिविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (२३८)

क्षीराश्रवर्द्धिमुनिवर्यपदांबुजातद्वंद्वाश्रयाद् विरसभोजनमप्युदश्वित्।
हस्तार्पितं भवति दुग्धरसाक्तवर्णस्वादं तदर्चनगुणामृतपानपुष्टाः ॥ ६९८ ॥

भाषा–निरस भोजन कर धरे, क्षीर समान बनाय। क्षीरस्रावी ऋद्धि धरे, जजूं साधु हरषाय ॥

ॐ ह्रीं क्षीरश्रावीऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (२३९)

येषां वचांसि बहुलार्तिजुषां नराणां, दुःखप्रघाततयापि च पाणिसंस्था।
भुक्तिर्मधुस्वदनवत् परिणामवीर्यास्तानर्चयामि मधुसंश्रविणो मुनींद्रान् ॥ ६९९ ॥

भाषा–वचन जास पीड़ा हरे, कटु भोजन मधुराय। मधुश्रावी वर ऋद्धि धरे, जजूं साधु उमगाय ॥

ॐ ह्रीं मधुश्रावीऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (२१९)

रूक्षान्नमर्भिमथो करयोस्तु येषां, सर्पिःस्ववीर्यरसपाकवदाविभाति।
ते सर्पिराश्रविण उत्तमशक्तिभाजः पापाश्रवप्रमथनं रचयन्तु पुंसाम् ॥७०० ॥

भाषा–रूक्ष अन्न करमें धरे, घृत रस पूरण थाय। घृतश्रावी वर ऋद्धि धर, जजूं साधु सुख पाय ॥

ॐ ह्रीं घृतश्रावीऋद्धिप्राप्तेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (२४१)

पीयूषमाश्रवति यत्करयोर्धृतं सद्, रूक्षं तथाकटुकमम्लतरं कुभोज्यं।
येषां वचोऽप्यमृतवत् श्रवसोर्निधत्तं, संतर्पयत्यसुभृतामपि तान् यजामि ॥ ७०१ ॥

भाषा–रूक्ष कटुक भोजन धरे, अमृत सम होजाय, अमृत सम वच तृप्ति कर, जजूं साधु मन लाय ॥

ॐ ह्रीं अमृतश्राविऋद्धिप्राप्तेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (२२३)

यद्दत्तशेषमशनं यदि चक्रवर्तिसेनाऽपि भोजयति सा खलु तृप्तिमेति।
तेऽक्षीणशक्तिललिता मुनयो हगाधवजाता ममाशु वसुकर्महरा भवन्तु ॥ ७०२ ॥

भाषा–दत्त साधु भोजन बचे, चक्री कटक जिमाय। तदपि क्षीण होवे नहीं, जजूं साधु हरषाय ॥

ॐ ह्रीं अक्षीणमहानसर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४३)

यत्रोपदेशमरसि प्रसरच्युतेऽपि, तिर्यग्मनुष्यविबुधाः शतकोटिसंख्याः ।
आगत्य तत्र निवसेयुरबाधमाना स्तिष्ठंति, तान्मुनिवरानहमर्चयामि ॥ ७०३ ॥

भाषा-सकुडे थानकमें यती, करते वृष उपदेश । बैठे कोटिक नर पशू, जजूं साधु परमेश ॥

ॐ ह्रीं अक्षीणमहालयऋद्धिधारकेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा । (२४४)

इत्थं सत्तपसः प्रभावजनिताः सिद्धर्द्धिसिद्धप्रपत्तयो, येषां ज्ञानसुधाप्रलीढ़हृदयाः संसारसेतुच्युताः ।
रोहिण्यादिविधाविदोद्धितचमत्कारेषु संनिःस्पृहा नो वांछन्ति कदापि तत्कुलविधिं तानाश्रये सन्मुनीन्॥७०४॥

भाषा-या प्रमाण ऋद्धीनको, पवन तप परभाव । चाहे कछु राखत नहीं, जजूं साधु घर भाव ॥

ॐ ह्रीं सकलऋद्धिसम्पन्नसर्वमुनिभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अत्रैव चतुर्विंशतितीर्थेशां चतुर्दशशतं मतं । सत्रिपंचाशता युक्त गणिनां प्रयताऽप्यहं ॥ ७०५ ॥

भाषा-दोहा- चौदासे त्रेपन मुनी, गणी तीर्थ चौबीस । जजूं द्रव्य आठों लिये, नाय नाय निज शीस ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थेश्वराग्रिमसभाऽर्तितस्त्रिपंचाश चतुर्दशशतगणधरमुनिभ्योऽर्घ निर्वपामीति स्वाहा । (२४५)

मत्वेत्तनिधिद्वयग्रलक्ष्यकान्मुनीश्वरान् । समस्तांश्चेश्वरांस्तीर्थकृत्सत्तान्नियतान्यजे ॥ ७०६ ॥

भाषा-अडतालीस हजार अर, उनिस लक्ष प्रमाण । तीर्थंकर चौबीस यति, संघ यजूं धरि ध्यान ॥

ॐ ह्रीं वर्तमानचतुर्विंशतितीर्थंकरसभासंस्थायि एकोनत्रिंशल्लक्षाष्टचत्वारिंशत्सहस्रप्रमितमुनीन्द्रेभ्योऽर्घ निर्वपामीति० (२१७)

इस तरह नौवे वलयकी पूजा करके एक नारियल उस वलयमें या मंडपके किनारे रक्खे ।

अब चार कोनेमें स्थापित जिनप्रतिमा, मंदिर, शास्त्र व जिनधर्मकी पूजा करनी ।

अकृत्रिमाः श्रीजिनमूर्त्तयो नव, सपंचविंशाः खलु कोटयस्तथा ।
लक्षास्त्रिपंचाशमितास्त्रिसगुणाः कृष्णाः, सहस्राणि शतं नवानां ॥ ७०७ ॥

भाषा-दोहा-नौसे पचिस कोटि लख, त्रेपन अट्टावीस । सहस ऊनकर धावना, बिंब अकृत नम शीस ॥

ॐ ह्रीं नवशतपंचविंशतिकोटित्रिपंचाशल्लक्षसप्तविंशतिसहस्रनवशताष्टचत्वारिंशत्प्रमितअकृत्रिमजिनबिम्बेभ्योऽर्घ नि० । (२४७)

द्विहीनपंचाशदुपात्तसंख्यकाः, प्रणम्य ताः पूजनया महाम्यहं ।
अष्टौ कोट्यस्तथा लक्षाः षट्पंचाशमितास्तथा, सहस्रं सप्तनवतेरेकाशीतिश्चतुःशतं ॥ ७०८ ॥

एतत्संख्यान् जिनेंद्राणामकृत्रिमजिनालयान्, अत्राहूय समाराध्य पूजयाम्यहमध्वरे ॥ ७०९ ॥
भाषा–दोहा–आठ कोड़ लख छप्पने, सत्तानवे हजार । चार शतक इक असी जिन, चैत्य अकृत भज सार ॥
ॐ ह्रीं अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतएकाशीतिसंख्याकृत्रिमजिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

यो मिथ्यात्वमतंगजेषु तरुणक्षुन्नुन्नसिंहायते, एकांतातपतापितेषु समस्तपीयूषमेघायते ।
श्वभ्रांधमहिसम्पतत्सु लक्ष्यं हस्तावलम्बायते, स्याद्वादध्वजमागमं तमभितः संपूजयामो वयं ॥७१०॥
भाषा–चौपाई–जय मिथ्यात्व नागको सिंहा, एक पक्ष जल घरको मेहा ।
नरक कूपते रक्षक जाना, भज जिन आगम तत्त्व खजाना ॥
ॐ ह्रीं स्याद्वादअंकितजिनागमायाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा । (२४९)

जिनेंद्रोक्तं धर्मं सुदशयुतभेदं त्रिविधया, स्थितं सम्यक्रत्नत्रयललितकयाऽपि द्विविधया ।
प्रगीत सागारेतरचरणतो ह्यकमनघं, दयारूपं वंदे मखभुवि समारुयापितमिदं ॥ ७११ ॥
भाषा–भुजंगप्रयात छन्द–जिनेन्द्रोक्त धर्म दयाभाव रूपा, यही द्वैविधा संयमं है अनूपा ।
यही रत्नत्रय मय क्षमा आदि दशधा, यही स्वानुभव पूजिये द्रव्य अठधा ॥
ॐ ह्रीं दशलक्षणोत्तमादित्रिलक्षणसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूप तथा मुनिगृहस्थाचारभेदेन द्विविध तथा दयारूपत्वेनैक रूपजिनधर्मायऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

यागमण्डलसमुद्धृता जिनाः सिद्धवीतमदनाः श्रुतानि च ।
चैत्यचैत्यगृहधर्ममागमं संयजामि सुविशुद्धिपूर्तये ॥ ७१२ ॥
भाषा–दोहा–अर्हंतसिद्धाचार्य गुरु, साधु जिनागम धर्म । चैत्य चैत्य ग्रह देव नव, यज्ञ सफल कर सर्म ॥
ॐ ह्रीं सर्वयागमण्डलदेवताभ्यः पूर्णार्घम् । चारों कोनोंपर चार नारियल चढावे ।

शांतिः पुष्टिरनाकुलत्वमुदितश्राजिष्णुनाविष्कृतिः, संसारार्णवदुःखदावशमनं निःश्रेयसोद्भूतिता ।
सौराज्यं मुनिवर्यपादवरिवस्याप्रक्रमो नित्यशो, भूयादश्रशरक्षिनायकमहापूजाप्रभावान्मम ॥ ७१३ ॥
भाषा भडिल्ल–सर्व विघ्न क्षय जाय शांति बाढ़े सही, भव्य पुण्य लहैं क्षोभ उपजे नहीं ।
पञ्च कल्याणक होय सबहि मङ्गल करा, जासे भवदधि पार लेय शिवघर शिरा ॥
इत्याशीर्वादः–पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

फिर—आचार्य भक्ति, अर्हन्त भक्ति, सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, चारित्रभक्ति पढ़े जो अन्तमें दी हुई है।

पश्चात् शांतिपाठ विसर्जन करके यागमण्डलकी पूजा समाप्त करे। जबसे यह मण्डल पूजा शुरू हो तबसे पूर्ण होने तक सब नरनारियोंको एकाग्र हो सुनना चाहिये। जिसको कोई प्रकारकी बाधा मेटनी हो वह शांतिसे जावे, टिकट द्वारपर दे देवे, यदि लौटकर आना हो तो एक दूसरे प्रकारका टिकट रक्खा जावे जो छुट्टीका हो सो दे दिया जावे। जब वह लौटे फिर वह टिकट दे दिया जावे। मण्डल पूर्ण होनेपर सबके टिकट ले लिये जावें। यही क्रम हरएक दिन मण्डपके लिये हो। अब मण्डप चारों तरफसे बंद कर दिया जावे वह वेदीके आगे जो दो चबूतरे हैं वहां तीनों तरफ परदा रहे व पहले चबूतरेके आगे अलग परदा रहे। अब सब परदा बंद कर दिये जावें।

तीसरा अध्याय।

गर्भकल्याणक।

यागमण्डलकी पूजा दिनमें समाप्त हो जानेपर यदि तीसरे पहर समय हो तब तो संध्यासे पहले नीचेकी क्रिया की जावे। यदि दिनमें समय न हो तो रात्रिको क्रिया की जावे।

(१) इन्द्रकी स्वर्गपुरीकी सभा व कुबेरको आदेश—वेदीके आगे जो दो चबूतरे हैं, एकपर यागमण्डल है दूसरा खाली है। यागमण्डल प्रतिष्ठा होने तक रहने दिया जावे। पहले चबूतरेके आगे परदा डालकर दूसरेपर परदेके भीतर पहले सभा लगाई जावे। सौधर्म इन्द्र व इन्द्राणी सिंहासनपर बैठे, कुछ देवता इधर उधर बैठें, सामने उपदेशी भजन गाजे बाजेके साथ हो रहे हों ऐसा सामान रचकर मण्डपमें टिकटोंके द्वारा नरनारी एकत्र हों तब परदा उठाया जावे। परदा उठनेके पहले सूचक पात्र सबको यह सूचना करे—

इन्द्र अपनी सभामें बैठकर श्री ऋषभदेव तीर्थंकरका जन्म होगा ऐसा स्मरण करते हैं और कुबेरको आज्ञा देते हैं कि वह अयोध्या-नगरीकी रचना करे तथा राजाके आंगनमें रत्नवृष्टि करे तथा कुमारिका देवियोंको आज्ञा करे कि वे माताका गर्भशोधन करें।

परदा यकायक उठे तब भजन हो रहे हों। कुछ देर भजन होकर इन्द्र-इन्द्राणी सिंहासनसे उठकर खड़े हों तब सभा निवासी और देव भी खड़े हों और नीचे प्रकार श्री जिनेन्द्रकी स्तुति सब मिलाकर हाथ जोड़कर करें, भजन गाना बंद हो। यदि बाजेके साथ स्तुति पढ़ी जा सके तो वैसा किया जावे अन्यथा यों ही पढ़ी जाय पर स्पष्ट शुद्ध पढ़ी जाय। आचार्य पढ़नेमें मदद देवें।

छन्द त्रिभंगो।

जय जय जिन स्वामी अन्तरयामी, परमातम सब दोष हरे। निज ज्ञान प्रकाशे भ्रमतम नाशे, शुद्धातम शिवराज करे॥
तुम अनुभव सागर अमृत गागर, जो भरकर निज कण्ठ धरे। सो सुख निज पावे क्षोभ मिटावे, कर्म बंधका नाश करे॥

चौपाई।

जय जय मोह महातम मारी, नाशन तुम सूरज अविकारी। जय जय मिथ्यातम निशिनाशी, शशि अविकार महान प्रकाशी॥
जय जय भव्य भ्रमर हुल्लासी, चरणकमल शम गन्ध सुवासी। जय जय शांति भाव प्रगटावन, धर्म सरोवर शमजल धारण॥
जय जय कर्म महागिरि चूरण, तुम्हीं वज्र अद्भुत बल पूरण। जय जय चाह दाह प्रशमावन, तुम हि मेघजल सुन्दर पावन॥
जय जय काम शत्रु सिरनाशन, ब्रह्मचर्य असिधार प्रकाशन। जय जय क्रोध पिशाच विनाशन, क्षमा वज्रधर इन्द्र प्रकाशन॥
जय जय मान नाग क्षयकारी, सिंह प्रबल मार्दव गुणधारी, जय जय माया लता उखाड़न, आर्जव शस्त्र धार अति पावन॥
जय जय लोभ कालिमाटारन, शौचमृत शुचि गुणविस्तारन। जय जय अविरति पन्थ हटावन, संयम संरक्षक अति पावन॥
जय जय योग चलन थिरकारी, शुक्ल ध्यान दृढ़ भित्ति करारी। हे जिननाथ पाप हम टालो, भक्ति आपनी देय सम्हालो॥
भवसागरसे नाथ उधारो, कर्म आस्रव छिद्र निवारो। सुखसागरमें नाव डुबाओ, ममता मल विकार हटाओ॥

स्तुति पढ़कर सब बैठ जावे। कुछ मिनट पीछे इन्द्र आज्ञा करे—

धनद कुबेर—(ऐसा कहते ही सभामें बैठा कुबेर हाथ जोड़ खड़ा होजाता है) तुम्हें सुखद बात सुनाता हूँ। इस बातके कहनेसे ही पुण्य कमाता हू।

कुछ काल पीछे सर्वार्थसिद्धिका वज्रनाभि अहमिन्द्र चयेगा और नाभिराय मरुदेवीके पवित्र गर्भमें अवतरेगा। तुम शीघ्र अयोध्या नगरकी रचना करके शोभा करो, रमणीक मनोहर नेत्रप्रिय रत्नोंकी आभा करो, सुन्दर अद्वितीय राज्य महल बनाओ।

नाभिराजा मरुदेवीको पवित्र जलसे स्नान कराओ। परम पुनीत वस्त्राभूषणोंसे पूजित करो और मनोहर सिंहासनपर बिठा लोकके सर्व आसनोंको लज्जित करो। कुबेर! श्री ऋषभनाथ प्रथम तीर्थंकरका उदय होगा। जगतका मोह मिथ्यात्व अन्धकार सब क्षय होगा। छ माप पूर्वसे नौ मास गर्भ तक रत्नवृष्टि करो। राजाका महल मनोज्ञ रत्नोंकी वर्षासे पूर्ण करो। कुमारिका देवियोंको आज्ञा करो कि—

ये माताकी सेवामें आएं, गर्भकी शोधना कर पुण्य कमाएं।

कुबेर सुनकर आनंदित होता है और उत्तर देता है—"धन्य! धन्य! महाराज! जगतका पुण्योदय हुआ है जो तीर्थंकरका जन्म होनेवाला है। इस सम्वादको जानकर जो आनन्द हुआ है वह वचन अगोचर है। कृपानाथने जो आज्ञा की है उसे बजा लाऊँगा। तीर्थंकरके माता-पिताकी सेवा करके पुण्य कमाऊँगा। महाराज, आज मेरा जन्म धन्य हुआ जो मुझे यह परम कल्याणमय कार्य करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। तब इन्द्र-इन्द्राणीके सिवाय अन्य सब सभाके देव उठकर यह छन्द मिलकर पढ़ते हैं—

गीता छन्द—सब धन्य सुरका आज ही, सम्वाद सुखभर हम सुना। श्री तीर्थंकरका जन्म होगा, पुण्य हो यासे घना॥
भवि जीव शिवकी राह पावेंगे मिटा मिथ्यातको। हम भी पियें अमृत महा, जिन तत्त्वका भव घातको॥

अब परदा गिर जावे।

(२) नगर, राजमहलकी रचना, माता पिताकी भक्ति व रत्नवृष्टि—फिर पर्देके भीतर जो मुख्य वेदीकी दाहिनी ओर वेदी है वहां राजमहलकी रचना दर्शनीय यथायोग्य करनी चाहिये। दूसरे चबूतरे पर राजा रानीकी सभा बनानी चाहिये। कुछ लोग सभासद बैठे हों, सामने भजन उपदेश होता हो। ऊपरसे रत्नवृष्टि करनेका प्रबन्ध ऐसा किया जावे कि मंडपका कुछ हिस्सा खोल दिया जावे, वहां बांसपर दो देव दूर दूर बैठ रत्नवृष्टि करें या ऊपरका भाग न खुल सके तो एक मजबूत बांस या बल्ली ऐसी बन्धी हो जिसपर दो इन्द्र या देव चढ़कर बैठ जावें और रत्नवृष्टि करे। जिस तरह हो आकाशसे रत्नवृष्टि होनेका प्रबन्ध किया जावे।

रत्नवृष्टियें—कुछ पन्ने, कुछ नीलम, कुछ लाल, कुछ पुखराज तथा बहुतसे चांदी सोनेके बने तारे सितारे तथा फूल इतने छोड़े जावें कि दर्शकोंको दिखे कि रत्नवृष्टि देवगण कर रहे हैं। पुष्प भी मिला सकते हैं। माता-पिता बैठे हों, सामने भजन सुन रहे हो ऐसी स्थितिमें परदा उठे। परदा उठनेके पहले सूचक पात्र यह बता देवें कि श्री नाभिराज और मरुदेवीके राजमहलमें रत्नवृष्टि होगी तथा देवियां गर्भशोधनके लिये पधारेंगी। परदा उठते ही कुछ ही देर बाद आचार्य यह मन्त्र पढ़े—

"ॐ ह्रीं धनाधिपतये अर्हत्पितृनिलये रत्नवृष्टिं मुंचतु मुंचतु स्वाहा।" ऐसा तीन बार पढ़े। पढ़नेका समाप्त होते ही ऊपरसे रत्नवृष्टि हो तब सब दर्शकगण जय जय शब्द कहें और मण्डपके बाहर गम्भीर बाजे बजे। धीरे२ दो तीन मिनट तक वृष्टि होनी चाहिये।

फिर कुबेर कुछ देवोंके साथ राज-सभामें आवे, साथमें दो थाल लावे, एकमें वस्त्र रमणीक हों, एकमें आभूषण हों।

(नोट—वस्त्र सदा शुद्ध देशी यथासम्भव हाथके बने रंगीन गोटे आदिसे सज्जित हों)—विनय करता हुआ आकर उन दोनो थालोंको सामने टेबुलपर रखकर नत मस्तक हो हाथ जोड़ स्तुति पढ़े—

पद्धरी छन्द

जय नाभिराय कुलकर महान, चौदम मनु मनुष्योंमें प्रधान। जब कल्पवृक्ष सब नष्ट थाय, तब नरनारी तुम पास आय ॥
कर दीन वचन मुखसे उचार, औंसे कैसे हम है लाचार। तब खानपान विधि सब बताय, तिनका जीवन जासों टिकाय ॥
जय धन्य धन्य स्वामी दयाल, तुम प्रजा रक्ष सब कर निहाल। तुम गुण वरणको खारि जान, हम करन पूजा तुम महा मान ॥
जय देवी मरुदेवी महान, तुम जगत पूज्य हो शील थान। तुम सुन्दर गुणसे सोहमान, तुम सम नहिं माता जगत जान ॥
तुमसे जगका उपकार मान, आए तुमरे हित करन मान। यह भेट इन्द्र भेजी अपार कीजे कबूल हो ज्ञान धार ॥

फिर मस्तक नमा नमन करे। राजा बैठनेकी आज्ञा करे, उन थालोंको कोई मुसाहब भीतर ले जावें पश्चात् १०–१२ भाई गरीब दशामें राजसभामें आवें और कहें—

धन्य धन्य प्रजानाथ। आपके दर्शनसे हम हुए सनाथ ॥

हम निर्धन आपकी शरण आये हैं। आपसे आशाकी पूर्ति जान आपसे मन लगाए हैं। आप दीनोंके क्लेश निवारक हैं, आप अशरणोंको शरण धारक हैं। ऐसा कह मस्तक नमाकर एक तरफ खड़े हो जावे। तब नाभिराय एक मुसाहबको आज्ञा करें। इन याचकोंको तृप्त करो, इन रत्नोंको जिन्हें धनदने बरसाया है इनको देकर इनकी आशा पूरी करो, ये बड़ी आशा लगा कर आए हैं। इनको निर्धनसे धनवान करो, अपने समान करो, रत्न दे इनका सन्मान करो। तब दो मुसाहब उठते हैं। बिखरे हुए रत्नोंको बटोरकर उनको बांट देते हैं। वे उनको अपनी झोलीमें लेते हुए कहते है—

पद्धरी छन्द—जय हो जय हो नाभिराज, हम दीन किये धनवान आज।
तुम धन्य धन्य दानी विशाल, तुम सम जगमें नहिं कोई कृपाल॥

ऐसा कह जय जय कहते हुए लौट जाते है। फिर राजा नाभीराय और रानी मरुदेवी भीतर चले जाते हैं, सभा लगी रहती है।

फिर आठ कुमारिका देवियें (कन्याए) कुंभ कलश प्राशुक जलसे भरा, नारियलसे ढका, पुष्पमालासे सुशोभित मस्तकपर या दोनों हाथोंपर लिये हुई आती है, और सामने खड़ी होजाती हैं। कुबेर उठते है और कहते हैं—इन्द्रकी आज्ञा है—हे कुमारिकादेवियों! श्री मरुदेवीके गर्भकी शोधना करो, माता मरुदेवी जगतजननी हैं उनकी सेवा करो, उनके मनको प्रसन्न रक्खो, उनकी आज्ञामें अपना चित्त लवलीन रक्खो।

(१) तब आचार्य नीचे लिखा मन्त्र पढ़ कर कन्याको पूर्व दिशामें स्थापित करे। उसपर पुष्प क्षेपण करे " ॐ महति महत्वा श्रीदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं ह्रैं श्रीं नित्य स्व स क्लीं ईं स्वा ला ह्रौं तीर्थंकरपवित्रीं स्नापय २ गर्भशुद्धिं कुरु कुरु व म ह स त प श्रीदेव्यै स्वाहा।"

(२) फिर दूसरी कन्याको नीचे लिखा मन्त्र पढ़ आग्नेयदिशामें स्थापित करे। उसपर पुष्प क्षेपण करे। " ॐ महति महत्वा ह्री देवी महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं ह्रैं ह्रीं नित्ये स्व सं क्लीं ईं स्वा ला ह्रौं तीर्थंकर पवित्रीं स्नापय स्नापय गर्भशुद्धिं कुरु २ व म ह सं पं ह्रीदेव्यै स्वाहा।"

(३) फिर तीसरी कन्याको नीचे लिखा मन्त्र पढ पुष्प क्षेपण कर दक्षिणदिशामें स्थापित करे। " ॐ महति महत्वा धृतिदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं ह्रैं धृति नित्ये स्व स क्लीं ईं स्वा ला ह्रौं तीर्थंकरपवित्रीं स्नापय२ गर्भशुद्धिं कुरु २ व म ह सं त प धृति देव्यै स्वाहा।

(४) फिर चौथी कन्याको नीचे लिखा मन्त्र पढ़ पुष्प क्षेपण कर नैऋत्य दिशामें स्थापित करे। "ॐ महति महता कीर्तिदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं ह्रैं कीर्ति नित्ये स्व सं क्लीं ईं स्वा ला ह्रौं तीर्थंकरपवित्रीं स्नापय२ गर्भशुद्धिं कुरु२ वं म ह स त प कीर्तिदेव्यै स्वाहा।

(५) फिर पाचमी कन्याको नीचे लिखा मन्त्र पढ़ पुष्प क्षेपण कर पश्चिमदिशामें स्थापित करे।"ॐ महति महता बुद्धिदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्री ह्रैं बुद्धि नित्ये स्वं सं क्लीं ईं स्वां ला ह्रौं तीर्थंकरपवित्रीं स्नापय२ गर्भशुद्धिं कुरु कुरु वं मं हं सं तं प बुद्धिदेव्यै स्वाहा।"

(६) फिर छठी कन्याको नीचे लिखा मन्त्र पढ़ वायव्यदिशामें पुष्पक्षेप स्थापित करे। ॐ महति महता लक्ष्मीदेवी महादेवि ऐं

ह्रीं श्रीं हें लक्ष्मी नि ये स्वं धं क्ष्रीं झ्रीं स्वा ला झ्रौं तीर्थंकरप्रवित्रीं स्नापय २ गर्भशुद्धिं कुरु कुरु वं मं हं सं तं पं लक्ष्मीदेव्यै स्वाहा।"

(७) फिर सातमी कन्याको नीचे लिखा मन्त्र पढ़ पुष्प क्षेपण कर उत्तरदिशामें स्थापित करे। "ॐ महति महता शांतिदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं हे शांति नित्ये स्वं सं क्ष्रीं झ्रीं स्वा लां झ्रौं तीर्थंकरप्रवित्रीं स्नापय२ गर्भशुद्धि कुरु २ वं मं हं सं तं पं शांतिदेव्यै स्वाहा।"

(८) फिर आठमी कन्याको नीचे लिखा मन्त्र पढ़ उसपर पुष्पक्षेपण कर ईशानदिशामें स्थापन करे। "ॐ महति महता पुष्टिदेवि महादेवि ऐं ह्रीं श्रीं हे पुष्टि नित्ये स्व सं क्ष्रीं झ्रीं स्वा लां झ्रौं तीर्थंकरप्रवित्री स्नापय २ गर्भशुद्धि कुरु२ वं मं हं सं तं पं पुष्टिदेव्यै स्वाहा।"

इसतरह श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि, लक्ष्मी, शांति और पुष्टि इन आठ दिक् कुमारी देवियोंको आठ दिशामें स्थापित करे फिर आचार्य नीचे लिखा मन्त्र पढे और उन सबपर पुष्पक्षेपण कर कहे "ॐ दिक्कुमार्यों जिनमातरमुपेत्य परिचरतपरिचरत स्वाहा।"

दोहा—श्री जिनमाता सेव नित, करत रहो सुख पाय। पुण्यलाभ हो जाससे, पातक जाय पलाय।

फिर कुबेरादि चले जावे, मात्र देवियां खड़ी रह जावे, परदा पड़ जावे।

(३) पांच मिनिटके भीतर उसी दूसरे चबूतरेपर ऐसी रचना करे कि एक लेटने लायक सिंहासन सुन्दर सफेद वस्त्रोंसे सज्जित बिछावे। एक ऊंची टेबुलपर आठ मंगल द्रव्य स्थापित करे तथा एक मंजूषा स्फटिकमणिकी व काचकी इतनी बड़ी बनावे जिसमें वह प्रतिमा जिसकी प्रतिष्ठाकी विधि करनी हो सीधी आसके बैठे या खडे। अब जिन माता उस सिंहासनपर बैठी हो। इन आठ कन्याओंके कलश दूसरी टेबुलपर रख दिये जावे। परदेके भीतर माताको ये देवियां किसी बडे थालमें बिठाकर थोडे कुम्भके जलसे स्नान करावें, नए शुद्ध वस्त्र पहनावें। कुछ आभूषण रहने दिया जावे, माता वस्त्रसे सजकर सिंहासनपर बैठी हो, मंजूषा पासमें रक्खी हो। इन देवियोंमेंसे कोई हाथोंमें कडे पहनाती हो, कोई गलेमें हार पहनानेको हार लिये खड़ी हो, कोई तिलक देनेको चन्दन लिये खड़ी हो, एक देवीके हाथमें दर्पण हो, एक पुष्पकी माला लिये हो, एक अतरदान लिये खड़ी हो, एकके हाथमें सुन्दर झारी जलसे भरी एक थालमें रक्खी हो, एकके हाथमें पंखा हो। इस तरह देवियां कायदेसे खड़ी हों, तब परदा उठे। सब लोग कहें—श्री जिनमाताकी जय, उधर बाजे बजते हों, इधर देवी खडे पहनाकर गलेमें हार डाले, पुष्पमाला डाले, तिलक करे, अतर सुँघावें, दर्पण दिखावे, माता हाथमें अतर लेकर वस्त्रोंमें लगावे। फिर झारीसे थालमें ही हाथ धोवे। दो देवियां उस मंजूषाके भीतर चन्दनसे लेप करके एक थालमें रख कर धोवें फिर भीतर मध्यमें व सब ओर चन्दनसे साथिया बनावे। फिर सब देवियां खड़ी हो यह स्तुति पढ़ें—

छन्द—मात तोहि सेवके सुतृप्तिता हमें भई, रागद्वेष टार वीतराग बुद्धि परिणई।
तू ही लोकमाहिं श्रेष्ठ भार्या सुभाग है, इन्द्र तोरी भक्तिमें प्रवीण किये राग है॥
धन्य धन्य हस्त यह सफल भए सु आज हीं, अङ्ग धन्य है कृतार्थ भए आज हीं।
धन्य धन्य देवि पुण्य आतमा विशाल हो, पुत्रका सुलाभ हो सुधर्मका प्रचार हो॥ इतनेमें परदा गिर जावे।

(४) माता रातको यहीं सोवे, देवियां भी यहीं रहे, उनके आरामका भी यहीं प्रबन्ध हो। इस तरह आज दिन रातकी क्रिया समाप्त

की जावे। फिर यदि समय हो तो धर्मोपदेश दिया जावे। दूसरे दिन बड़े सवेरेसे गर्भ कल्याणककी विशेष विधि की जावे।

(४) माताका स्वप्न देखना—रात्रिको आचार्य प्रतिष्ठायोग्य प्रतिमाओंकी जांच कर वेदीमें स्थापित करे। उनको स्वच्छ करके विराजमान करे तथा जिसकी प्रतिष्ठा विधि करनी हो उसको केशर चन्दनसे लेपकर मंजूषा (संदूक)में विराजमान करे, शेषमें भी केशर चंदन लेपे तथा हरएक बिम्बको वस्त्रसे ढक देवे, मंजूषाके ऊपर भी वस्त्र ढक देवे, प्रतिमाको मंजूषामें रखते हुए नीचे लिखा श्लोक व मन्त्र पढ़े—

यो गंगांबुसुरत्नपुष्पकृतभूपस्कारसिंहासन, स्वक्रूपं प्रमदाकुलीकृतजगद्‌गर्भं प्रविश्योत्तमे
लभ्रे वामतिरञ्जयन् रविरिह प्राची परानुग्रह-ग्राहोयद्धृतिवर्द्धसेस्म सुदृशां सोऽस्य जिनस्तन्मुदे ॥२८॥

ॐ णमोर्हते केवलिने परमयोगिने शुक्लध्यानाग्निनिर्दग्धकर्मेन्धनाय सौभाग्य शांताय वरदाय अष्टादशदोषविवर्जिताय स्वाहा।
फिर सर्व प्रतिमापर पुष्प क्षेपे।

सवेरे सूर्योदय पहले मण्डपमें नरनारी टिकटोंसे एकत्र होते रहें उधर मंगलीक बाजे मण्डपके बाहर बजें। इधर दूसरे चबूतरेपर शय्यापर जिनमाता लेटी रहे। उसके पास गोदके यहां प्रतिमासहित मंजूषा रक्खी रहे जो अभी कपड़ेसे ढकी रहे। देवियां आठों अदेलीमें (सेवामें) खड़ी हों, मंगलद्रव्य एक तरफ रक्खे हों तथा १६ स्वप्नोंकी मूर्तियां या चित्र एक मेजपर जो कुछ नीचे हो सुन्दरतासे रक्खे जांय जिनको सब कोई देख सकें। बाजा कुछ देर बज चुके तब परदा उठाया जावे, उस समय वे देवियां नीचे भांति मंगलगीत पढ़ें—

गीताछन्द—अरहंत सिद्धाचार्य पाठक साधु पद वन्दन करूं, निर्मल निजातम गुण मनन कर पाप ताप सब शमन करूं।
अब रात्रि तम विघटा सकल यां प्रात होत सुकाल है, भानु उदयाचलपे आया नभ किया सब लाल है॥
पक्षी मनोहर शब्द बोलें मन्द पवन चलात है, चहुं ओर है मगवान सुमरण वृक्ष प्रफुलित पात है।
बाजे बजें रमणीक माता गीत मंगल हो रहे, तजिये शयन उठ जगत प्यारी बीनती हम कर रहे।
है समय सामायिक मनोहर ध्यान आतम कीजिये, है कर्म नाशन समय सुन्दर लाभ निज सुख लीजिये।

इतने हीमें माता आंखें मलती बैठ जाती है, मंजूषा पासमें रक्खी है और बैठे ही वैसे स्तुति पढ़ती है—

* गीता—वन्दों परम अरहन्त सिद्ध सु साधु संयम गुण धरे, अधिकार परमातप निजातम सुख मनोहर संचरे।
घन धन प्रभात प्रकाश पाया जनो सम्यकृता पगी, अब रात्रि तम मिथ्यात जों सब विघट भानु कला जगी॥

इतना कह हाथ जोड़ मस्तक झुकाकर नमन करे फिर कुछ देर ठहरकर कहे—

*. यद्यपि जिनधर्मका प्रचार ऋषभदेवके ज्ञान होने बाद हुआ था, तथापि यहां प्रतिष्ठाका भाव बताना है इससे यथायोग्य कार्य ऋषभदेवके मिससे दिखाया गया है।

गीत—मैंने देखे सखी सोलह सुपने, सोलह सुपने, सोलह सुपने, मैंने देखे सखी सोलह सुपने ॥ टेक ॥

शुक्ल सु गज ऐरावत देख्यो, मेघ समान सु गरज घने। द्वितीय सुफेद बैल दृढ़ देखा, उन्नत कन्धा शब्द भने ॥ मैंने० ॥

तीजे सिंह धवल शुभ देखा, कंधे लाल सुवर्ण बने। सिंहासन थित धवल लक्ष्मी देखी, नाग सूंड घट न्हवन सने ॥मैंने०॥

पांचें फूल माल द्वय शोभित, भ्रमर भ्रमत गुणगाथ तने। छट्ठे शशि पूरण तारागण, अमृत झरता जगत तने ॥ मैंने० ॥

सप्तम सूर्य निशातम हारी, पूर्व दिशासे उदात ठने। सुवर्ण कलश दोय जल पूरण, कमलपत्रसे ढकित घने ॥ मैंने० ॥

नौमें मीन युगल सर रमते, देखे चंचल भाव जने। दशवें [illegible] रमनसुर सागर, [illegible] लहर ठने ॥ मैंने० ॥

सागर दर्पण सम निर्मल लख, उठत तरंगनि हंसत घने। बारम सिंहासन सुवरणमय, [illegible] जड़ित घने ॥ मैंने० ॥

तेरम स्वर्ण विमान रतन मय, देखत सुर अनुराग घने। चौदम आगभुवन भू उठता, [illegible] कांति अपार जने ॥ मैंने० ॥

पन्द्रह रत्न-राशि द्युति पूरण, दुख दरिद्र संहार ठने। सोलह धूम रहित अग्नि शुभ, [illegible] जलज्वाल घने ॥ मैंने० ॥

तब वृषभ सुवरणमय आयो, मुख प्रवेश करता अपने, ऐसे स्वप्न कबहि नहिं देखे, अचरज होत हृदय अपने ॥ मैंने० ॥

इतना जब पद चुके तब परदा गिर जावे। तब आध घण्टेकी छुट्टी हो जावे।

(५) नित्य पूजा होम—फिर आचार्य व इन्द्र आदि स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहनकर आवें, दूसरा चबूतरा खाली होजावे। वेदीमें स्थित मूल पूज्य प्रतिमाका अभिषेक पूजन व होम करे। प्रथम ही आचार्य तथा इन्द्र (वे दो अवश्य हों) व अन्य बैठकर अङ्गशुद्धि व सकलीकरण करें—जो पहले अध्यायमें कहे गए हैं उनमेंसे थोड़ी विधि करे अर्थात् नं० (१) (२) (३) (४) व (६) इनसे स्नान कर धोती, दुपट्टा' मुकुट आदिकी शुद्धि करे। फिर अँगरक्षाके लिये नं० (१) ॐ णमो अरहंताण......से नं० (११) तक पढ़कर रक्षा करे-अर्थात् हाथोंकी मस्तकादिकी व पगोंकी रक्षा करे। फिर जो अभिषेककी विधि संक्षेपमें यागमण्डलकी पूजामें कह चुके हैं उस तरह अभिषेक करके नित्य देव शास्त्र गुरु पूजा व सिद्ध पूजा करे। फिर तीनों कुण्डोंमें दो दो इन्द्र बैठकर होम करे। १०८ आहुति नीचे लिखा मंत्र पढ़कर डालें। "ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्वशांतिकुरुकुरु स्वाहा" फिर शांतिपाठ विसर्जन करे। इसको सब नरनारी देखें। फिर पर्दा दोनों चबूतरोंपर व सर्व तरफसे पड़ जावे।

परदेके बाहर सूचक पात्र एक सितार लिये घूमता हुआ भजन गाता रहे जबतक तैयारी न हो। जब तैयारी होजावे तब यह कहे—अब राजा नाभिरायकी सभा लगती है इसमें माता मरुदेवी आकर स्वप्नोंका फल पूछेगी जिसको श्री नाभिराय बतायंगे। आपको और अपनी अर्द्धांगिनी तथा सभानिवासी जनोंको आनन्दित करेंगे।

(६) राजाकी सभामें स्वप्नोंका फल—दूसरे चबूतरे पर राजा नाभि सभासदों सहित बैठे हों, आगे एक उपदेशी भजन होरहा हो, इतनेमें परदा उठे। भजन होचुके तब माता मरुदेवी आठ देवियोंके साथ वस्त्राभूषणसे सज्जित आवे। देवियोंके हाथोंमें

खड्ग आदि नानाप्रकारके सुन्दर शस्त्र हों। देवीको आते देखकर राजा कहैं-प्रिय ! आइये, विराजिये, अर्ध सिंहासनपर सुशोभित हूजिये, यह सभा आपके पधारनेसे प्रफुल्लित होरही है। रानी मरुदेवी बांईतरफ बैठजावे और नीचे लिखे गीतमें वर्णन करें—

छन्द गीता।

हे नाथ ! पिछली रातमें हम सुपन सोला देखिया, गज बैल सिंह सुदेवि कमला न्हवन करतहिं पेखिया।
द्वय पुष्पमाल सु चन्द्र पूरण सूर्य सुवरण कलश दो, युग मीन सरवर कमल युत सागर सु सिंहासन भलो॥
रमणीक सुर्ग विमान उतरत नाग भवन सु आवतो, सुरतन राशि सुकांति पूरण अगनि धूम न पावतो।
तब अन्तमें इक वृषभ मेरे मुख प्रवेश करत भया। इनको सुफल सुहिये प्रभू मुझ दीनपर करके दया॥

महाराज कुछ देर विचारते हैं और तब अवधिज्ञानसे सब हाल जानकर इसतरह कहते हैं—

गीता छन्द।

गज देखनेसे देवि तेरे पुत्र उत्तम होयगा। वर वृषभका है फल यही वह जगत गुरु भी होयगा॥ १॥
वर सिंह दर्शनसे अपूरव शक्ति धारी हो यगा। पुष्पमालासे वह उत्तम तीर्थ करता होयगा॥ २॥
कमला न्हवनका फल यही सुरगिरि न्हवन सुरपति करैं। अरु पूर्ण शशिके देखनेसे जगत जन सब सुख करैं॥ ३॥
वर सूर्यसे वह हो प्रतापी कुंभ युगसे निधिपति। सर देखनेसे सुभग लक्षण धार होवे जिनपती॥ ४॥
युग मीन खेलत देखनेसे हे प्रिये चित धर सुनो। होवे महा आनन्दमय वह पुत्र अनुपम गुण सनो॥ ४ अ॥
सागर निरखते जगतका गुरु सर्वज्ञानी होयगा। वर सिंह आसन देखनेसे राज्य स्वामी होयगा॥ ५॥
अर सुर विमान सुफल यही वह स्वर्गसे चय होयगा। नागेंद्र भवन विशालसे वह अवधिज्ञानी होयगा॥ ६॥
बहु रत्न-राशि दिखावसे वह गुण खजाना होयगा। वर धूम रहित जु अग्निसे वह कर्म ध्वंसक होयगा॥ ७॥
वर वृषभ मुख परवेश फल श्री वृषभ तुम वपु अवतरे। हे देवि तू पुण्यातमा आनन्द मगल नित भरे॥ ८॥

माताका मन इस फलको सुनकर प्रफुल्लित होगया तब सब देवियां मिलकर जो अबतक विनयसे खड़ी थीं मंगलगान करने लगीं—

गीत छन्द धोदका—हम जिनराज जनम सुन पाये। हर्ष भयो नहीं अंग समाए॥
धन्य नाथ तुम जगत पिता हो। धन्य मात तुम सुखदाता हो॥
धन्य समय यह परम सुहावन। आज भए हम जन सब पावन॥
आज जगतका भाग्य सुहाया। वृषभनाथ सम्वाद सुनाया॥

या युगके तीर्थंकर प्रथमा । प्रगट होगये तारण अधमा ॥

हम वन्दन कर दुःख नशावें । भव आताप सकल प्रशमावें ॥

धन्य नाथ तुम दीन दयाला । करहु कृपा हम होय निहाला ॥ अन्तमें परदा पड़ जावे।

तब सूचक पात्र परदेके बाहर फिरता बजाता हुआ कुछ गाता हुआ, कुछ देर पीछे सूचित करे कि तीर्थंकरके गर्भमें आनेका सम्वाद जानकर इन्द्रादिक देव सब राजाके गृहमें जायेगे और भक्ति करके अपना जन्म सफल मनाएंगे।

(७) इन्द्रोंका आकर गर्भकल्याणक करना—तब परदेके भीतर यह रचना की जाय। दूसरे चबूतरेपर तीर्थंकरकी प्रतिमा जिस मंजूषामें है उसको ऊंचे स्थानपर विराजमान करे, वस्त्र ऊपरसे निकाल देवे जिससे प्रतिमा शीशेके भीतरसे दिख सके। पास ही एक चौकीपर प्रतिमाकी मंजूषासे कुछ ही नीचे माता बैठी हो तथा पास ही पिता बैठे हों, देवियां विनय सहित खड़ी हों, मंगल द्रव्य आठों एक तरफ रक्खे हों और एक मण्डल २४ कोठोंका सुन्दर एक छोटी चौकीपर मांडा जावे, वह प्रतिमाके आगे विराजमान किया जावे। कुछ सभासद भी कायदेसे बैठे हों, आगे उपदेशी भजन होते हों तब परदा उठाया जावे। उधर इन्द्र इन्द्राणी व अनेक इन्द्र—समूह बाजा बजाते हुए व नीचे लिखा मंगलगीत गाते हुए मंडपकी तीन प्रदक्षिणा देकर राजसभामें प्रवेश करें।

गीत—जय तीर्थंकर जय जगतनाथ, अवतरे आज हम हैं सनाथ।

धन भाग महारानी सुहाग, जो उर आए जिन सुरग त्याग ॥ १ ॥

हम भक्ति करन उमगे अपार, आए आनन्द धर राज्यद्वार।

हम अंग सफल अपना करेंय, जिन मात पिता सेवा करेंय ॥ २ ॥

यह जगत तात यह जगत मात, यह मंगलकारी जगविख्यात।

इनकी महिमा नहिं कही जाय, इन आतम निश्चय मोक्ष पाय ॥ ३ ॥

जिनराज जगत उद्धार कार, सब जगत पूज्य अघ चूरकार।

तिनके प्रगटावनहार नाथ, हम आए तुम घर नाय माथ ॥ ४ ॥

ऐसा गीत गाते हुए राजसभामें आकर मात पिताको देखकर आनंदित हो मस्तक नत हो भूमिपर दण्डवत् करते हैं और दो थाल वस्त्राभूषणसे सज्जित हों जिनको देव साथ लावें, उनको उन माता पिताके आगे एक टेबुल हो उसपर रख भेट करते हुए नीचे लिखा गान पढ़ते हैं। यहांपर इन्द्र नृत्य व गान कर सकते हैं।

गान इन्द्रका—तुम देखे दरश सुख पाये नयना। सुख पाये नयना, सुख पाये नयना ॥ तुम० ॥ टेक ॥

तुम जग ताता तुम जग माता, तुम वन्दनसे भव भय ना ॥ तुम० ॥ १ ॥

तुम गृह तीर्थंकर प्रभु आए, तुम देखे सोलह सुपना ॥ तुम० ॥ २ ॥
तुम भव त्यागी मन वैरागी, सम्यक्‌दृष्टि शुचि वयना ॥ तुम० ॥ ३ ॥
तुम सुत अनुपम ज्ञान विराजे, तीन ज्ञानधारी सुजना ॥ तुम० ॥ ४ ॥
तुम सुत राज्य करै सुरनरपे, नीति निपुण दुःख उद्धरना ॥ तुम० ॥ ५ ॥
तुम सुत साधु होय वन विहरे, तप साधत कर्मन हरना ॥ तुम० ॥ ६ ॥
तुम सुत केवल ज्ञान प्रकाशे, जग मिथ्यातम सब हरना ॥ तुम० ॥ ७ ॥
तुम सुत धर्म तत्त्व सब भाषे, भवि अनेक भवसे तरना ॥ तुम० ॥ ८ ॥
कर्म बन्ध हर शिवपुर पहुंचे, फिर कबहूं नहिं अवतरना ॥ तुम० ॥ ९ ॥
हम सब आज जन्म फल मानो, गर्भोत्सव कर अघ दहना ॥ तुम० ॥ १० ॥

फिर इन्द्र इन्द्राणी मिलकर खड़े हो मण्डलकी पूजा करें, अब बैठ जावे। यहां २४ तीर्थंकरोंकी माताओंकी पूजाकरनी है—

प्रथम–स्तुति सहित स्थापना।

वंशक्षायिकदृक्समिद्धसुधियां योस्मिन्मनूनामभू–द्ये चेक्ष्वाकुकुरूग्रनाथहरियुग्वंशाः पुरोवेधसा।
आधानादिविधिप्रबन्धमहिताः सृष्टास्तदुत्थार्थभू–भर्तृस्वाभिकजीविता सुकुलजा जैन्यो जयंत्यंबिकाः ॥१०॥
मृत्यादिप्रथहग्विशुद्धयनुगचित्तत्कर्मणोऽागम–द्रव्यो गोत्रमगोत्रभागभिजनो नेमिस्तथा सुव्रतः।
तद्वत्काश्यपगोत्रिणस्तदितरे णोकर्मनो आगम–द्रव्योघेष्वथवान् स्वयं यदुदरेष्वंबाः प्रसीदंतु ताः ॥ ११ ॥
मरुदेवीं वृषस्यार्च्या विजयामजितस्य च। सुषेणां संभवेशस्य सिद्धार्थां नंदनप्रभोः ॥ १२ ॥
सुमंगलाह्वां सुमतेः सुसीमां पद्मरोचिषः। पृथ्वीं सुपार्श्वस्य लक्ष्मणां चन्द्रलक्ष्मणः ॥ १३ ॥
रामां श्रीपुष्पदंतस्य सुनन्दां शीतलार्हतः। विष्णुश्रियं श्रेयसश्च वासुपूज्यस्य भोर्जयाम् ॥ १४ ॥
सुधार्मलक्ष्मीं विमलार्हतोऽनंतस्य सुव्रताम्। ऐरिणीं धर्मनाथस्य कमलां शांतयोशिनः ॥ १५ ॥
सुमित्रां कुंथुनाथस्य अरभर्तुः प्रभावतीम्। मल्लेः पद्मावतीं वर्ग सुव्रतस्य मुनीशिनः ॥ १६ ॥
विनतां नमिनाथस्य शिवां नेमिजिनेशिनः। देवदत्तां च पार्श्वस्य वीरस्य प्रियकारिणीम् ॥ १७ ॥
चतुर्विंशतिमप्येताः सवित्रीस्तीर्थकारिणाम्। स्थापयामीह तद्गर्भपवित्रिजगत्त्रयाः ॥ १८ ॥

यह स्तुति पढ़ पुष्प क्षेपे ।

भाषा—दोहा—श्री जिन चौबिस मात शुभ, तीर्थंकर उपजाय कियो जगत कल्याण बहु, पूजों द्रव्य मंगाय ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्रमातरोऽत्रावतर २ संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ २ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव २ वषट् सन्निधिकरणम् ।

छन्द चाली—भरि गंगा-जल अविकारी, मुनि चित सम शुचिता धारी ।
जिन मात जजूं सुखदाई, जिन धर्म प्रभाव सहाई ॥
ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्रमातृभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

घसि केशर चन्दन लाऊं, भव ताप सकल प्रक्षाऊं ।
जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई ॥
ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्र मातृभ्यो चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभ अक्षत दीर्घ अखण्डे, तृष्णा पर्वत निज खण्डे ।
जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई ॥
ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्र मातृभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुवरण मय पावन फूला, चित काम व्यथा निर्मूला ।
जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई ॥
ॐ ह्रीं मरुदेव्यादि जिनेन्द्र मातृभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

ताजा पकवान बनाऊं, आसे क्षुध रोग नशाऊं ।
जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई ॥
ॐ ह्रीं मरुदेव्यादिजिनेन्द्रमातृभ्यो चरुं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपक रतन मय लाऊं, सब दर्शनमोह हटाऊं । जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्मप्रभाव सहाई ॥
ॐ ह्रीं मरुदेव्यादिजिनेन्द्रमातृभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूपायन धूप जलाऊं, कर्मनका वंश मिटाऊं । जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्मप्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादिजिनेन्द्रमातृभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

फल उत्तम उत्तम लाऊं, शिव फल उद्देश बनाऊं। जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्मप्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादिजिनेन्द्रमातृभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुचि आठों द्रव्य मिलाऊं, गुण गाकर मन हरषाऊं। जिन मात जजूं सुखदाई, जिनधर्मप्रभाव सहाई ॥

ॐ ह्रीं मरुदेव्यादिजिनेन्द्रमातृभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

गर्भकल्याणक तिथिका प्रत्येक अर्घ ।

गीताछन्द—सर्वार्थसिद्धि विमानसे जिन ऋषभ चय आए यहां, मरुदेवी माता गरभ शोभै होय उत्सव शुभ तहां।
आषाढ़ वदि दुतिया दिना सब इन्द्र पूजें आयके, हमहूं करैं पूजा सुमाता गुण अपूरब ध्यायके ॥

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णा द्वितीयायां श्री वृषभनाथजिनेन्द्र गर्भधारिकाय माता मरुदेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

दोहा—जेठ अमावस सार दिन, गर्भ आय अजितेश। विजया माता हम जजें, मेटैं सर्व कलेश ॥

ॐ ह्रीं जेठकृष्णामावास्यां श्री अजितजिनेन्द्रगर्भधारिकाय श्री विजयादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

संकरछन्द—फागुन असित सित अष्टमीको गर्भ आए नाथ, धन पुण्य मात सुसैनका संभव धरे सुख साथ।
उपकार जगका जो भया सुर गुरु कथन थक जाय, हम ल्यायके शुभ अर्घ पूजें विघ्न सब टल जाय ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णाष्टम्यां श्री संभवतीर्थंकरगर्भधारिकाय माता सुसैनायै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

गाथाछन्द—गर्भस्थिति अभिनन्दा, वैसाख सित अष्टमी दिना सारा।
सिद्धार्था शुभ माता पूजूं चरण सुजान उपकारा ॥

ॐ ह्रीं वैशाख शुक्लाष्टम्यां श्री अभिनन्दननाथं श्री सिद्धार्थादेव्यै अघ निर्वपामीति स्वाहा (४)

सोरठा—श्रावण सित पख आय, मात मंगला उर बसे। श्री सुमतीश जिनाय, पूजूं माता भावसों ॥

ॐ ह्रीं श्री श्रावण शुक्ला द्वितीयायां श्री सुमति जिनेन्द्रं गर्भ धारिकाय श्री मंगलादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (५)

छन्द शिखरणी—वदी षष्ठी जानो सुभग महिना माघ सुदिना, सुसीमा माताके गर्भ तिष्ठे पद्म सु जिना।
जजों लेके अर्घं मात देवी द्वन्द चरणा, कटैं जासे हमरे सकल कर्म लेहु शरणा ॥

ॐ ह्रीं श्री माघ कृष्ण षष्ठ्यां श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्रं गर्भ धारिकाय श्री सुसीमादेव्यै अघ निर्वपामीति स्वाहा । (६)

छंद घोदका–भादव शुक्ल छठी तिथि जानी, गर्भ धरे पृथ्वी महरानी।
श्री सुपार्श्व जिननाथ पधारे, जजूं मात दुख टाल हमारे ॥
ॐ ह्रीं भादव शुक्लाष्टम्यां श्री सुपार्श्व जिनेन्द्रं गर्भधारिकाय श्री पृथ्वीदेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (७)
छंद शिखरणी–सुभग चैतर महिना असित पखमें पांचम दिना, सुलखना माताने गर्भ धारे चन्द्र सु जिना ॥
जजों लेके अर्घं मात जिनके शुद्ध चरणा, कटैं जासे हमरे सफल कर्म लेहु शरणा ॥
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्ण पंचम्यां श्री चन्द्रप्रभुजिनेन्द्रं गर्भ धारिकाय श्री सुलक्षणादेव्यै अर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (८)
सोरठा–पुष्पदंत भगवान, मात रमाके अवतरे। फागुन नौमि महान, जजौं मातके चरण जुग ॥
ॐ ह्रीं फागुनकृष्णनवम्यां पुष्पदंतजिनेन्द्र गर्भ धारिकाय रमादेव्यै अर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (९)
चाली–वदि चैत तनी छठ जानी, सीतल प्रभु उपजे ज्ञानी। नंदा माता हरखानी, पूजूं देवी उर आनी ॥
ॐ ह्रीं चैत्र कृष्ण अष्टम्यां श्री सीतल जिनं गर्भ धारिकाय श्री नन्दादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१०)
चाली–वदी जेठ तनी छठि जानी, विष्णुश्री मात बखानी। श्रयांसनाथ उपजाए, पूजूं माता गुण गाए ॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्ण षष्ठ्यां श्री श्रेयांसनाथं गर्भ धारिकाय श्री विष्णुश्रीदेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (११)
चाली–आषाढ़ वदी छठि गाई, श्री वासुपूज्य जिनराई। सु जया माता हरखानी, पूजूं ता पद उर आनी ॥
ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णाषष्ठ्यां श्री वासपूज्यजिनं गर्भ धारिकाय श्री जयादेव्यै अर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (१२)
छंद मालती–जेठ वदी दसमी गणिये शुभ, मात सुश्यामा गर्भ पधारे,
नाथ विमल आकुलता हारी, तीन ज्ञानधर धर्म प्रचारे।
ता माताका धन्य भाग हैं, पूजत हैं हम अर्घ सुधारे,
मंगल पावें विघ्न नशावें, वीतरागता भाव सम्हारे।
ॐ ह्रीं ज्येष्टकृष्णदशम्यां श्री विमलनाथं गर्भ धारिकाय श्री श्यामादेव्यै अर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (१३)
अडिल्ल–एकम कातिक कृष्ण गर्भमें आयके, नाथ अनन्त सु सुरजा माता पायके।
पूजूं देवी सार धन्य तिस भाग है, जासे विघ्न पलाय उदय सौभाग है ॥
ॐ ह्रीं कातिककृष्णा एकम् श्री अनंतनाथं गर्भ धारिकाय श्री सुरजादेव्यै अर्घं निर्वपा [

अडिल्ल–मात सुव्रता धर्म जिनं उर धारियो, तेरसि सुदि वैशाख सु सुख संचारियो।
पूजूं माता ध्याय धर्म उद्धारणी, शिवपद जासे होय सुमंगल कारिणी॥

ॐ ह्रीं वैशाख शुक्ल त्रयोदश्यां श्री धर्म जिन गर्भ धारिकाय श्री सुव्रतादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१५)

शिखरनी–महा ऐरादेवी परम जननी शांति जिनकी, सुदा सातैं भादों करत पूजा इन्द्र तिनकी।
जजूं मैं ले अर्घं मात जिनके द्वन्द्व चरणा, भजे मम अघ सारे नमत अब है जास शरणा॥

ॐ ह्रीं भादो शुक्ल सप्तम्यां श्री शांतिजिनं गर्भ धारिकाय श्री ऐरादेव्यै अघ निर्वपामीति स्वाहा। (१६)

चाली–सावन दशमी अन्धियारी, जिन गर्भ रहे सुखकारी।
प्रभु कुंथु श्रीमती माता, पूजू जासों लहुँ साता॥

ॐ ह्रीं श्रावण कृष्ण दशम्यां श्री कुंथ जिनं गर्भ धारिकाय श्रीमती देव्यै अघ निर्वपामीति स्वाहा। (१७)

छन्द मालती–है गुण शील मनो सरिता, अरनाथ तना जननी सुख खानी।
मित्रा नाम प्रसिद्ध जगतमें, सेव करत देवी हरखानी॥
मुक्ति होनको यश धारत है, सम्यक् रत्नत्रय पहचानी।
फागुनकी सित तीज दिना अर, गर्भ धरे जजि हों महरानी॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणशुक्ला तृतीयायां श्री अरनाथं गर्भ धारिकाय श्री मित्रादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१८)

दोहा–चैत्र शुक्ल परिवा बसे, मल्लिनाथ जिनदेव। प्रजावतीके गर्भमें, जजूं मात कर सेव॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ल एकं श्री मल्लिजिन गर्भे धारिकाय श्री प्रजापतीदेव्यै अघ निर्वपामीति स्वाहा। (१९)

अडिल्ल—श्रावण बाढ़ तुतिया दिन, सुव्रतिनाथ जू श्यामा उरमें बसे ज्ञान त्रय साथ जू।
ता माताके चरणकमल पूजें सदा, मंगल होय महान विघ्न जावें विदा॥

ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णा द्वितीयायां श्री मुनिसुव्रतजिनं गर्भ धारिकाय श्यामादेव्यै अघ निर्वपामीति स्वाहा। (२०)

सोरठा–नमिनाथ भगवान, विपुला माता उर बसे। क्वार बदी दुज जान, ता देवी पूजूं मुदा॥

ॐ ह्रीं आश्विन कृष्ण द्वितीयायां श्रीनमिनाथं गर्भ धारिकाय विपुलादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१)

मालती–कार्तिक मास सुदी छठिके दिन, श्री जिन नेम प्रभू सुखकारी।
मात शिवाके गर्भ पधारे, मुदित भए जगके नरनारी॥

धन्य मात शिव-पथ अनुगामी, मोक्ष नगरकी है अधिकारी।
पूजूं द्रव्य आठ शुभ लैके, मिटत कालिमा कर्म अपारी ॥

ॐ ह्रीं कार्तिक शुक्ला षष्ठ्यां श्रीनेमिजिनं गर्भ धारिकाय शिवादेव्यै अर्घ निर्वपामीति स्वाहा। (२१)

चालीछंद-वैशाख वदी दुज जाना, श्रीपार्श्वनाथ भगवाना। वामादेवी उर आए, पूजत हम भाव लगाए ॥

ॐ ह्रीं वैशाख कृष्णा द्वितीयायां श्रीपार्श्वजिनं गर्भे धारिकाय वामादेव्यै अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२)

छंदमालती-मास अषाढ़ सुदी छठिके दिन, श्री जिन वीर प्रभु गुणधारी।
त्रिशला माता गर्भ पधारे, सकल लोकको मंगलकारी ॥
मोक्षमहलको है अधिकारी, ज्ञान सुधाको भोगनहारी।
जजूं मातके चरण युगलको, हरूं विघ्न होऊं अविकारी ॥

ॐ ह्रीं आषाढ़ शुक्ला षष्ठ्यां श्री वीर प्रभु गर्भ धारिकाय श्री त्रिशलादेव्यै अर्घ निर्वपामीति स्वाहा (२३)

जयमाल।

छंद स्रग्विणी-धन्य हैं धन्य हैं मात जिननाथकी, इन्द्र देवी करैं भक्ति भावां थकी।
पूजि हों द्रव्य ले विघ्न सारे टलें, गर्भ कल्याण पूजन सकल अघ दलें ॥ १
रूपकी खान हैं शीलकी खान हैं, धर्मकी खान हैं ज्ञानकी खान हैं।
पुण्यकी खान हैं, सुखकी खान हैं, तीर्थजननी महा शांतिकी खान हैं ॥ २ ॥
भेद विज्ञानसे आप पर जानतीं, जैन सिद्धांतका मर्म पहचानतीं।
आत्म-विज्ञानसे मोहको हानतीं, सम्य चारित्रसे मोक्ष पथ मानतीं ॥ ३ ॥
तोन आहार नीहार नहिं धारतीं, वीर्य अनुपम महा देह विस्तारतीं।
गर्भ धारण किये दुःख सब टालतीं, रूपको ज्ञानको वृद्धि कर पालतीं ॥ ४ ॥
मात चौबिस महामोक्ष अधिकारिणी, पुत्र जननीं जिन्हें मोक्षमें धारिणी।
गर्भ कल्याणमें पूजते आपको, हो सफल यज्ञ यह छांड़ सन्तापको ॥ ५ ॥

घत्ता त्रिभंगीछन्द-जय मंगलकारी मात हमारी बाधाहारी कर्म हरी,

इम पूजें ध्यावें मंगल पावें, शक्ति बढ़ावें वृष पाके,
जिन प्रभु मनोहर शांत सुधाकर, सफल करें तव गुण गाके ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिन मातृभ्यः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

फिर इन्द्र व अन्य जो प्रभुके पास वहां हों माता पिता सब खड़े हो सिद्धभक्ति, चारित्रभक्ति व शांतिभक्ति करें (जो पाठके अन्तमें हैं) और कायोत्सर्ग रूपमें १०८ दफे णमोकारमन्त्र जपकर मंजूषापर पुष्प क्षेपण करें तथा अन्य प्रतिमाओंपर जो प्रतिष्ठाके लिये हों पुष्प क्षेपण करे-विसर्जन पढ़ इस समयकी पूजा समाप्त करे ।

(८) देवियोंका माताकी सेवा व प्रश्नोत्तर करना—तीसरे पहर या रात्रिको जब अवसर हो तब फिर मण्डप नरनारियोंसे भरा जावे । पर्देके भीतर दूसरे चबूतरेपर इस भांति दर्शनीय रचना रची जावे-एक सिंहासनपर माता बैठी हों, मंजूषा पासमें उनकी पासमें विराजित हो । आठ कुमारिका देवियें तरह २ सेवा कर रही हों, आठ मंगल द्रव्य एक ओर रक्खे हों, एक देवी तलवार लिये पीछे खड़ी हों, दो देवियां दोनों ओर चमर कर रही हों एक देवी पंखा लिये धीरे २ पंखा कर रही हो, एक पानदान लिये हो, एक फूलोंका गुलदस्ता, एक पानीकी झारी, एक माताके चरण दाबती हो । ऐसी दशामें पर्दा उठे । पहले ही सूचक पात्र सब सभाको कहे कि दिक्कुमारियां माताकी सेवा कर रही हैं तथा तरह २ के प्रश्नोत्तर करके माताको प्रसन्न कर रही हैं । जब पर्दा उठ जावे तब दो मिनट पीछे दो चमर १ तलवार व १ पंखेवाली इन चारको छोड़कर शेष चार देवियां अपने हाथकी वस्तु एक ओर रखकर बैठ जावें और नम्बरवार या क्रमवार माताजे प्रश्नोत्तर करे ।

प्रश्न १-दोहा-सरल उच्च छायायुक्त, पुष्प नाम क्या होय । कौन मनोहर धाम मन, एक शब्द क्या होय ॥

उत्तर-माता-सालकानन-अर्थात् दोहा-साल वृक्ष वन और सुन, केश अहिन सुरस अंग ।
सालकानन वाक्यसें, उभय अर्थका संग ॥

प्रश्न (२)-कः सुपिंजरेमें रहे, कः निष्ठुर प्राणि । कः आधार जीवका, कः अक्षर सुन जाणि ॥

इस दोहेको पूरा कीजिये ।

माता उ०-शुकः सुपिंजरेमें रहे, काक निष्ठुर प्राणि । कः अन्धार जीवका, श्लोक अक्षर सुन जाणि ॥

प्रश्न (३)-कौन गर्भमें आपके, कौन नहीं तुम पास । कौन हते भूखा मनुष उत्तरको अरदास ॥

उ० माता-तुक् अर्थात पुत्र, शुक् अर्थात् शोक; रुक् अर्थात् रोग । दोहा-पुत्र देखि मम गर्भसें, शोक नहीं मुझ पास ।
रोग हते भूखा मनुष, यही मात है खास ॥

प्रश्न (४)-रुचिकर भोजन कौन है, गहराको जल धाम । कौन नाथ है आपका, उत्तर दीजे जान ॥

उत्तर-रूप, भूप, अर्थात्-रुचिकर भोजन दाल है, गहरा कूप बखान । भूप नाथ मेरा लखो, ऐसो उत्तर जान ॥
प्रश्न (५)-नाम जिनेन्द्र बखानिये, हाथी लक्षण और । एक वाक्यसे अर्थ दो, कह दीजे बुधि खोल ॥
उत्तर-सुरवाद अर्थात्-देवोंको वर देत है. प्रभु सुखारद बखान । सुन्दर शब्द सुहातको, धारक नाम प्रमाण ॥

प्रश्न (६)-तुमसी त्रिया कौन जग जान । उत्तर माता-तीर्थंकर सुत जनै महान ।
प्रश्न (७)-जगमें सुभट कौनसे भाय । उत्तर-जे नर जीतें विषय कषाय ।
प्रश्न (८)-कौन कहावे कायर दीन । उत्तर-इन्द्रीमद भेदन बल हीन ।
प्रश्न (९)-कौन सतपुरुष नर भव सार । उत्तर-जो साधे पुरुषारथ चार ।
प्रश्न (१०)-कौन कापुरुष कहिये मर्म । उत्तर-जो शठ साध न जाने धर्म ।
प्रश्न (११)-धिक किनका कहिये अर्थंग उत्तर-जे नर करें प्रतिज्ञा भङ्ग ।
प्रश्न (१२)-कहे कौन नर नित्य पवित्त उत्तर-ब्रह्मचर्य धरी दृढ़ चित्त ।
प्रश्न (१३)-कौन पशु मानुष आकार । उत्तर-जिनके हिरदे नाहिं विचार ।
प्रश्न (१४)-बधिर कौनसे उत्तर देह । उत्तर-जैन सिद्धान्त सुनैं नहिं जेह ।
प्रश्न (१५)-मूक नाम नर कैसे लहैं । उत्तर-जो हित सांच वचन नहिं कहैं ।
प्रश्न (१६)-लक्ष्मी भुजा कौन कर हीन । उत्तर-जिन पूजा मुनि दान न कीन ।
प्रश्न (१७)-कौन पांगले पाव समेत । उत्तर-जे तीरथ परसे न अचेत ।
प्रश्न (१८)-कौन कुरूप जननि कहु एह । उत्तर-शील शिंगार विना नर जेह ।
प्रश्न (१९) वेग कहा करिये बड़ भाग । उत्तर-दिक्षा ग्रहण जगतको त्याग ।
प्रश्न (२०)-जियको कौन शरण है माय । उत्तर-पंच परम गुरु सदा सहाय ।
प्रश्न (२१)-कौन तपस्वी भव-दुःख भरैं । उत्तर-आतम अनुभव बिन तप करैं ।
प्रश्न (२२)-जगमें कौन रतन है सार । उत्तर-सम्यग्दर्शन रत्न अपार ।
प्रश्न (२३)-को विन नर यह पशु समान । उत्तर-विद्या विन नर पशु समान ।
प्रश्न (२४)-उत्तर-कौन हते अघ जग वश होय । उत्तर-मोह हते अघ जग वश होय ।
प्रश्न (२५)-क्या विन गृहचारी दुख पाय । उत्तर-पैसे विन नित ही दुख पाय ।

प्रश्न (२६)-नाम पुरुष कैसे सफलाय। उत्तर-जो पुरुषारथ करैं बनाय।
प्रश्न (२७)-कौन पुत्र है मृतक समान। उत्तर-विद्या विनय हीन सुत जान।
प्रश्न (२८)-काफी भक्ति करे सुख होय। उत्तर-श्री जिनराज भक्ति सुख होय।
प्रश्न (२९)-कासे नर जग उन्नति करै। उत्तर-वृथा समय नहिं खोवै करै।
प्रश्न (३०)-प्रात प्रथम क्या करिये माय। उत्तर-सामायिक शुभ ध्यान लगाय।
प्रश्न (३१)-कन्या कैसे मार गनाय। उत्तर-जो विद्या पढ़ विनय कराय।
प्रश्न (३२)-कौन समय कन्या वर जोग। उत्तर-जब युवति दृढ़ हो सुत जोग।
प्रश्न (३३)-कैसा वर कन्या वर जोग। उत्तर-उद्योगी युवान दृढ़ योग।
प्रश्न (३४)-कौन नार ग्रह सुमति बढ़ाय। उत्तर-मिष्ट वचन भाषी सुखदाय।
प्रश्न (३५) कौन काज उत्तम है माय। उत्तर-आतम ध्यान परम सुखदाय।
प्रश्न (३६)-कौन कथासे पाप नशाय। उत्तर-धर्म कथासे पाप नशाय।
प्रश्न (३७)-को व्यवहार धर्म सुखदाय। उत्तर-धर्म अहिंसा जग सुखदाय।
प्रश्न (३८)-कौन धनी जगमें सुख पाय उत्तर-सन्तोषी दानी सुखदाय।
प्रश्न (३९)-कौन माय जगको वश करै उत्तर-हितमित मिष्ट वचन उचरै।
प्रश्न ४०)-कौन उपाये मन बदलाय। उत्तर-हितमित धर्म उपदेश सुनाय।
प्रश्न (४१) कौन भांति त्रय लोक जिताय उत्तर-शुक्लध्यान जो धरै स्वभाय।
प्रश्न (४२) कौन करै अविरतिका नाश। उत्तर-सम दम सहित समय अभ्यास।
प्रश्न (४३)-कौन उतारे कर्मन भार। उत्तर-जो द्वादश तप करै सम्भार।
प्रश्न (४४)-कौन ग्रही मनमें सुख पाय। उत्तर-न्याय मार्ग धन जो कमाय।
प्रश्न (४५)-मात कौन रोगी नहिं होय। उत्तर-जो विवेकसे भोगी होय।
प्रश्न (४६)-संकट समय कौन सहकार। उत्तर-धैर्य धर्म मत तत्व विचार।
प्रश्न (४७)-मरण समय क्या करिये काम। उत्तर-समता भाव शांत परिणाम।
प्रश्न (४८)-मित्र कौन है जग हितकार। उत्तर-जो कुमार्गसे लेय निकार।

प्रश्न (४९)-शत्रु कौन है, मात बताय। उत्तर-धर्म छुड़ाय कुपथ ले जाय।
प्रश्न (५०)-शरण कौनकी है सुखकार। उत्तर-आतम निज तीर्थंकर सार।

इसी तरह और भी उपयोगी प्रश्न तर हो सकते हैं। पीछे पंखेवाली जोरसे पखा करे, पुष्पवाली फूल सुंघावे, अत्तरवाली अत्तर सुंघावे व कानोंमें लगावे, चमरोंवाली जोरसे चमर करे। इतनेमें बाजे बाहर बजे। इधर ऊपरसे पहलेकी तरह रतनकी वर्षा हो। यदि रत्न या सितारे या चांदी सोनेके फूल कम हों तो रंगे हुए पीले चावल साथमें मिलाले। दो मिनट तक खूब वर्षा हो तब सब लोग जयजयकार कहे। पश्चात् देवियां माताके सामने खड़ी हो स्तुति पढ़ें—

चौपाई—जय जय मात परम अधिकारी, देखत हमको सुख है भारी।
तुम सेवातैं पुण्य कमाया, अपना सुर भव सफल कराया ॥ १ ॥
धन तीर्थंकर तीर्थ प्रचारें, मिथ्यादृष्टी जीव उधारें।
आप तरें औरनको तारें, धर्म जहाज जगत विस्तारें ॥ २ ॥
तिनको जननै हारी माता, यातैं जग उद्धारी माता।
तीन लोक सिरताजा माता, नमन करत तोकूं जगमाता ॥ ३ ॥
तू है श्री जिन गृह सुखकारी, जिन तीर्थंकर उरमें धारी।
यातैं परम पूज्य सुखदाई, नमन करत पुन पुन हे माई ॥ ४ ॥
तुम शिवगामी उत्तम नारी, शीलाभूषण उत्तम धारी।
श्री जिनमात कृपा अब करिये, सेवकके सब पातक हरिये ॥ ५ ॥

इस तरह देवियां गाती रहें, परदा गिर जावे। यहांतक गर्भकल्याणककी विधि पूर्ण हुई।

अध्याय चौथा ।

जन्मकल्याणक ।

गर्भकल्याणकसे दूसरे दिन सवेरे जन्मकल्याणककी क्रिया करनी उचित है ।

(१) प्रभुका जन्म होना व इन्द्रका आना—बड़े सवेरे ही सब लोगोंको आमन्त्रण किया जावे, टिकटों द्वारा मंडपमें बैठें। प्रतिष्ठाके पात्र शीघ्र ही वेदीके निकट आवे। खास कर आचार्य व इन्द्र तथा पिता आकर गर्भकल्याणकमें कही हुई विधिके अनुसार जैसा नं० (५) में कहा है अंगशुद्धि, व सकलीकरण करे, अंगरक्षा करे व अभिषेक करके नित्यपूजा व सिद्धपूजा करे। फिर उसी प्रमाण तीनों कुण्डोंमें होम उसी तरह कहे हुए प्रमाण हो जावे। यह सब काम हो चुकनेपर फिर आगेकी क्रिया बताते हैं।

अति प्रात:कालसे यह काम शुरू हो क्योंकि जबतक जन्मकल्याणक पूर्ण न हो तबतक सब पात्रोंको व दर्शकोंको यथाशक्ति भोजन न करना योग्य है। तब सब इन्द्र इन्द्राणी वहासे चले जावे, आचार्य व माता पिता आदि रहे। आगे परदा पड़ जावे। परदेके भीतर सिंहासनपर माता बैठी हो, पासमें प्रतिमा सहित मंजूषा विराजमान हो व आठ मंगलद्रव्य रक्खे हों व आठों देवियां सेवामें हाजिर हों। ऐसा प्रबन्ध किया जावे कि बाहर खूब बाजे बजे, घण्टा घड़ियालमें बजनेका प्रबन्ध हो तथा बाहर इन्द्र अपनी सेना तैयार करे। भवनवासीके दस, व्यन्तरके आठ, कल्पवासीके बारह व ज्योतिषीके एक ऐसे कुल इन्द्र ३१ हैं। ३१ सब इन्द्र जरूर बने जो शुद्ध धोती दुपट्टा पहला पहने हों, मुकुट लगाए हों। यदि ३१ प्रत्येन्द्र और हो सकें तो वे भी बन जावें। २७ इन्द्रोंके व प्रत्येन्द्रोंके मुकुटोंपर उनके जातिवाचक नाम अंकित हो सके तो कराए जावे। इनका प्रयोजन ऐसा कि दर्शकोंका शोभनिक विदित हों। वे नाम ऐसे रहे—(१) असुरेन्द्र (२) नागेन्द्र (३) विद्युतेन्द्र (४) सुपर्णेन्द्र (५) अग्नीन्द्र (६) वातेन्द्र (७) स्तनितेन्द्र (८) उदधीन्द्र (९) द्वीपेन्द्र (१०) दिगिन्द्र (११) किन्नरेन्द्र (१२) किंपुरुषेन्द्र (१३) महोरगेन्द्र (१४) गन्धर्वेन्द्र (१५) यक्षेन्द्र (१६) राक्षसेन्द्र (१७) भूतेन्द्र (१८) पिशाचेन्द्र (१९) चन्द्रेन्द्र (२०) सौधर्मेन्द्र (२१) ईशानेन्द्र (२२) सानत्कुमारेन्द्र (२३) माहेन्द्रेन्द्र (२४) ब्रह्मेन्द्र (२५) लान्तवेन्द्र (२६) शुक्रेन्द्र (२७) शतारेन्द्र (२८) आनतेन्द्र (२९) प्राणतेन्द्र (३०) आरणेन्द्र (३१) अच्युतेन्द्र। यदि प्रत्येन्द्र बने तो इन्द्रके स्थानमें हरएकके आगे प्रत्येन्द्र जोड़ा जावे जैसे असुर प्रत्येन्द्र, चन्द्रका प्रत्येन्द्र सूर्य है।

ऐरावत हाथीके समान हाथीपर इंद्राणी सहित सौधर्म, ईशान, सनतकुमार, माहेन्द्र ये चार इन्द्र बैठे हों। अन्य इन्द्र दूसरे वाहनोंपर बैठ सकते हैं, जैसे घोड़े बैल आदि पर सब सजे हुए हों। इन्द्रकी सेना ७ प्रकारकी होती है—हाथी, घोड़े, रथ, गँधर्व, नृत्यकारिणी, अप्सराएं, गधर्व और वृषभ। यथासम्भव ये सामान एकत्र किया जाय। मण्डपकी कुछ दूरीसे यह जुलूस निकल चुके व बाजे गाजेके साथ मण्डपकी तरफ आ रहा हो, साथमें नरनारी भी हों, इधर मण्डपमें दूसरे चबूतरे पर नित्य पूजा व होमके पीछे जब परदेके भीतर सब सामान एकत्र हो जावे और बाजें बजते हों, घण्टा घड़ियाल बजते हों और सब पात्र अपने२ हाथोंमें पुष्प ले लेवे, तथा भगवानके विराजमान करनेका एक भद्रासन ऊंचा विराजमान हो जहासे भगवान सबको दीख सके। इस आसनको नीचे लिखा

मन्त्र पढ़ पवित्र करें। "ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रजलेन श्री पीठप्रक्षालनं करोमि स्वाहा" जलके छींटे देवे। फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ उस पर श्री लिखे—"ॐ ह्रीं श्रीं ह्रैं श्रीलेखनं करोमि स्वाहा।" अब परदा उठाया जावे तब प्रस्तावक आचार्य कायोत्सर्ग ध्यान कर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ प्रतिमाको भद्रासन पर विराजमान करे।

"ॐ ह्रीं त्रैलोक्योद्धरणधीर जिनेन्द्र भद्रासने उपवेशयामि स्वाहा।" इस समय सब नरनारी चारों तरफ जय जय नंद नद शब्द करें व खूब बाजे बजे। फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ पुष्प प्रतिमा पर क्षेपें। "ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः श्री सिद्धचक्राधिपतये अष्टगुणसमृद्धाय फट् स्वाहा।" तथा यदि और प्रतिमा प्रतिष्ठाकी हों तो उनपर भी क्षेपण करें। फिर आचार्य नीचेके श्लोक पढ़ें—

देव त्वय्यद्य जाते त्रिभुवनमखिलं नाथ जातं सनाथं।
जातो मूर्तोद्य धर्मः कुमलबहुतमो ध्वस्तमद्यैव जातम्॥
स्वर्मोक्षद्वाः कपाटं स्फुटमिह निश्वृक्तं नाथ पुण्याहवाशी।
जातं लोकाग्रचक्षुर्जय जय भगवज्जीव वर्धस्व नंद॥ ७॥

तथा भाषामें स्तुति पढ़ें।

चौपाई—धन्य नाथ तुम आज प्रकाशे। तीन भवन जन सब हुल्लासे॥
धर्म तीर्थ मानो उपजाया। कुमति मार्गका ध्वंश कराया॥
मोक्ष द्वार पट अब उघड़ाए। जीवो वर्धोरे नाथ स्वभाए॥

इतना पढ़ फिर मूल प्रतिमापर व अन्य पर पुष्प क्षेपे। इधर मंगल पाठ पढ़ा जाता हो कि इन्द्रकी सेना आकर पहुंचे तथा मण्डपकी तीन प्रदक्षिणा देवे। सर्व समाज बाहर खड़ा हो—(जो इन्द्र बने हों उनको विशेष टिकट दिया जावे) बिना टिकट कोई भीतर प्रवेश न कर सके। तब इन्द्र इन्द्राणी हाथीसे उतरे और इन्द्र इन्द्राणीसे कहे—

दोहा—देवी जाहु प्रसूति घर, लावो तीर्थ कुमार। माता कष्ट न होय कछु, राखो यही विचार।

मात्र इन्द्राणी भीतर चबूतरेपर आवे, इन्द्र बाहर रहे। प्रतिमाजीके पास उस समय माता हो व देवियां हों व आचार्य हो तथा और कोई न हो। इन्द्राणी विनय सहित जाकर पहले कुछ देर तीर्थंकर व माताका दर्शन करे फिर तीर्थंकरकी मूर्तिकी व माताकी तीन प्रदक्षिणा देकर पहले मूर्तिको नमस्कार करे फिर सामने खड़ी होकर स्तुति पढ़े।

चौपाई—धन धन मात परम सुखकारी, तीन लोक जननी हितकारी।
मंगलकारी पुण्यवती तू, पुत्रवती शुचि ज्ञानमती तू॥

तब दर्शनते हम सुख पाए, हर्ष हृदयमें नाहिं समाए।
धन्य जन्म माता हम जाना, देख तुझे अर श्रीभगवाना ॥

स्तुति करनेके पीछे कुछ देर विनयसे खडी रहे। इतनेमें माताको नींदसी आजावे तब एक नारियलको कपड़ेसे ढका हुआ जो वहा रक्खा है पहलेसे ही उसको उस भद्रासनपर रखकर और भगवानको दोनों हाथोंसे उठाले और बार २ देखकर प्रसन्न हो और अपना मस्तक नमावे, तब आठों देवियां आठ मगल द्रव्य हाथमें लेकर आगे२ चले—(मगल द्रव्य—छत्र, ध्वजा, कलश, चमर, ठोना (सुप्रतिष्ठ), झारी, दर्पण, पंखा (ताड़का)। माता बड़ी विनयसे भगवानको ले जा रही है, सब नरनारी खड़े हो जाते हैं और चांदी सोनेके पुष्प या रंगे हुए चावलोंकी वृष्टि प्रचुर करते हैं जो नरनारियोंको अपने पास पहलेसे रखने चाहिये। मंडपके बाहर सब इन्द्रोंके आगे सौधर्म इन्द्र राह देख रहा है। इन्द्राणी जाकर इन्द्रके दोनों हाथोंकी हथेलीपर भगवानको विराजमान कर देती है, तब इन्द्र बड़े भावसे भगवानका स्वरूप देखता है। जिस समय इन्द्राणी प्रतिमाजीको ले जावे उस समय आचार्य अन्य प्रतिष्ठायोग्य मूर्तियोंपर भी पुष्प क्षेपण करे। फिर इन्द्र नीचे प्रकार स्तुति पढ़ता है, सब समाज चुप है। मण्डपसे नरनारी भी धोरे२ आ जाते हैं और जलूसमें शरीक होजाते हैं।

पद्धड़ी छन्द—तुम जगत ज्योति तुम जगत ईश, तुम जगत गुरु जग नमत शीश ॥
तुम केवलज्ञान प्रकाशकार, तुम ही सूरज तम मोहहार।
तुम देखे भव्य कमल फुलाय, अघ भ्रमर तुरत तहंसे पलाय ॥ १ ॥
जय महा गुरु जय विश्वज्ञान, जय गुणसमुद्र करुणानिधान ॥ २ ॥
जो चरण कमल माथे धराय, वह भव्य तुरत सद्‌ज्ञान पाय।
हे नाथ! मुक्ति लक्ष्मी अधार, तुमको देखत है प्रेम धार ॥ ३ ॥
कृतकृत्य भए हम दर्श पाय, हम हर्ष नहीं चित्तमें समाय।
हम जन्म सफल मानो अधार, तुमको परशे है भव उधार ॥ ४ ॥

इस तरह स्तुति पढ़के मस्तक नमावे तब सर्व इद्रादिक देव जय जय शब्द करे व मस्तक नमावे, तब इद्र उच्च स्वरसे आज्ञा करे, हाथ ऊँचा कर कहे—"हे देवगणों! श्री तीर्थंकर महाराजकी भक्तिमें आनन्द मनाते हुए, जय जयकार शब्द कहते हुए, मंगल गीत गाते हुए, भगवानके गुणोंमें अनुरागी होते हुए, भाव क्रम व नियमसे चलते हुए शीघ्र ही सुमेरु पर्वतपर पधारो और क्षीरसागरके पवित्र जलसे प्रभुका पाण्डुक शिलापर अभिषेक करके अपने जन्मको सुधारो।" इतना कह इद्र इद्राणी ऐरावत हाथीपर चढ़ जाते हैं। भगवान् सौधर्म इंद्रकी गोदमें हैं, ईशान इंद्र पीछे बैठे छत्र सफेद किये हुए हैं। सनतकुमार और माहेन्द्र इद्र दोनों ओर खड़े होकर चमर ढार रहे हैं। इस तरह जुलूस बड़े नियमके साथ १ घण्टेके भीतर सुमेरु पर्वतपर पहुच जावे।

(२) सुमेरु पर्वतकी, क्षीर समुद्रकी तथा मंडपकी रचना—मुख्य मंडपसे उत्तरदिशाकी ओर किसी एकांत स्थानमें जो पवित्र हो, सुमेरु पर्वत बनाया जावे। जो तीन कटनीदार सुन्दर हो उसको सुवर्णमई पीतरंगसे पोता जावे। ऊपर जानेके लिये दो तरफ सीढ़ियां हों। ऊपर बीचमें ऐसा एक गड्ढा किया जावे कि भगवानके न्हवनका जल भीतरसे जाकर जमीनके भीतर ही चला जावे, ऊपरसे गिरकर बहे नहीं कि पैरोंमें आवे। सबके ऊपर पाडुकशिला अर्धचन्द्राकार बनाई जावे जो सफेद रगसे पुती हो, स्फटिकके समान चमकती हो। इसके ऊपर कमलाकार सिंहासन बने जो पीतरंगका हो। उसके इधर उधर इन्द्रोंके खड़े होनेके दो कुछ ऊंचे आसन हों जो सिंहासनसे नीचे हों। सीढ़ियोंको छोड़कर कटनीके सब तरफ छोटे २ वृक्षोंके नादे सुन्दरताके लिये रक्खे जावें व १६ मंदिरोंके स्थानमें १६ मंदिरोंके आकार ४ नीचे भूमिपर चारों ओर, चार चार चारों ओर तीन कटनीके वहां बना दिये जावें। यह विचित्र रंगोंसे पुते हुए हों जिससे प्रगट हो कि मेरुके चारों वनोंमें १६ मंदिर हैं। इस पर्वतसे इतनी दूर जितनी दूर दो पंक्तियोंसे इन्द्र या देव खड़े होकर हाथोंहाथ कलश लासके, एक नहर क्षीरसमुद्रके स्थापनमें बनाई जावे, जिसमें न्हवन होनेके पहले शुद्ध दूधसे मिला हुआ पानी भर दिया जावे जिसमें लहरे आती हों व पानी दूध समान दीखे। धूपके बचाव आदिके निमित्त मण्डप ऊपर छा दिया जावे ताकि सब समूह मण्डपके भीतर आजावे। पर्वत भी उसीके नीचे रहे। १०८ कलश व १ कलश गन्धोदकका ऐसे १०९ सुवर्ण, चांदी या अन्य धातुके एकसे तैयार रहे। यदि धातुके न हों तो मिट्टीके ही लिये जावे। ये सब कलश धोकर उस नहरके दो तरफ ५४, ५४ रख दिये जावें, उनमें साथिया किया जावे, ढकनेको कमलका पुष्प हो या कोई पत्ता हो या नारियल हो या सुन्दर रकाबी हों। कलशोंके स्थापनके समय "ॐ ह्रीं स्वस्त्यै कलशस्थापन करोमि स्वाहा।" यह मंत्र पढ़े। गन्धोदकके कलशमें चन्दन, केशर, अगर आदि सुगन्धित द्रव्योंसे मिला हुआ जल भरा जावे। ये १०८ कलश खाली रक्खे रहें। सामग्री तैयार की जावे तथा एक छोटी चौकी या तखतपर २४ कोठोंका मण्डल तैयार किया जावे। भगवानके पहुचनेके पहले ही आचार्य 'नीरजसे नमः' इस मंत्रसे सर्व भूमिको शुद्ध कर आवे। यहांपर दर्शकोंके बैठनेका स्थान नियत किया जावे। पूजा व अभिषेकका स्थान अलगर किया जावे। पर्वतसे नहर तकका मार्ग जानेका साफ रक्खा जावे। बैठनेवाले इससे हटकर बैठे। चारों तरफ पर्वतके कुछ भूमि छोड़कर दर्शक बैठे।

(३) तीर्थंकर भगवानका अभिषेक—अभिषेकके समय आठ दिक्पाल—अग्नि, यम, नैऋत्य, वरुण, पवन, कुबेर, ईशान और धरणेद्र आठ दिशाओंमें सुन्दर छडी लिये हुए मण्डपमें खड़े रहें, इन पर भी मुकुट हो। ऐरावत हाथी सहित सर्व समूह पहले इस पर्वतकी तीन प्रदक्षिणा देवे। जिस सिंहासन पर भगवान विराजमान होंगे उसको नीचे लिखे मंत्रसे जलके छींटे देकर पवित्र करे।

"ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोर्हते भगवते श्रीमते पवित्रजलेन पीठप्रच्छालन करोमि स्वाहा" फिर उसपर नीचे लिखा मत्र पढ़ श्री लिखें। "ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं श्रीलेखनं करोमि स्वाहा।" तीन प्रदक्षिणा देनेके पीछे श्री भगवनाको हाथीसे उतार कर इंद्र नीचे लिखा मन्त्र पढ़ कर सिंहासन पर विराजमान करे, सब जय जय शब्द कहें।

"ॐ ह्रीं हं श्री धर्मतीर्थाधिनाथभगवन्निहपाडुकशिलापीठे तिष्ठ तिष्ठेति स्वाहा।" फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़ प्रतिमाको स्पर्श करे।

ॐ उवहाय दिव्वदेहाय सज्जोजादाय महप्पणाय अणंतचउट्ठयाय परमसुहपईट्ठयाय णिम्मलाय सयंभुवे अजरामरपरमपदपत्ताय
परमपदाय मम इत्यवि प्रणिहिदाय स्वाहा । फिर सौधर्म व ईशान इन्द्र प्रतिमाके दोनों तरफ खड़े हो जावे और ऊपर कोई न रहे, आचार्य
भी नीचे आ जावे । क्षीर समुद्र तक दोनों ओर पंक्तिबन्ध सीढ़ीसे लेकर इन्द्रगण एक एक इतने२ दूर खडे हों कि कलशको हाथोंहाथ
दे सके । नहरके पास ५४–५४ कलश रक्खे हों, एक एक कलश भरके व ढकके एक२ दूसरेको देता जावे । कलश दोनों इन्द्रोंके
हाथमें आवे तब मंगलीक मनोहर बाजे बजने लगें, स्त्रियां मंगल पढ़ने लगे । जय जय शब्द होवे । ऊँचा हाथ करके सौधर्म व ईशान
इंद्र न्हवन करे । न्हवनका जल नीचे न आवे, सिंहासनसे नीचे जाकर मेरुके भीतर चला जावे । एक दो वर्तन पास रख दिये जावे ।
जो भरते जावे । न्हवन शुरू करनेके पहले आचार्य नीचे खड़े हुए यह मन्त्र पढ़े—

"ॐ क्षीरसमुद्रवारिपूरितेन मणिमयमंगलकलशेन भगवदर्हत् प्रतिकृति स्नापयामः ॐ श्रीं ह्रीं ह व म ह स त पं झ्वीं क्ष्वीं ह सः
नमोऽर्हते स्वाहा ।" यह मंत्र बराबर पढ़ता रहे जब तक १०८ कलशका न्हवन न हो जावे । दोनों इन्द्र बराबर न्हवन कराके एक एक
भाई नीचेकी कटनीपर दोनों ओर खड़ा रहे जो खाली कलशोंको इन्द्रोंके हाथसे लेकर नीचे रखवाता जावे । उसीको वह नारियल
व ढकना भी इन्द्र न्हवन करनेके पहले दे दे–जितने इन्द्र पंक्ति बांधकर नहर तक खड़े हों । जब वहांके सब कलश उठाकर एक एक
ही हरएकके हाथमें रह जावे तब सौधर्म ईशान इन्द्र नीचे आ जावे और बारी बारीसे एक२ इन्द्र चढ़कर स्नान करावे और नीचे आ
जावे । इस तरह १०८ कलशका स्नान पूर्ण हो जावे । जिस समय अभिषेक हो उस समय बड़े धूपायनमें धूप भी खेई जाती हो जिसकी
सुगन्ध सब ओर फैले । फिर सौधर्म इन्द्र ऊपर जाता है और गन्धोदकके कलशसे अभिषेक करता है । उस समय आचार्य वही
मन्त्र पढ़ते हैं परन्तु "क्षीरसमुद्रवारिपरिपूरितेन" के स्थानमें गन्धोदकपूरितेन इतना बदल देते हैं । फिर इन्द्र भगवानके ऊपर
स्वच्छ स्नानकी धारा डालता है तब शांतिपाठ सब इंद्र पढ़ते हैं—

दोधकवृत्तम्–शान्तिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रम् । अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम् ॥
पञ्चममीप्सितचक्रधराणां पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च । शांतिकरं गणशान्तिमभीप्सुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥ २ ॥
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ । आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥ ३ ॥
तं जगदर्चितशान्तिजिनेन्द्रं शांतिकरं शिरसा प्रणमामि । सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं मह्यमरं पठते परमां च ॥४॥

वसन्ततिलका—येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः, शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः ।
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थंकराः सततशांतिकरा भवन्तु ॥ ५ ॥

इन्द्रवज्रा—संपूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शांतिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥ ६ ॥

स्रग्धरावृत्तम्—क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः ।
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ॥
दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां, मास्मभूज्जीवलोके ।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं, सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

अनुष्टुप्—प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्कराः, कुर्वन्तु जगतः शांतिं वृषभाद्याः जिनेश्वराः ॥ ८ ॥

फिर नीचे लिखा श्लोक आचार्य पढ़े ।

"यो नैर्मल्यगुणादिभूषिततनुर्दीप्त्या बलेनोर्जितः । युक्तश्चानवबत्यकायुगनिशं भव्यश्च मुक्तिश्रिया ॥
नार्थस्तस्य जगत्प्रभोः स्नपनतः किं त्वात्मुमेनानुगुणा । मिन्द्राद्यैरभिषिक्त एष भगवान्पायदपायाज्जिनः ॥
शांतिं च कांतिं विजयं विभूतिं तुष्टिं च पुष्टिं सकलस्य जन्तोः ।
दीर्घायुरारोग्यमभीष्टसिद्धिं कुर्याज्जिनस्नानजलप्रवाहः ॥

यह मंत्र पढ़कर मस्तकपर लगावें ।

निर्मलं निर्मलीकरणं पावनं पापनाशनं, जिनगन्धोदकं वन्दे, अष्टकर्मविनाशकम् ॥

अथवा नीचेका श्लोक पढ़ गन्धोदक लगावे ।

घातिव्रातविघातजातविपुलश्रीकेवलज्योतिषो । देवस्यास्य पवित्रगात्रकलनात्पूतं शिवं मंगलं
कुर्याद् स्वगजघातिदावशमनं स्वर्मोक्षलक्ष्मीफल—प्रोद्यद्धर्मलताभिवर्धनमिदं सद्गन्धगन्धोदकम् ॥ ७ ॥

फिर २ बड़े ग्लासोंमें गन्धोदक भरा जाय । दो ग्लास प्राशुक जलसे भरे हों । एक गन्धोदक व एक पानीका ग्लास स्त्रियोंमें किसी कन्या द्वारा व १ गन्धोदक व १ पानीका ग्लास पुरुषोंमें किसी पुरुष द्वारा भेजा जावे । ऊपरसे थोड़ासा गन्धोदक लेकर नीचे आचार्य आदि सब इंद्र पूजाके पात्र लगाकर जन्म सफल करे । इंद्र नीचे आजावे और इंद्राणी जाकर पहले भगवानके अंगमें केशर चन्दनका लेप करे, मस्तकमें मुकुट धारे, तिलक लगावे, कर्णोंमें कुण्डल, गलेमें हार, भुजामें बाजूबन्ध, हाथोंमें कड़े, कमरमें करधनी, चरणोंमें घूंघुरू, शुद्ध सुन्दर धोती व कपड़े पहनावे । (पहले ही एक देवी इन वस्त्राभूषणोंको लिये हुए इंद्राणीके पास पहुंचे ।) अन्य सब इंद्रादि बैठ जावे । इंद्राणी भी नीचे आजावे–बैठ जावे, मात्र सौधर्म इंद्र खड़े होकर नीचेकी स्तुति पढ़े—

स्तुति ।

त्वं देव ! वीतरागोऽसि नाथः स्तवननिंदने । तथापि भक्तिवशगः स्तवीमि कतिचित्पदैः ॥ ७७४ ॥
मङ्गलं शरण लोकोत्तमोऽर्हन् जिनराड् जिनः । सिद्ध आचार्यसम्पूज्यः साधुः साधुपितामहः ॥ ७७५ ॥

प्राग्र्यः पापहरोऽधीशो निःकषायो गुणाग्रणी। पावनं परमं ज्योतिः परमेष्ठी सनातनः ॥ ७७६ ॥
अव्यक्तो व्यक्तमूर्तिस्त्वमलक्ष्यो लक्षणातिगः। सुलक्ष्यो लक्षणज्ञेथ पापशत्रुरुदारधीः ॥ ७७७ ॥
प्रणीतार्थः प्रमाणात्मा सुनयो नयतत्त्ववित्। प्रणधिः प्रणवो नाद्यो ज्ञानदर्शननायकः ॥ ७७८ ॥
पुराणपुरुषोऽज्ञायरूपो रूपातिगो महान्। कामहा कमनो कान्यः काम्यगामी कलानिधिः ॥ ७७९ ॥
कम्रः कामयिता कान्तः कामनातीतकामुकः। कालुष्यहंता कामारिः कोपावेशहरो हरः ॥ ७८० ॥
स्वयंभूर्विभिरूक्षाढधीरः सुकृतभावनः। स्रष्टा भूतपतिः साक्षी त्रैलोक्यपरमेश्वरः ॥ ७८१ ॥
प्रभूष्णुरधिदेवात्मा विश्वराड् विश्वतोमुखः। विश्वयोनिर्जिष्णुरीशः संवदः पुण्यनायकः ॥ ७८२ ॥
धर्मानुशासे धर्मज्ञो वेदविद् वदतांवर। भव्यभानुर्मखज्येष्ठस्त्वं हि ब्रह्मपदेश्वरः ॥ ७८३ ॥
भूष्णुः स्थिरतरः स्थाष्णुरचलो विमलो विभुः। महीयान् जातिसंस्कारः कृतकृत्यो वाक्पतिः ॥ ७८४ ॥
वाग्मी वाचस्पतिः प्राज्ञो गुणरत्नाकरो निधिः शास्ता सर्वज्ञ ईशानः आप्तः सर्वत्रलोचनः ॥ ७८५ ॥
कूटस्थो निर्विकारोऽस्तिनारत्यवाच्यगिरांपतिः। स्याद्वादनायको नेता मोक्षमार्गोपदेशकः ॥ ७८६ ॥
निरीहः सुगतो भास्वान् लोकालोकविभावसुः। अनन्तगुणसंपूज्यो नित्ययज्ञोऽसि विश्वराड् ॥ ७८७ ॥
एवमष्टोत्तरशतं नाम्नां पातु मां भवबन्धनात्। मोचय स्वात्मसंभूतिं देहि देहि महेश्वर ॥ ७८८ ॥

फिर भाषामें स्तुति पढ़े—

पद्धरी छन्द—जय वीतराग हत राग दोष, शायत दर्शन क्षायिक अदोष।
तुम पाप हरण हो निःकषाय, पावन परमेष्ठी गुण निकाय ॥ १ ॥
तुम नय प्रमाण ज्ञाता अशेष, श्रुतज्ञान सकल जानो विशेष।
तुम अवधिज्ञान धारी विशाल, मति ज्ञान धरण सुखकर कृपाल ॥ २ ॥
तुम काम रहित हो काम जीत, तुम विद्यानिधि हो कर्म जीत।
तुम शांत स्वभावी स्वयं बुद्ध, तुम करुणानिधि धर्मी अक्रुद्ध ॥ ३ ॥
तुम वदतांवर कृतकृत ईश, वाचस्पति गुणनिधि गिरा ईश।
तुम मोक्षमार्ग उपदेशकार, महिमा तुमरो को लहे पार ॥ ४ ॥

दोहा—नाम लिये श्रुतिके किये, पातक सर्व पलाय। मंगल होवे लोकमें, स्वात्मभूति प्रगटाय ॥

फिर इन्द्र मण्डलकी पूजा करे। पहले नीचे प्रमाण करे—

यस्योदारदयस्य जन्महरतो, जन्माभिषेकोत्सवं। चारौ मेरुमहीधरस्य शिखरे दुग्धैस्तुदुग्धोदधेः॥
चक्रे शक्रगणो महागुणनिधेः श्रीपादपद्मद्वयं। तस्यैकादशधा महेन महतमाराध्यमाराधये ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभजिनेन्द्र अत्रावतर २ संवौषट् आह्वानन। अत्र तिष्ठ २ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भवभव वषट् सन्निधिकरणम्।

यत्रागाधविशालनिर्मलगुणे लोकत्रयं सर्वदा। आलोकं प्रतिबिम्बितं प्रविशतां नित्यमृतानन्दनम्॥
सर्वाब्जालिनिभपादपद्मं स्तुतिगतं तापापहं धीमता-मर्हत्तीर्थमपूर्वमक्षयमिदं धाराभिर्धारये॥ १॥

ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अनंतानंतज्ञानशक्तये जलं निर्वपामीति स्वाहा॥

गन्धद्वान्द्वगन्धगन्धुरतरो यद्दिव्यदेहोद्भवो, गन्धर्वोद्यनरस्तुतो विजयते गन्धानरं सर्वतः।
गन्धादीनखिलानतैति विजडं गन्धादिमुक्तोऽपि य-स्तं गन्धाद्यगन्धमात्रहतये गन्धेन संपूजये॥

ॐ ह्रीं परमद्जमौगन्ध्यबन्धुराय गन्धं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्राद्यैन्द्रमपार्चितैस्तुपमैर्दिव्यैरलक्षाक्षतैः, यस्य श्री पदपद्मखेन्दुपविधे नक्षत्रजालायितम्।
ज्ञानं यस्य समक्षमक्षतमभूद्वीर्यं सुखं दर्शनम्, याम्यक्षमक्षतपदे जिनमिमं सूक्ष्माक्षतैरक्षतैः॥

ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अक्षयफलप्रदाय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

यस्य द्वादशयोजने सदसि सद्गन्धाभिः स्वोपमा-नपवर्गोन्मुसलोगणान्सुमनसो वर्षति विश्वक्सदा।
यः सिद्धिं सुमनः सुखं सुमनसां स्वं ध्यायतामावहे-त्तं देवं सुमनोमुखैश्च सुमनोभेदैः समभ्यर्चये॥

ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे सुमनःसुखप्रदाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

यद्बाधाबाधविवर्जितं निरुपमं स्वात्मोत्थमत्यूर्जितं, नित्यानन्दसुखेन तेन लभते यस्तृप्तिमात्यंतिकीम्।
यं चाराध्य सुधाशिनो ननु सुधास्वादं लभंते चिरम्, तस्योच्चद्रसचारुणैव चरुणा श्रीपादमाराधये॥

ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अनन्तानन्तसुखसंतृप्ताय चरुं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वस्यान्यस्य सहप्रकाशनविधौ दीपोपमोऽप्यन्वहं, यः सर्वं ज्वलयन्ननन्तकिरणैस्त्रैलोक्यदीपोस्त्यतः।
येनोद्दीपितधर्मतीर्थभवतस्तस्यं विभोस्तस्य स-द्दीप्त्यादीपितदिङ्मुखस्य चरणौ दीपैः समुद्दीपये॥

ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अनन्तदर्शनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

येनेदं भुवनत्रयं चिरमभूदुद्धूपित सोप्यहो, मोहो येन सुधूपितो निजमहोध्यानाग्निना निर्दयम्।

यस्यास्थानपदस्थधूपघटजैर्धूमैर्जगद्भूषितम्, धूपैस्तस्य जगद्वशीकरणसद्धूपैः पदं धूपये ॥

ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे वशीकृतत्रैलोक्यनाथाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

यद्भक्त्या फलदायि पुण्यमुदितं पुण्यं नवं बध्यते, पापं नैव फलप्रदं किमपि नो पापं नवं प्राप्यते ।

आर्हन्त्यं फलसद्सुखं शिवसुखं नित्यं फलं लभ्यते, पादौ तस्य फलोत्तमादिसुफलैः श्रेयः पदायार्चये ॥

ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अभीष्टफलप्रदाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

मंगं लाति मलं च गालयति यन्मुख्यं ततो मंगलं, देवोऽर्हन्वृषमंगलोऽभिविनुतैस्तैर्मंगलैः साधुभिः ।

चञ्चच्चामरतालवृन्तमुकुरैर्मुख्यैर्नरैर्मंगले-मुख्यं मङ्गलमिद्धसुगुणास्सम्प्राप्तुमाराध्यते ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अर्हंत इदं सकलमंगलद्रव्यभाजनं गृह्णीध्वं २ नमः परम मंगलेभ्यः स्वाहा ।

यहां मंगलद्रव्योंमेंसे किसीको लेकर उतारे व रक्खे ।

उच्छलित्सकलोकालोकलोकोत्तरश्री—कलितललितमूर्तेः कीर्तिलेन्द्रैर्जुनीन्द्रैः ।

जिनवर तव पादोपान्ततः पातयामः, भवदवशमनार्थोल्लर्धतः शांतिधाराम् ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं क्लीं ऐं अर्हं अर्हंत इद शांतिधारा गृण्हीध्वं २ अर्हं नमः भद्रं भवतु जगतां शांतिधारां निःपातयामि शांतिकृद्भ्यः स्वाहा ।

यहां जलकी तीन धारा देवे ।

पुष्पेष्वोरिषवो वयं पुनरिह पुष्पेषु निःशेषकम्, निष्पीतानि मधुव्रतैर्वयमिदं निष्पापरंसेवितम् ।

इत्यालोच्य नमस्क्रियास्य सद्गुणैस्त्वाकाङ्क्षत्वीकालें, निष्पात्राखिलतत्त्वपादकमले पुष्पाणि निःपातये ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अर्हंत इद पुष्पांजलिरर्चनं गृह्णीध्वं २ नमोऽर्हद्भ्यो धातृभिरभीप्सितफलदेभ्यः स्वाहा ।

यहां पुष्पोंकी ३ अंजली देवे । फिर मण्डलमें स्थापित २५ जन्म तिथियोंको स्मरण कर २४ तीर्थंकरकी पूजा करे ।

स्थापना गीताछन्द ।

जिन नाथ चौबिस चरण पूजा करत हम हरषाय, जग जन्म लेके जग उधारो जजैं हम चित लाय ।

तिन जन्म कल्याणक सु उत्सव इन्द्र आय सुकीन, हम हू सुमर ता समयको पूजत हिये शुचि कीन ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि महावीरपर्यंत चतुर्विंशतितीर्थंकराः जन्मकल्याणकप्राप्ताः अत्र अवतर २ संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

छन्द चाली—जल निर्मल धार कटोरी, पूजूं जिन निज करजोड़ी । पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दन केशरमय लाऊं, भवकी आताप शमाऊं। पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तरजाई ॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत शुभ छोकर लाऊं, अक्षय गुणको झलकाऊ। पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर पुष्पनि चुनि लाऊं, निज काम व्यथा हटवाऊं। पद पूजन करहूँ बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान मधुर शुचि लाऊं हनि रोग क्षुधा सुख पाऊं। पद पूजन करहूँ बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय चरु निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक करके उजियारा, निज मोह तिमिर निरवारा। पद पूजन करहुं बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो महान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपायन धूप खिवाऊं, निज अष्ट करम जलवाऊं। पद पूजन करहुं बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल उत्तम उत्तम लाऊं, शिवफल जासे उपजाऊं। पद पूजन करहुं बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सब आठों द्रव्य मिलाऊं, मैं आठों गुण झलकाऊं। पद पूजन करहुं बनाई, जासे भवजल तर जाई ॥

ॐ ही ऋषभादिमहावीरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येकके २४ अर्घ।

वदि चैत नवमि शुभ गाई, मरुदेवि जने हरषाई। श्री रिषभनाथ युग आदी। पूजूं भव मेट अनादी ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्ण नवम्यां श्री वृषभनाथजिनेंद्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१)

दसमी शुभ माघ वदीको, विजया माता जिनजीको। उपजे श्री अजित जिनेशा, पूजूं मेटो सब क्लेशा।

ॐ ह्रीं माघवदी दशम्यां श्री अजितनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२)

कातिक सुदि पूरणमासी, माता सुसैन हुल्लासी। श्री सम्भवनाथ प्रकाशे, पूजत आपा पर भाशे ॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्ला पूर्णमास्यां श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३)

शुभ चौदस माघ सुदीको, अभिनन्दननाथ विवेकी। उपजे सिद्धार्था माता, पूजूं पाऊं सुख साता ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्ला चतुर्दश्यां श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (४)

ग्यारस है चैत सुदीकी, मंगला माता जिनजीकी। श्री सुमति जने सुखदाई, पूजूं मैं अर्घ चढ़ाई॥

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ला एकादश्यां श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५)

कातिक वदि तेरसि जानो, श्री पद्मप्रभु उपजानो। है मात सुसीमा ताकी, पूजूं ले रुचि समताकी॥

ॐ ह्रीं कार्तिक कृष्णा त्रयोदश्यां श्री पद्मप्रभुजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (६)

शुचि द्वादश जेठ सुदीकी, पृथवी माता जिनजीकी, जिननाथ सुपारस जाए, पूजूं हम मन हरषाए॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ शुक्ला द्वादश्यां श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (७)

शुभ पूस वदी ग्यारसको, है जन्म चन्द्रप्रभु जिनको। धन्य मात सुलखनादेवी, पूजूं जिनको मुनिसेवी॥

ॐ ह्रीं पौष कृष्णा एकादश्यां श्रीचन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (८)

अगहन सुदि एकम जाना, जिन मात रमा सुख खाना। श्री पुष्पदंत उपजाए, पूजतहूं ध्यान लगाए॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्ला एक श्रीपुष्पदंत जिनेन्द्राय जन्मकल्णाकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (९)

द्वादश वदि माघ सुहानी, नंदा माता सुखदानी। श्री शीतल जिन उपजाए, हम पूजत विघ्न नशाए॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णा द्वादश्यां श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१०)

फागुन वदि ग्यारस नीकी, जननी विमला जिनजीकी। श्रेयांसनाथ उपजाए, हम पूजत हीं सुख पाए॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णा दशम्यां श्री श्रेयांशनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (११)

वदि फाल्गुन चौदसि जाना, विजया माता सुख खाना। श्री वासुपूज्य भगवाना, पूजूं पाऊं जिन ज्ञाना॥

ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्ण चतुर्दश्यां श्रीवासपूज्यजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१२)

शुभ द्वादश माघ वदीकी, श्यामा माता जिनजीकी। श्री विमलनाथ उपजाए, पूजत हम ध्यान लगाए॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णा द्वादश्यां श्री विमलनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१३)

द्वादशि वदि जेठ प्रमाणी, सुरजा माता सुखदानी। जिननाथ अनन्त सुजाए, पूजत हम नाहिं अघाए॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णा द्वादश्यां श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१४)

तेरसि सुदि माघ महीना, श्रीधर्मनाथ अघ छीना। माया सुव्रता उपजाये, हम पूजत ज्ञान बढ़ाए॥

ॐ ह्रीं माघ शुक्ला त्रयोदश्यां श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१५)

वदि चौदस जेठ सुहानी, ऐरादेवी गुन खानी, श्रीशांति जने सुख पाए, हम पूजत प्रेम बढ़ाए॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णा चतुर्दश्यां श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१६)

पड़िवा वैशाख सुदीकी, लक्ष्मीमति माता नीकी। श्रीकुन्थनाथ उपजाए, पूजत हम अर्घ बढ़ाए॥

ॐ ह्रीं वैशाख शुक्ला एकं श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१७)

अगहन सुदि चौदस मानो, मित्रादेवी हरषानी। अरि तीर्थंकर उपजाए, पूजें हम मन वच काए॥

ॐ ह्रीं अगहन शुक्ला चतुर्दश्यां श्रीअरितीर्थंकराय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१८॥

अगहन सुदि ग्यारस आए, श्रीमल्लिनाथ उपजाए। है मात प्रजापति प्यारी, पूजत अघ विनशै भारी॥

ॐ ह्रीं अगहन शुक्ला एकादश्यां श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१९)

दशमी वैसाख वदीको, श्यामा माता जिनजीकी। मुनिसुव्रत जिन उपजाए, हम पूजत पाप नशाए॥

ॐ ह्रीं वैशाख कृष्णा दशम्यां श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०)

दशमी आषाढ़ वदीकी, विपुला माता जिनजीका। नमि तीर्थंकर उपजाए पूजत हम ध्यान लगाए॥

ॐ ह्रीं आषाढ़ कृष्णा दशम्यां श्रीनमिजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१)

श्रावण शुकला छठि जानो, उपजे जिननेमि प्रमाणो। जननी सु शिवा जिनजीकी, हम पूजत है पद शिवकी॥

ॐ ह्रीं श्रावण शुक्ला षष्ठ्यां श्रीनेमनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२)

वदि पूष चतुर्दशि जानी, वामादेवी हरषानी। जिन पार्श्व जने गुणखानी, पूजें हम नाग निशानी॥

ॐ ह्रीं पौष कृष्णा चतुर्दश्यां श्रीपार्श्वजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं-निर्वपामीति स्वाहा। (२३)

शुभ चैत्र त्रयोदश शुकला, माता गुणखानी त्रिशला। श्रीवर्द्धमान जिन जाए, हम पूजत विघ्न नशाए॥

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ला त्रयोदश्यां श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताम अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२४)

जयमाल।

भुजंगप्रयात—नमो जै नमो जै नमो जै जिनेशा, तुम्हीं ज्ञान सूरज तुम्हीं शिव प्रवेशा।
तुम्हें दर्श करके महामोह भाजे, तुम्हें पर्श करके सकल ताप भाजे॥ १॥
तुम्हें ध्यानमें धारते जो गिराई, परम आतम अनुभव छटा सार पाई।
तुम्हें पूजते नित्य इन्द्रादि देवा, लहैं पुण्य अद्भुत परम ज्ञान मेवा॥ २॥
तुम्हारो जनम तीन भू दुख निवारी, महामोह मिथ्यात हियसे निकारी।

तुम्हीं तीन बोध धरे, जन्महीसे, तुम्हें दर्शनं क्षायिकं जन्महीसे ॥ ३ ॥
तुम्हें आत्मदर्शन रहे जन्महीसे, तुम्हें तत्त्व बोधं रहे जन्महीसे ।
तुम्हारा महापुण्य आश्चर्यकारी, सु महिमा तुम्हारी सदा पापहारी ॥ ४ ॥
करा शुभ न्हवन क्षीरसागर सु जलसे, मिटी कालिमा पापकी अंग परसे ।
हुआ जन्म सफलं करी सेव देवा, लहूं पद तुम्हारा इसी हेतु सेवा ॥ ५ ॥

दोहा—श्रीजिन चौवीस जन्मकी, महिमा उरमें धार । पूज करत पातक टलैं, बढ़े ज्ञान अधिकार ।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यो महाअर्घं निर्वपामीति स्वाहा । फिर इन्द्र ऊपर जाता है और भगवानका नाम व चिह्न प्रगट करता है । चरणको स्पर्शकर यह मंत्र पढ़कर पुष्प भगवानपर क्षेपण करता है—

ॐ ह्रीं इक्ष्वाकुले नाभिभूपतेर्मरुदेव्यामुत्पन्नस्यादिदेवपुरुषस्य ऋषभदेवस्वामिनोऽत्रबिम्बे वृषभांकितत्वात् तद्गुणस्थापनं तेजोमयं करोमि स्वाहा । ॐ अयं महानुभावः परमेश्वरो वृषभेश्वरो भवतु ।

फिर नीचे लिखे मंत्रको पढ़ते हुए इन्द्र अंग स्पर्शे व पुष्प प्रभुपर डाले । (मंत्रको आचार्य पढ़ सकता है नीचेसे ।)

ॐ ऋषभादिदिव्यदेहाय सद्योजाताय महाप्रज्ञाय अनन्तचतुष्टयाय परमसुख प्रतिष्ठिताय निर्मलाय स्वयंभुवे अजरामरपदप्राप्ताय चतुर्मुखपरमेष्ठिनेऽर्हते त्रैलोक्यनाथाय त्रैलोक्यपूज्याय अष्टदिव्यनागप्रपूजिताय देवाधिदेवाय परमार्थसंनिहितोऽस्मि स्वाहा ।

(१) ॐ अस्मिन्‌बिम्बे निःस्वेदत्वगुणो विलसतु स्वाहा । (२) ॐ अस्मिन्‌बिम्बे मलरहितत्वगुणो विलसतु स्वाहा । (३) ॐ अस्मिन्‌बिम्बे क्षीरवर्णरुधिरतत्वगुणो विलसतु स्वाहा । (४) ॐ अस्मिन्‌बिम्बे समचतुरस्रसंस्थानगुणो विलसतु स्वाहा । (५) ॐ अस्मिन्‌बिम्बे वज्रवृषभनाराचगुणो विलसतु स्वाहा । (६) ॐ अस्मिन्‌बिम्बे अद्भुतरूपगुणो विलसतु स्वाहा । (७) ॐ अस्मिन्‌बिम्बे सुगंधशरीरगुणो विलसतु स्वाहा । (८) ॐ अस्मिन्‌बिम्बे अष्टोत्तरसहस्रलक्षणव्यजनत्वगुणो विलसतु स्वाहा । (९) ॐ अस्मिन्‌बिम्बे अतुलवीर्यत्वगुणो विलसतु स्वाहा । (१०) ॐ अस्मिन्‌बिम्बे हितमितप्रियवचनत्वगुणो विलसतु स्वाहा ।

यहां आचार्य सबको कहे कि नाम व चिह्न यह प्रगट किया गया व दश अतिशय जन्म सम्बन्धी समझाये व कहे कि इनका स्थापन इसमें विब किया गया । फिर आचार्य नीचेके मंत्रोंको पढता जावे । इन्द्र अंग स्पर्शे व पुष्प मूर्तिपर क्षेपे ।

(१) ॐ अर्हद्भ्यो नमः, (२) ॐ नवकेवललब्धिभ्यो नमः, (३) ॐ क्षीरस्वादुलब्धिभ्यो नमः, (४) ॐ मधुरस्वादुलब्धिभ्यो नमः, (५) ॐ संभिन्नश्रोतृभ्यो नमः, (६) ॐ पादानुसारिभ्यो नमः, (७) ॐ कोष्ठबुद्धिभ्यो नमः, (८) ॐ बीजबुद्धिभ्यो नमः, (९) ॐ सर्वावधिभ्यो नमः, (१०) ॐ परमावधिभ्यो नमः, (११) ॐ ह्रीं वल्गुवल्गुनिवल्गुसुश्रवणे (१२) ॐ ऋषभादिवर्धमानान्तेभ्यो वषट्वषट् स्वाहा । (१३) ॐ णमोभयवदो बहुमाणस्स रिसहस्स जस्स चक्क जलत गच्छई आयास पायाल लोयाणं भूयाणं जूए वा विवादे वा रंगयणे वा थंभणे वा मोहणे वा सव्वजीवसत्ताणं अपराजिदो भवदुक्खक्खय स्वाहा ।

ऊपर लिखित वर्द्धमान मंत्र कहलाता है। इसप्रकार आकारशुद्धि करे। व नीचे प्रकार श्लोक पढ़कर विसर्जन करें।

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि, शास्त्रोक्तं न कृतं मया। तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु, त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥
आह्वानं नैव जानामि, नैव जानामि पूजनम्। विसर्जनं न जानामि, क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥
मंत्रहीनं क्रियाहीनं, द्रव्यहीनं तथैव च। तत्सर्वं क्षम्यतां देव, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३ ॥
आहूता ये पुरा देवा लब्धभागा यथाक्रमम्। ते मयाऽभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यान्तु यथास्थितिम् ॥४॥

फिर आज्ञा करे—हे इन्द्रादिदेवो! जिसतरह श्री तीर्थंकर महाराजको लाए थे उसी तरह लेजाकर मातापिताकी गोदमें अर्पण कर व उन्हें भक्तिद्वारा प्रसन्नकर हम सबको पुण्य कमाना योग्य है। आज्ञा करनेके पीछे आचार्य व इंद्रादि पूजा समयके पात्र मेरुकी तीन प्रदक्षिणा कोई स्तुति पढ़ते हुए देवें। फिर भगवानको इन्द्र उठावे। पूर्वके समान ऐरावत हाथीपर इन्द्रादि बैठें और जय जय शब्द हों और बाजे बजें। जुलूस १ घंटेके भीतर भीतर मंडपमें आजावें।

(४) राज्यांगणमें भगवानका पधारना और मात पिताको अर्पण व नृत्य—मंडपमें बैठनेका प्रबंध टिकटोंद्वारा रहे। जुलूस पहुंचनेपर इन्द्र इन्द्राणी थोड़ेसे और इन्द्रों व देवोंके साथ मंडपमें आवें। इसके पहले ही दूसरे चबूतरेपर महाराज नाभिराज एक सिंहासनपर बैठे हों। दूसरे एक सिंहासनपर माता मरुदेवी निद्रित दशामें सहारेसे बैठी हो, पासमें वस्त्रसे लिपटा नारियल रक्खा हो, कुछ सभासद भी हो तथा माता पिताके बीचमें ऊंचा सिंहासन भगवानके बैठनेका हो, परदा उठे। इन्द्र गोदमें तीर्थंकर भगवानको लिये हुए आवे और सिंहासनपर विराजमान करे तब यह मंत्र पढ़े—

ॐ नमोऽर्हते केवलिने परमयोगिने अनंतविशुद्धपरिणामपरिस्फुरच्छुक्लध्यानाग्निनिर्दग्धकर्मबीजाय प्राप्तानंतचतुष्टयाय सौभाग्यशांताय मंगलाय वरदाय अष्टादशदोषरहिताय स्वाहा।

तब सब बैठ जावें। इन्द्राणी उठकर माताके पास आवे और हाथ फेरदे, मायामयी निद्रा हटावे, उस नारियलको उठाले। तब माता आश्चर्यमें उठ खड़ी हो। माता पिता दोनों खड़े हो तीर्थंकरकी छबिको देख देखकर प्रसन्न हों और फिर बैठ जावें। तब इन्द्र उठे और माता पिताके आगे वस्त्राभूषणकी भेट रक्खे। दो थाल उस समय आजावें। एक थाल माताके व १ पिताके आगे रक्खे और पुष्पोंकी सुगंधित माला पिताके गलेमें पहरावे और उसकी स्तुति करे—

चौपाई—धन्य धन्य तुम लोक मंझारा, तुमरो सफल जन्म संसारा।
तीन जगत गुरु तुम उपजाये, यातें जगत पूज्य ठहराए ॥ १ ॥
तुम उदयाचल पर्वत मानो, पूर्वदिशा देवी सह जानो।
भानु समान प्रभु प्रगटाए, मोह ध्वांत इह लोक मिटाए ॥ २ ॥

ग्रह तुमरा जिनमंदिर सारा, पूज्यनीय त्रिभुवन सुखकारा।
तुम दोनों हो शिव अधिकारी, यातैं पूजनीय हरबारी ॥ ३ ॥

ऐसी स्तुति करके इन्द्र भगवानको उठाकर माताकी गोदमें देता है, माता उठकर लेती है और विनय सहित बैठ जाती है और बारबार प्रभुको निरखती है। उधर प्रतिष्ठाचार्य अन्य प्रतिमाओंको थोड़े जलसे अभिषेक कर पोछकर केशर चन्दनका लेप करके यह कहते जाते हैं–" अस्मिन् बिम्बे जन्मकल्याणकं आरोपयामि स्वाहा " और हरएकको वस्त्राभूषणोंसे सज्जित करते हैं। हरएक मूर्तिके लिये अलग२ वस्त्राभूषण होने चाहिये और फिर " दश अतिशयाकार शुद्धि नाम (यहां जो नामका चिह्न हो वह लेकर) आदिकम् आरोपयामि स्वाहा " ऐसा कहकर हरएक मूर्तिपर पुष्प डाले। और नमस्कार करे। इधर इन्द्र फिर उठे और किस तरह मेरुपर न्हवन हुआ था उसे कहे तथा भगवानके पूर्वजन्मके ९ भवोंका संक्षेपसे वर्णन करे सो स्तुतिरूप गानके साथ बड़े भावसे कहे—

चौपाई—हम देवन सह मेरु पधारे, पांडुकवनमें आन सिधारे।
पांडुक शिला महा शुचि रूपा, थाप्यो प्रभुको आनन्द रूपा ॥ १ ॥
क्षीरोदधिसे कलश मंगाए, स्वर्णमई जल भर सुर लाए।
श्रीजिनेन्द्र अभिषेक सु कीना, जन्म सफल हमने कर लीना ॥ २ ॥
शची वस्त्र आभूषण धारे, पूज प्रभूको यहां पधारे।
धन्य जीव श्रीआदि जिनेशा, मुक्तिनाथ तीर्थंकर भेषा ॥ ३ ॥
यह संसार महान अपारा, आदि अन्त विन रहत करारा।
यामें जीव कर्मवश घूमें, बिन सम्यक्त स्वधर्म न चूमें ॥ ४ ॥
भव अनंत यह जीव धरे है, भ्रमत भ्रमत नहिं अंत करे है।
जीव नाथका भ्रमण करे था, पुण्य उदयसे दुःख हरे था ॥ ५ ॥
इक भव लिया विदेह मंझारा, विद्याधर नृप पुत्र दुलारा।
नाम महाबल राज्य सु कीना, जैनधर्ममें दृढ़ चित दीना ॥ ६ ॥
अंत समाधि धार तन त्यागा, द्वितिय स्वर्ग उपजा शुभ भागा।
देव नाम ललितांग सुपाया, स्वयंप्रभादेवी मन भाया ॥ ७ ॥
तहंते चय विदेह उपजाया, वज्रजंघ नृप हो सुख पाया।
स्वयंप्रभा भी तहं उपजाई, नारि श्रीमती नृपके भाई ॥ ८ ॥

दोनोंने मुनि दान सु दीना, उत्तम भोगभूमि सुख लीना।
तहं चारन मुनि आ उपदेशा, धर्म जिनेश्वर हत रति द्वेषा ॥ ९ ॥
सुनत ग्रहण दोनोंने कीना, सम्यग्दृष्टी हुए प्रवीणा।
द्वितीय स्वर्गमें श्रीधर देवा, द्वितीय स्वयंप्रभ अद्भुत देवा ॥ १० ॥

श्रीधर धर्मध्यान तहं कीना, चयकर जन्म विदेह सु लीना।
राजपुत्र हो सुविधि दयाला, श्रावक ग्यारह प्रतिमा पाला ॥ ११ ॥
अंतिम साधु महाव्रत धारे, और समाधिमरण सुखकारे।
प्राणत्याग सोलम दिवि आए, अच्युतेंद्र होकर सुख पाए ॥ १२ ॥

तहंसे चय विदेह उपजाये, वज्रनाभि सम्राट सुहाए।
चक्रवर्ति साधे छः खंडा, राज्य कियो सु न्याय वृष मंडा ॥ १३ ॥
धारे मुनिव्रत तप बहु कीना, आतम ध्यान कर्म कृष कीना।
सोलहकारण भाव सुध्याए, तीर्थंकर शुभ कर्म बंधाए ॥ १४ ॥

उपशमश्रेणीसे तन त्यागा, चौथे गुणथानकमें लागा।
सर्वारथसिद्धी उपजाए, तेतिस सागर आयू पाए ॥ १५ ॥
तहं भी धर्म भाव चित लाए, पुण्य उदय या नगरी आए।
धन श्री रिषभ वृषभ शुभ अंका, तुम टालत भव भ्रम आतंका ॥ १६ ॥

हम दर्शनसे जो सुख पाया, वचन अगोचर जात न गाया।
धन्य पिताश्री नाभि सुराजा, मरुदेवी माता हित काजा ॥ १७ ॥
देव जनम हम अब सफलाया, तुम सेवन कर पाप हटाया।
चिर जीवो श्री आदि कुमारा, धर्मतीर्थका करहु प्रचारा ॥ १८ ॥

इसतरह स्तुति पढ़े। यदि इन्द्र नृत्य जानता हो तो करे अन्यथा सभामें कोई इन्द्र समान नृत्य व भजन १५ मिनटके लिये करे, सब सभा सुने, इन्द्र भी बैठ जावे। फिर इन्द्र उठे। उसी समय कमसे कम पांच देव मुकुटधारी छोटी वयके बालक ८–९ आवें।

इन्द्र भगवानके अंगूठेमें अमृत समान दूध लगावे और यह मंत्र पढ़े "ॐ ह्रीं श्री तीर्थंकरांगुष्ठे अमृतं स्थापयामि स्वाहा" और उन पांच देवोंको आज्ञा करे–"हे देवों! तुम तीर्थंकरकी भलीभांति सेवा करना और पुण्य कमाकर जन्म सफल करना। तब वे देव कहें–हम आपकी आपकी आज्ञा बजा लाएंगे, प्रभुकी सेवाकर पुण्य कमाएंगे। फिर इन्द्र भगवानको उठाता है तब सब सभा खड़ी हो जाती है, माता पिता भी खड़े हो जाते हैं और सब कोई पुष्पोंकी व चांदी सोनेके फूलोंकी वर्षा प्रभुके ऊपर करते हैं। पहले चबूतरेके बाहर जो परदा पड़ा था वह उठता है, इधर उधरके परदे उठ जाते हैं तथा मूलवेदीके बगलमें जो राज्यमहल बना था वहां सिंहासनपर प्रभुको विराजमान कर देता है। उस समय इन्द्र पहले लिखा मंत्र पढ़ता है–"ॐ नमऽर्हते अष्टादशदोषरहिताय स्वाहा" नमस्कार करता है और लौटने लगता है, इतनेमें बाहरका परदा गिरता है। जन्मकल्याणकोत्सव पूर्ण होता है, सर्व अपने२ स्थानपर जाते हैं, आहार पान करते हैं। यहांतक क्रिया पूर्ण करके ही भोजन करना उचित है। इस सब क्रियाको लगातार ही करना चाहिये। सवेरेसे दो बजें दोपहर तक हो सकती है।

अध्याय पांचवां

गृही जीवन।

(१) दोलनारूप क्रीड़ाका उत्सव—रात्रिको मडपमें दोलना क्रीड़ा की जावे। दूसरे चबूतरेपर झूला सुन्दर लगाया जावे उसमें हिंडोला संजोया जावे, उसपर प्रभुको वस्त्राभूषण सहित, मुकुट सहित विराजमान किया जावे। आठ देवियां हाजिर हों आठ दिशाओंमें खड़ी हों। उनमेंसे पीछेके कोनेकी दो दोनों तरफ चमर ढारे। पांच कुमारदेवोंको जिनको इन्द्रने नियत किया था हिंडोलेके पीछे खड़ा कर दिया जावे। माता खड़ी २ भगवानको झुलाती हो, सामने एक टेबुलपर रुपयोंकी भेटके लिये बडा थाल रखा हो, कोनेमें एक भाई दातारोंके नाम लिखनेवाला बैठा हो। सब सामान सज जावे तथा परदा उठाया जावे। उस समय जयजयकार शब्द हो। प्रथम ही इन्द्राणी कई देवियोंके साथ दो थालोंमें वस्त्राभूषणादि सजाकर लावे व हाथमें अशरफी व रुपया लावे और सभामें आकर वे दोनों थाल भेटरूप बगलमें रक्खे तथा प्रणाम करके स्तुति पढ़े—

चौपाई—जय जय नाथ दरश तुम पाए, तुम महिमा बरणी नहिं जाए।
तुम अपार सुन्दरता धारी, काम जीत जगजन मनहारी॥ १॥
तुम त्रिज्ञानधारी परमेशा, देखत तुम्ह मिटे भव क्लेशा।
हम आतुर बहुंगति संसारा, तुमहि दुःख मेटन अविकारा॥ २॥
तुम जग मोह तिमिर निर्वारो, सम दम यमसे सब अघ टारो।
धन्य मात तुम पुण्य अपारा, तीर्थंकर सुत तव जगप्यारा॥ ३॥

ऐसी स्तुतिकर मोहर या रुपया रत्न भेटरूप थालमें डारकर हिंडोला हिलावे और फिर नमस्कार कर विनय सहित देवियोंके साथ लौट जावे॥ नोट—इस समय जो आमदनी थालमें आवे वह सब प्रतिष्ठाके खर्चमें लगाई जावे।

फिर नर नारियां आकर भगवानको झुलावे। इसका प्रबन्ध ऐसा किया जावे कि १० टिकट खास बनाए जावें। १ दफे पांच पुरुष नम्बरवार फिर पांच स्त्रियां नम्बरवार छोड़ी जावें। ये नम्बरवार जावें। रुपया आदि थालमें भेटकर प्रभुको झुलावें। नमस्कार कर लौट आवें। आधी मिनिटसे अधिक कोई न झुलावे, जब पाच लौट आवे व टिकट वापिस आजावे तब फिर पांचको भेजा जावे। इसतरह नम्बरवार स्त्री-पुरुष दोनों आते जाते रहें। मंडपमें बैठे लोग जय जय शब्द कहें तथा सामने भगवानके सामने भजन गान नृत्य मनोहर होता रहे। जब सब भेट दे चुकें व अपना मनभर भगवानको झुला चुके तब परदा डाल दिया जावे। भीतर भगवानको राज्यमहलकी वेदीपर वस्त्र सहित विराजमान किया जावे।

(२) तीर्थंकरको राज्याभिषेक—जन्मकल्याणकके दूसरे दिन सवेरे आचार्य इन्द्र आदि सहित सवेरे ही मंडपमें जन्मकल्याणकके दिनकी भांति सकलीकरण, अभिषेक व नित्यपूजा सिद्धपूजा तथा होम करे। फिर पहले चबूतरे पर परदा डाला जावे। दूसरे चबूतरे पर राजसभाकी रचना की जावे। बीचमें बैठनेका आसन हो। उसके पास ही नाभिराजाका आसन हो, कुछ सभासद कायदेसे बैठे हों। अभिषेक व पूजाका प्रबन्ध हो व भगवानको राजयोग वस्त्र व खड्ग आदि शस्त्र देनेका प्रबन्ध हो। परदा उठे तब सब इन्द्र प्रत्येन्द्र व आचार्य आवें, आठ मंगलद्रव्य स्थापित हों। इन्द्र महाराज नाभिको मस्तक झुकाकर नमन करे व स्तुति करे।

दोहा—**श्री तीर्थंकर राज्यपद, देनेका उत्साह। किया आपने नाभिजी, है यह उत्तम राह॥**
प्रभु समर्थ पालन प्रजा, न्याय मार्गमें आज। राज्यार्पणकी सकल विधि, करना है सुखसाज।

तब नाभिराज कहते हैं—

दोहा—**राज्यतिलक अर्पण विधि, कीजे हे दिविराज। होय सुखी सारी प्रजा, होय अटल यह राज।**

आज्ञा पाते ही इन्द्र भीतर जाकर प्रभुको राज्यमहलसे लाते हैं तब सब खड़े होते हैं, जयजयकार शब्द होते हैं, पुष्पोंकी वर्षा होती है। बीचमें न्हवनका आसन विराजमान कर उसपर प्रभुको स्थापित करता है। वस्त्राभूषण अलग उतारकर रखता है। इतनेहीमें दूसरे इन्द्र तथा आठ देवीकन्याएं सुन्दर कलशोंको जलसे भरे हुए पुष्पमालासे शोभित व कमल या नारियलसे ढके हुए व केशरका साथिया बना हुआ अपने दोनों हाथोंपर धरे हुए लाते हैं। सामने गीत व नृत्य होता है। बाहर खूब बाजे बजते हैं। वे सब इन्द्र और देवियां एक साथ गाती हैं—

गीताछंद—**शचिनाथ हम जल शुद्ध लाए, क्षीरसागरसे भला।**
गंगा महा नद सिंधु आदी, कुंड गंगासे भला॥

शुचि दीप नन्दी वापिका सागर स्वयंभूसे भला।
अभिषेक कारण राजपट हो तीर्थनायकके भला॥

प्रथम ही इन्द्र दाम उच करके अभिषेक करे। अभिषेक जबतक होता रहे आचार्य पढ़ते रहें 'ॐ ह्रीं श्री तीर्थराजस्य राज्याभिषेक करोमि स्वाहा" फिर दूसरे इन्द्र अभिषेक बारी बारीसे करें। फिर नाभिराजा अभिषेक करे। फिर दूसरे कुछ राजा जो सभामें थे अभिषेक करें, फिर इन्द्र केशरादि द्रव्योंसे मिश्रित गंगजलसे अभिषेक करे, फिर पुष्पोंकी वर्षा करे, फिर स्वच्छ जलसे अभिषेक करके भगवानका शरीर पोंछकर इन्द्र राज्य आसनपर विराजमान करे। गंधोदक सबको पूर्ववत् पहुंचाया जाय तब मंगलआरती सब पात्र मिलकर पढ़ें तथा इन्द्र कपूरादि जलाकर इसप्रकार आरती करता है—

चौपाई—जय जय तीर्थंकर अधिकारी। जय जय मुक्तिवधू वर भारी॥ टेक॥
जय जय प्रजा न्याय विस्तारी। जय जय अनुपम बल अधिकारी॥ जय०॥
जय जय शस्त्र शास्त्रगुण भारी। जय जय विद्या-निपुण अपारी॥ जय०॥
जय जय पद्रहवें मनु भारी। जय जय जगत करन उद्धारी॥ जय०॥
जय जय कर्मभूमि विस्तारी। जय जय आदि जिनं भवतारी॥ जय०॥

आरती करके फिर इन्द्र वस्त्र व शस्त्र खड्ग आदिसे सज्जित करे। कंठमें पुष्प व रत्नमाला डालें व अन्य आभूषण पहनावें। इतनेहीमें नाभिराज उठते हैं और इसभांति कहकर अपना मुकुट उतारकर प्रभूके मस्तकपर धारण करते हैं—

दोहा—सर्व राज महाराजके, पालक दीनदयाल। तुम ही हो जग पूज्य प्रभु, वृषभदेव जगपाल॥

फिर इन्द्रने मस्तकपर पट्टबंध भी किया तब सब बैठ जाते हैं। सभामें नृत्य व गान १५ मिनट तक होता है। तब इन्द्र व देव विनय सहित चले जाते हैं। आठ देवियां रह जाती हैं जो प्रभुके पीछे खड़ी रहती हैं उनमें दो देवियां जबसे सिंहासनपर प्रभु बैठे तबहीसे चमर कर रही हैं। अब अनेक राजालोग आकर प्रभुको भेट चढ़ाकर नमस्कार कर सभामें बैठ जाते हैं—पहले राजा हरि, फिर राजा अकम्पन, फिर काश्यप फिर सोमप्रभ आते हैं। इनके पीछे अनेक राजा जिनके स्थानके नाम आचार्य कहते जाते हैं और भेट धरकर सभामें बैठते हैं। नोट—जो रुपया भेटमें आवे सो प्रतिष्ठाकार्यमें खर्च हो। कुछ नाम यहां दिये जाते हैं—

(१) अंगदेश, (२) बंगदेश, (३) कलिंगदेश, (४) तुलुवदेश, (५) कर्णाटकदेश, (६) पाण्ड्यदेश, (७) तंजोरदेश, (८) त्रिपुरदेश, (९) कच्छदेश, (१०) गुजरातदेश, (११) महाराष्ट्रदेश, (१२) पंचालदेश, (१३) मालवादेश, (१४) राजपूताना, (१५) नेपालदेश, (१६) मुलतानदेश, (१७) मध्यप्रदेश, (१८) खानदेश, (१९) नीमाड़देश, (२०) आसामदेश, (२१) ब्रह्मदेश, (२२) तिब्बत,

(२३) चीनदेश, (२४) स्याम, (२५) जापान, (२६) रूस, (२७) मौकदेश, (२८) रूमदेश (२९) फारसदेश, (३०) तातारदेश, (३१) गांधारदेश, (३२) मिश्रदेश। इत्यादि,

फिर सब जब बैठ जावें तब भगवानकी ओरसे राज्यनीतिका उपदेश आचार्य व अन्य कोई विद्वान सभामें प्रभाव पड़े इस तरह कहे—

राजा हरि! (इतना कहनेपर राजा खड़ा होजावे) आपको भगवान हरिवंशका नायक स्थापित करते हैं। वह हाथ जोड़ मस्तक नमा बैठ जाता है।

राजा सोमप्रभ! (वह भी उठता है) आपको भगवान कुरुवंशका शिखामणि स्थापित करते हैं। उसी तरह वह भी नमन कर बैठ जाता है।

राजा अकंपन! (वह भी उठता है) आपको भगवान नाथवंशका अधिपति नियत करते हैं। उसी तरह नमन कर बैठता है।

राजा काश्यप! (वह भी उठता है) आपको भगवान उग्रवंशका शिरोमणि नियत करते हैं। उसी तरह नमस्कार कर बैठता है।

आजसे भगवान यह नियम करते हैं कि जो शस्त्र धारणकर अपने बाहुबलसे प्रजाकी रक्षा करनेको समर्थ हैं वे क्षत्रीयवंशी व क्षत्रियवर्णधारी कहलाएंगे। जो थल व जलद्वारा अनेक देशोंमें यात्रा करके व्यापार करनेयोग्य हैं वे वैश्यवंशी या वैश्यवर्णधारी कहलाएंगे। जो इन दोनों प्रकारकी योग्यता नहीं रखते हैं तथा सेवा आदि करके व आज्ञा पालन करके आजीविका करनेयोग्य हैं उनको शूद्र कहा जायगा। भगवान आज तीन वर्णोंकी स्थापना करते हैं। भगवान असिकर्मके द्वारा क्षत्रियोंको; मषि कृषि, वाणिज्यद्वारा वैश्योंको व शिल्प तथा विद्याकला द्वारा शूद्रोंको आजीविका करनेका अधिकार नियत करते हैं तथा यह भी नियम बनाते हैं कि हरएक वर्णवाले अपनी २ आजीविका करें तथा विवाहका यह नियम करते हैं कि प्रत्येक वर्णवाले अपने अपने वर्णमें विवाह करें, काम पड़े क्षत्रिय वैश्य तथा शूद्रकी और वैश्य शूद्रकी कन्याको विवाह कर सकता है। भगवान अपने आधीन राजाओंको यह आज्ञा करते हैं—

चौपाई—है कृतयुग यह तुम जानो। निज निज कृत्य करो सुख मानो॥
आलसभाव न चितमें राखो। परिश्रमी बन सुख अभिलाखो॥ १॥
सज्जन दुर्जन जन दो भेदा। सज्जन पालहु खल कर छेदा॥
प्रजा करहू रक्षा रुचि लाई। दुर्जनको नित दण्ड दिलाई॥ २॥
शस्त्र धरण उद्देश यही है। प्रजा सुखी हो तत्त्व यही है॥
दुष्टनका निग्रह जहं नाहीं। सुख सन्तोष होय तहं नाहीं॥ ३॥

गृही नहीं करतव निज पाले । दुखी होय विपता बहु झाले ॥
दया दुष्टजन नहिं अधिकारी । दण्ड बिना नहिं हों समधारी ॥ ४ ॥
पृथ्वी यह बहु धान्य उपावै । वस्तु अनेक और उपजावै ॥
गोधन कृषि कारण उपकारी । दुग्ध देय पोषन कर भारी ॥ ५ ॥
धन कणकी रक्षा करना है । सर्वदेश तिरपत रखना है ॥
कर इतना ही लेन विचारो । प्रजा कभी दुखमें नहिं धारो ॥ ६ ॥
प्रजा सुखी तहु राज्य सुखी है । राज्य वही जह कोई न दुखी है ॥
कर ग्रह विद्या करहु प्रचारा । विद्याबिन नर जन्म असारा ॥ ७ ॥
पुत्री पुत्र उभय अधिकारी । विद्या कला देहु अति भारी ॥
करहु स्वास्थ्यरक्षा जगजनकी । रोग शोग नहिं बाधा तनकी ॥ ८ ॥
प्रजा पुत्रसम पालहु ज्ञाता । दीन अनाथ करहु नित साता ।
सदा ध्यान रखिये भूराजा । प्रजा होय सुख शांति समाजा ॥ ९ ॥
शिल्प कलासे वस्तु बनाओ । देश देश भेजो धन लाओ ॥
जहां वाणिज्य तहां धन आवै । धन जिस देश वही सुख पावै ॥ १० ॥
जीवन सादा शुद्ध बिताओ । विषय मोहमें तन न गमाओ ॥
इन्द्रियभोग न्यायसे कीजे । जासे बल तन द्युति नहिं छीजै ॥ ११ ॥
है सन्तोष परम सुखकारी । परधनकी इच्छा दुखकारी ॥
निज तिय सम्पतिमें सुख मानो । पर तिय पर सम्पति पर जानो ॥ १२ ॥
समया वृथा कबहीं नहिं टालो । समय अमूल्य जान तन पालो ॥
होय सुखी नर नारि सदा ही । यह प्रबन्ध करिये गुणग्राही ॥ १३ ॥

फिर सब खड़े होजावे (नाभिराजा तो राज्य देकर पहले ही चले गए थे) और स्तुति पढ़े । परदा गिरे—

छन्द—जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र नाथजी । धन्य यह समय महान सुख निधान आपजी ॥
दीनबंधु हो दयालु जगत पाल कीजिये । दुःख क्लेश शोग मेट तृपत नाथ कीजिये ॥ १ ॥

राज्य गई महान आपका परम प्रकाश हो। यश अपार विस्तरै अन्यायका विनाश हो ॥
धन्य धन्य नाथ तुम्हीं ज्ञानमें प्रधान हो। राखिये कृपा जिनेन्द्र लोकमें महान हो ॥
जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र नाथजी। धन्य यह समय महान सुखनिधान नाथजी ॥२॥

आचार्य प्रतिमाको राज्यमहलमें विराजमान करते हैं तथा प्रतिमाओंको मुकुट व शस्त्र देकर " अस्मिन् बिम्बे राज्याभिषेकं आरोपयामि स्वाहा " ऐसा कहकर पुष्प क्षेपण करते हैं। सवेरे १० बजे तक क्रिया होजावे।

अध्याय छठा।

तपकल्याणक।

(१) भगवानको वैराग्य—इसी दिन जब सवेरे राज्याभिषेक किया था, १ बजेसे तपकल्याणककी विधि करैं। मण्डपसे कुछ दूर एक बन ढूंढ लेवें जहां बड़का वृक्ष हो उसीके नीचे ऋषभदेवका तपकल्याणक करना। जिस तीर्थंकरकी प्रतिष्ठा करनी हो उस तीर्थंकरके उसी वृक्षको तलाश करे। यदि वैसा न मिले तो २४ मेंसे कोई भी वृक्षके तले यह कल्याणक होवे। २४ वृक्षोंके क्रमसे नाम ये हैं—

१–वट या बर्गद, २–सप्तच्छद, ३–ताल, ४–साल, ५–प्रियगु, ६–प्रियंगु, ७–श्रीखण्ड, ८–नागवृक्ष, ९–साक, १०–पलाश, ११–तींदु, १२–पाटल, १३–जम्बू, १४–पिप्पल, १५–दधिपर्ण, १६–नदिवृक्ष, १७–तिलक, १८–आम्र, १९–अशोक, २०–चम्पा, २१–मोलश्री, २२–बांस, २३–धव, २४–शाल।

वनमें वृक्षके चारों ओर स्थान स्वच्छ हो। शुद्ध जलको छिड़क कर पवित्र करले वहां ही एक पाषाणकी शिला ऊंची भगवानको विराजमान करनेको नियत करे तथा आगे १ मंडल बनावे जिसमें २४ कोठे हों, पूजाकी सब सामग्री तैयार की जावे, मंडप भी छाया जावे जिसमें सुखसे सब बैठ सके। वटवृक्षको नियत कर आचार्य पहले सब देख आवे व प्रबंध कर आवे। उधर मंडपमें नरनारी टिकटों द्वारा बुलाए जावें। दूसरे चबूतरेपर भगवानकी राज्य सभा लगाई जावे। महाराज भगवान् विराजमान हों। आगे नृत्य व भजन होता हो, ऐसी सभा करके परदा खोला जावे। उस समय नीलांजना नामसे एक देवीको इन्द्र भेजे वह आकर नृत्य करने लगे। कोई कोई कन्या जो थोड़ासा नृत्य जानती हो सो नाचते नाचते एकदम भूमिपर गिरकर अचेतसी होजावे। उसी समय आचार्य भगवानकी ओरसे नीचे प्रकार कहें—

दोहा–धिक धिक् या संसारमें, नित्य नहीं पर्याय। देखत देखत विलय हो, ध्रुवता कोन लहाय ॥ १ ॥
मरणकाल आवे निकट, कोय न राखनहार। कोटिक यत्न विचारिये, निर्फल हों हरबार ॥ २ ॥
क्षण क्षण उम्र विलात है, ज्यों ज्यों काल बिताय। मरण करत मानें सुखी, हम युवान वय आय ॥ ३ ॥
जरा जु बाघन भयकरी, आवत है ततकाल। पकड़ तिसे निर्बल करे, डसे काल विकराल ॥ ४ ॥

या संसार अपारमें, चारों गति दुःखदाय। शारीरिक मनसा बहुत, क्लेश होंय भयदाय ॥ ५ ॥
देव आदि भी ना सुखी, तृष्णावश दुःख पाय। देख जलत पर सम्पदा, इष्ट वियोग धराय ॥ ६ ॥
जो जाने निज आपको, मरधै निज सुख सार। निजमें आपी मगन हो, सो सुखिया संसार ॥ ७ ॥
मोह अंध जे जीवड़ा, धन कुटुम्बमें लीन। आकुलता नितपति लहें, दशा बनाई दीन ॥ ८ ॥
द्रव्य भिन्न हर जीवका, जब पलटे पर्याय। उपजै मरै जु एकला, कोई नहीं सहाय ॥ ९ ॥
तीव्र क्लेश रुग शोकका, आपी भुगतै जीव। साथी सगा न देखिये, भिन्न भिन्न है जीव ॥१०॥
जब यह तन भी मम नहीं, साथ न जावै कोय। परिजन पुरजन धन कणा, किह विधि साथी होय ॥११॥
यह शरीर सुन्दर दिखे, भीतर मल समुदाय। खड़न गलन आदत धरै, तुरत मृतक होजाय ॥१२॥
तीन जगतमें अशुचि है, मानुष तन अधिकाय। वस्त्र माल जलशुचि दरब, परश अशुचि होजाय ॥१३॥
मिथ्या श्रद्धा धारके, हिंसादिक बहु पाप। करे कषायन वश रहे, हो प्रमाद सन्ताप ॥१४॥
मन वच काय न थिर रहे, योग भाव हिल जाय। कर्म वर्गणा पुंज तब, आवत तहं अधिकाय ॥१५॥
वच होय पिंजरा बने, कार्मण तन दुखदाय। जब तक यह टूटे नहीं, मुक्ति न कोय लहाय ॥१६॥
संवर भाव विचारिये, सम्यग्दर्शन सार। संयम अर वैराग्यसे, रुकै कर्मकी धार ॥१७॥
आतम ध्यान महा अगनि, जब निजमें प्रजलाय कोटिक भव बांधे करम, तुरत भस्म होजाय ॥१८॥
तप समान इस जीवका, मित्र न को संसार। निश्चय तप निज आतमा, तारै भवदधि खार ॥१९॥
पुरुषाकार अकृत्रिमा, लोक अनादि अनन्त। ऊरध मध्य अधो विषे, सिद्ध लोक सुखवन्त ॥२०॥
दुर्लभ है इस लोकमें, नर तन दीरघ आयु। इन्द्रिय बलकी पूर्णता, डर्स, न रोग कु बायु ॥२१॥
एक इन्द्रिय पर्यायते, बढ़न कठिन संसार। विरला नर तन पावता, जो सब तनमें सार ॥२२॥
या तन पाय न तप किया, लिया न निजरस स्वाद। मूरख अवसर चूकता, छाड़ै ना परमाद ॥२३॥
धर्म मित्र या जीवका, जो राखे शिव माहिं। दुर्गतिसे रक्षा करै, सुख देवै अधिकाहि ॥२४॥
हा हा धिक् धिक् है मुझे, इतना काल गमाय। मोह राज्य पुत्रादिमें, कर निज सुख विसराय ॥२५॥
अब संयम धरना सही, जिम धारा बहु लोक। कर्म काट शिव थल बसे, पाया निज सुख थोक ॥२६॥

कुछ विलम्ब करना नहीं, समय न पलटत जाय। क्षण क्षण आयु विलात है, राखनको न उपाय ॥२७॥
धम जिनकी शरणमें, रहना ही सुखकार। जो तारे भव सिंधुते, पहुंचावे शिव द्वार ॥२८॥

(२) लौकांतिक देवागम—इतनेमें आठ लौकांतिक देव सफेद धोती दुपट्टा पहने व सफेद ही मुकुट लगाए सभामें विनय सहित जाते हैं और पुष्पोंकी अजली मूर्तिके आगे चढ़ाकर नीचेप्रकार स्तुति करते है—

स्वामिन्नद्य जगत्त्रये प्रसरतां मांगल्यमाला यतः, सर्वेभ्यः सुकृतं भविष्यति भवत्तीर्थामृतांभोधरात् ।
घोरापज्ज्वलनापनोदनमितो भव्यात्मनां जायतां, वैराग्याय गमस्तथा परिचितस्तस्मै नमस्ते पुनः ॥८२३॥

संसारदुःखविनिवृत्तिपरायणः स्वयं बुद्ध्वा भवस्थितिमिमां स्वपरात्मनां शिवं ।
कर्तेत्यसावभिमतस्वनियोगभावुकानस्मान् प्रपंचयति निःक्रमणोत्सवस्तव ॥८२४॥

के वा वयं त्वदुपदेशविधानदक्षाः स्वायंभवस्य सकलागमपूतदृष्टेः ।
आत्मैव केवलमथो प्रतिबुद्धमार्गं नीतः स्वय न खलु भव्यगणोऽपि तात ॥८२५॥

अयं पितेयं जननी तवेति लोका मुधार्थं व्यवहारयन्ति ।
विश्वेशिता विश्वपितामहस्त्वं मातासि सर्वप्रतिपालनेच्छुः ॥८२६॥

अवाप्तसंसारतटः स्वलब्ध्या निमित्तमन्यत्समुपस्थितोऽसि ।
स्वयं प्रबुद्धः प्रभविष्णुरीशः कदापि नास्मत्स्तवनेन बुद्धः ॥८२७॥

प्रकाशितं सूर्यमुदीक्ष्य दीपः स्वयं स्वदीप्त्या किमु भाषयेत्तं ।
गंगा स्वयं शीतलतोपदात्री किं पल्वलेन स्वतृषां भनक्ति ॥८२८॥

जय कल्याणपरम्पर मदनभयङ्कर निजशक्तिपते ।
जय शाश्वतसुखकर त्रिभुवनमहिधर जय जय जय गुणरत्नपते ॥८२९॥

भाषा—छन्द स्रग्विनी—धन्य तू धन्य तू नाथ जो चित्त गहा धन्य हो नाथ वैराग्य उत्तम लहा ॥
तीर्थ धर्म महा वृष्टि हो लोकमें। मोह आपत्ति अगनी शमैं लोकमें ॥ १ ॥
संसृता दुःख मेटन तुम्हीं धीर हो। कर्म सेना प्रहारन तुम्हीं धीर हो ॥
बोध केवल प्रकाशन तुम्हीं सूर्य हो, भव्य कमलनि विकाशन तुम्हीं सूर्य हो ॥ २ ॥

हो स्वयंबुद्ध सम्यक्त गुण धारकं, ज्ञान वैराग्य जलमोहमल टारकं।
शक्ति अनुपम धरो काम बल नाशकं, आपमें आप ही आपको भाशकं ॥ ३ ॥
नाथ अब देर कुछ भी नहीं कीजिये, धार संयम कवच ध्यान असि लीजिये।
चार घाती महा कर्म क्षय कीजिये, धर्म त्रय रत्नत्रय देव यश लीजिये ॥ ४ ॥
आपको बोधने बल धरें हम नहीं, मात्र भक्ति करें पाप आवें नहीं।
सफल गात्रं यह नाथ धंदे तुम्हें, जन्म माना सफल नाथ देखे तुम्हें ॥ ५ ॥

इसतरह बड़े भावसे स्तुति पढके पुष्पांजलि प्रभुके चरणोंपर क्षेपण करके व नमस्कार करके विनय सहित लौट जावे—

(३) इन्द्रागमन पालकी सहित—इतनेहीमें इन्द्रादिदेव एक कलश जलका लिये व वस्त्राभूषणका थाल लिये तथा पालकीको कन्धेपर धरे सभामें आते हैं। पालकी आदिको यथायोग्य धरकर इन्द्रादि नमस्कार कर कहते हैं—

छन्द स्रग्विनी—हे प्रभू मोक्ष नगरी विजय कारणे, आत्म सुख सार अनुभव सदा धारणे।
मुक्ति लक्ष्मी मनोहर जु वश कारणे, सिद्ध पद सारको नित्य संधारणे ॥ १ ॥
जो विचारा मनोरथ सफल हो सही, मोह शत्रुपे तेरी विजय हो सही।
क्रोध आदि कषायें सभी नष्ट हों, ध्यान अग्नि जलें कर्म गण नष्ट हों ॥ २ ॥
साधु पदवी धरो व्रत महा आचरो, तीन गुप्ति सम्हालो समिति उर धरो।
हैं परम धर्म दश तोहि रक्षा करें, होंय उपसर्ग संकट उन्हें जय करें ॥ ३ ॥
धन्य जिनराज पुरुषार्थ कीना विमल, नष्ट रागादि कर आत्म कीजे विमल।
हम तो भक्ति करें और समरथ नहीं, होंय पावन इसीसे न हों दुख कहीं ॥ ४ ॥

(४) भगवानका राज्य त्याग व पालकीपर चढ़ वन जाना—फिर आचार्य नीचेका श्लोक पढ़ प्रतिमापर पुष्पांजलि क्षेपे। सूचक सभाको कहे कि भगवान् राज्यका त्याग करते हैं और पुत्र भरतको राज्य देते हैं—

दृढारुवैराग्यभरः स्वराज्यं पुत्राय वा भूपतिसाक्षि कृत्वा।
यः क्षात्रधर्मं खिलपंचभेदं दिदेश साक्षाच्च स एव विघः॥

तब इन्द्र प्रतिमाजीको उठाकर मस्तकपर रक्खे, वहींपर आचार्य एक नारियल रख दे व उसपर भगवानका मुकुट उतार कर रख दे। इससे यह सूचित करना है कि पुत्रको राज्यपद दिया। इन्द्र बिम्बको स्नान करानेके लिये उच्च आसनपर विराजमान करे। आचार्य यह मंत्र पढ़े—" ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थं आदिनाथ भगवन् पांडुकशिला पीठे तिष्ठ तिष्ठ स्वाहा।"

दीक्षोद्यमं मोक्षसुखैकसक्तं यं स्नापयांचक्रुरशेषशक्राः ।
समेत्य सद्यः परया विभूत्या तं स्नापयाम्यष्टशतेन कुंभैः ॥

ॐ ह्रीं जय जय जय अर्हंतं भगवंतं शुद्धोदकेन स्नापयामि इति स्वाहा । फिर इन्द्र वस्त्रसे पोंछकर, हलके चन्दनसे स्नान करे तब आचार्य यह श्लोक पढ़े—

इन्द्रो जिनेन्द्रस्नपनावसाने दिव्यांगरागेण यमालिलेप ।
कर्पूरकालागरुकुंकुमाढ्यश्रीचन्दनेनाहय समालभेऽगम् ॥

ॐ ह्रीं सहजसौगंध्यबंधुरांगस्यगंधलेपनं करोमि स्वाहा ।

फिर इन्द्र पोंछकर थालमें नए लाए वस्त्र आभूषण पहनावे तब आचार्य नीचे लिखा श्लोक पढ़े—

विभूषयामास जगत्त्रयस्य विभूषणं दिव्यविभूषणाद्यैः ।
पुरंदरोऽयं भगवज्जिनेन्द्रं स एव देवो जिनबिंब एषः ॥

ॐ ह्रीं श्री जिनांग विविधवस्त्राभरणेन विभूषयामि स्वाहा । फिर आचार्य नीचे लिखा वर्द्धमान मंत्र सातवार पढ़कर प्रभुपर सातबार पुष्प क्षेपे—" ॐ णमो भयवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स जस्स चक्कं जलन्तं गच्छइ । आयासं पायालं लोयाणं भूयाणं जूये वा विवादे वा रणंगणे वा रायंगणे थंभणे वा मोहणे वा सव्वजीवसत्ताण अपराजिदो भवदु मे रक्ख रक्ख स्वाहा ।

फिर दीक्षा लेते समय भगवानने दान किया उसकी स्थापनाके लिये आचार्य नीचेका श्लोक पढ़कर प्रतिमाके आगे पुष्प क्षेपें और कुछ रुपये दानके लिये देदिये जावें उसे प्रबन्धकर्ता यथायोग्य देदेवे ।

दीक्षोन्मुखस्तीर्थकरो जनेभ्यः किमिच्छकं दानमहो ददौ यः ।
दानं च मुक्त्यंगमितीव वक्तु स एव देवो जिनबिंब एषः ॥ १ ॥

फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़ पालकीपर पुष्प डाले

महीतलायातदिनेशबिंबशंकावहादीप्रमणिप्रभाढ्या ।
जिनेन या श्रीशिबिकाधिरूढा दिव्यात्र साक्षादियमस्तु सैव ॥ २ ॥

फिर नीचे लिखा श्लोक व मंत्र आचार्य पढ़े । इन्द्र विनय सहित भगवानको उठाकर पालकीपर विराजमान करे तब जय जय शब्द हो पुष्पवृष्टि हो ।

आपृच्छ्य बंधूनुचितं महेच्छः किमिच्छकं दानविधिं विधाय ।
निष्क्रामतिस्मावसथाध्वनो यः स एव देवो जिनबिंब एषः ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवर्मतीर्थाधिनाथ भगवज्जिन शिविकायां तिष्ठ तिष्ठेति स्वाहा।

इस समय कमसे कम चार भूमिगोचरी राजा व चार विद्याधर तैयार रहें। ये ही पालकीको कंधेपर रख सकेंगे—इनमेंसे कौन बने इसके निर्णयके लिये अन्य स्थानपर बोली बोलकर पहले तय किया जावे। जो रुपया आवे प्रतिष्ठामें खर्च हो। जितनी दूर वन हो उस मर्यादाके आठ भाग किये जावें—१ भाग तक भूमिगोचरी भगवानकी पालकीको लेकर चलें, फिर एक भागतक विद्याधर राजा ले चलें, फिर इन्द्रादिक देव ले चलें। जिस समय चार भूमिगोचरी राजा पालकी उठावें उस समय नीचेका श्लोक पढ़ आचार्य प्रतिमा पर पुष्प डालें—

पद्माश्रितां श्रीशिबिकां धुरीणाः स्कंधे समारोप्य पदानि सप्त ॥
जग्मुः पृथिव्यां प्रथमं नरेन्द्राः स एव देवो जिनबिंब एषः ॥ १ ॥

जब विद्याधर ले चलें तब यह पढ़े—

पद्माश्रितां श्रीशिबिकां धुरीणाः स्कंधे समारोप्य पदानि सप्त ॥
जग्मुः पृथिव्यामथ खेचरेन्द्राः स एव देवो जिनबिंब एषः ॥ २ ॥

फिर जब इन्द्र ले चलें तब यह श्लोक पढ़े और पुष्प क्षेपे—

यस्य प्रभोः श्रीशिबिकां प्रमोदात् स्कंधे समारोप्य वियत्पथेन।
तपोवनं निन्युरथामरेंद्राः स एव देवो जिनबिंब एषः ॥

दोनों तरफ इन्द्रादि चमर ढारते जावें, साथमें झंडियां हों, बाजे बजें, नृत्य होता हो, भजन होते हों, सर्व संघ साथ जावे। आध घंटेके भीतर वनमें पहुंच जावे।

(५) तप वनमें तप लेनेकी क्रिया—पहलेसे ही आचार्य जाकर तपोभूमिको नीचे लिखा मंत्र पढ़ शुद्ध करे. पानी छिड़के—
“ ॐ नीरजसे नमः ” फिर वटवृक्षकी स्थापना नीचे लिखा मंत्र पढ़ करें, वृक्षपर पुष्प क्षेपे।
ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं वृषभजिनस्य वटाख्य जिनदीक्षा वृक्ष अवतर २ संवौषट्। फिर नीचेका श्लोक पढ़ दीक्षामंडपपर पुष्प क्षेपे—

एवं विनिष्क्रम्य यमाससाद पुण्याश्रमं तीर्थकरः प्रशान्तः।
स एव चायं जिनमण्डपोस्तु श्रीमूलवेद्यां विहितप्रतीच्यां ॥

फिर आचार्य शिलाके स्थापनके लिये नीचे लिखा श्लोक पढ़ शिलापर साथिया बनावे व पुष्प क्षेपे—

स्वचित्तकल्पे विपुले विशुद्धे शिलातले यत्र तु चन्द्रकान्ते।
सुरेन्द्रकल्पे भगवान्निविष्टस्तदेव पीठं दृढमेतदस्तु ॥

फिर नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़ा जावे तब इन्द्र पालकीसे भगवानको उतारकर शिलापर पधरावे। मुख पूर्व या उत्तर हो—

उदङ्मुखः पूर्वमुखोऽथवा यो निविष्टवान्मूलशिलोपरिष्टात।
प्रव्रज्यया निर्वृतिसाधनोत्कः स एव देवो जिनबिंब एषः॥

ॐ ह्रीं धर्मतीर्थाधिनाथ भगवन्निह सुरेन्द्रविरचितचन्द्रकान्तशिलातले तिष्ठ तिष्ठ स्वाहा।

फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़ आचार्य चारोंतरफ पुष्प क्षेपे—

तपोवन यत्तदिहास्तु दीक्षावृक्षोऽपि सोयं च शिलापि सेयं।
स पुण्यकालोऽप्ययमेव यद्दीक्षोचितं तत्तदिहास्तु सर्वं॥

फिर आचार्यभक्ति और श्रुतभक्ति पढ़े। फिर नीचे लिखा श्लोक मंत्र पढ़ प्रतिमापर पुष्प क्षेपे व वस्त्राभूषण उतारकर एक थालीमें रक्खे।

यः सर्वसिद्धान्प्रणिपत्य केशानुत्पाट्य दिव्यांबरमाल्यभूषाः।
त्यक्त्वा प्रवव्राज निजात्मलब्ध्यै स एव देवो जिनबिंब एषः॥

ॐ नमो भगवतेऽर्हते सर्वः सामायिकप्रपन्नाय वस्त्राभूषणमपनयामि स्वाहा। फिर भगवानकी प्रतिमाके मस्तकमें गाढ़ी केशर लगाकर उसपर लौंग केशोंके भावोंकी स्थापनामें चिपका दे। नमः सिद्धेभ्यः कहकर उन केशरूप लौंगोंको किसी अन्य पेटी या थालीमें रक्खे अर्थात् केशलोंच करे। सूचक पात्र हरएक क्रियाको समझाता जावे तब दर्शकगण जय जयकार करें। उन केशोंकी थालीको वेदीपर रक्खी रहने दी जावे। फिर आचार्य ऐसा कहे—"अहं सर्व सावद्यविरतोस्मि" फिर सिद्धभक्तिका पाठ पढ़े।

पश्चात् केशरसे सोनेकी महीन सुईद्वारा प्रतिमापर अंक न्यास करे—पहले आचार्य मातृका मंत्र १०८ बार पढ़कर भावोंके द्वारा अपने अंगमें अक्षरोंको बैठा ले। इस समय सभाजनोंका मन लगानेको या तो १२ तपका उपदेश हो या वैरागी भजन हों—

मातृका मंत्र।

ॐ नमोऽर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः, क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व, श ष स ह। क्ष्मीं ह्रीं क्रौं स्वाहा।

आगे जहा प्रतिमाके अंगोंपर इन अक्षरोंको लिखना कहेंगे वही अपने अंगोंपर भी ध्यानसे बैठा लें।

(१) ओं नमः ऐसा कहकर अ अक्षरको ललाट या माथेपर लिखे॥ (२) ओं आं नमः ऐसा कहकर आ को मुखकी गोलाईपर लिखे अर्थात् मुखवृत्तपर लिखे। (३) ॐ इं नमः ऐसा कह इ को दाहनो आंखमें लिखे। (४) ॐ ईं नमः ऐसा कह ई को बाईं आंखमें लिखे। (५) ॐ उं नमः ऐसा कह उको दाहने कानमें लिखे। (६) ॐ ऊं नमः ऐसा कह ऊ को बाएं कानमें लिखे।

(७) ॐ ऋ नमः ऐसा कह ऋ को दाहनी तरफके नाक छिद्रमें लिखे। (८) ॐ ॠं नमः ऐसा कह ॠ को बाईं तरफके नाक छिद्रमें लिखे। (९) ॐ ऌं नमः ऐसा कह ऌ को दाहने (गण्डस्थ) गालपर लिखे। (१०) ॐ ॡं नमः ऐसा कह ॡ को बाएं गालपर लिखे। (११) ॐ ए नमः ऐसा कह ए को ऊपरको ओठमें। (१२) ॐ ऐं नमः ऐसा कह ऐ को नीचेके ओठमें। (१३) ॐ ओं औं नमः ऐसा ओ औ को ऊपर व नीचेके दांतोंमें। (१४) ॐ अं अः इति नमः ऐसा कह अं अः को सिरके ऊपर लिखे। (१५) ॐ क ख नमः ऐसा कह क ख को दाहनी भुजापर। (१६) ॐ गं घ नमः ऐसा कह ग घ को दाहने हाथकी अंगुलियोंमें। (१७) ॐ ङ नमः ऐसा कह ङ को दाहने हाथके अग्रभागमें या हथेलीमें। (१८) ॐ च छं नमः ऐसा कह च छ को बाईं भुजापर। (१९) ॐ ज झ नमः ऐसा कह बाए हाथकी अंगुलियोंमें। (२०) ॐ ञ नमः ऐसा कह ञ को बाएं हाथके अग्रभागमें या बाईं हथेलीपर। (२१) ॐ ट ठ नमः ऐसा कह ट ठ को दाहने चरणके मूलमें। (२२) ॐ ड ढ नमः ऐसा कह ड ढ को दाहने चरणकी गुल्फमें या टिकून्यामें। (२३) ॐ णं नमः ऐसा कह ण को दाहने चरणके अग्रभागमें या तलवेमें। (२४) तं थं नमः ऐसा कह त थ को बाए चरणके मूलमें। (२५) ॐ दं ध नमः ऐसा कह द ध को बाएं चरणकी गुल्फमें। (२६) ॐ नं नमः ऐसा कह न को बाएं चरणके अग्रभागमें। (२७) ॐ प फ नमः ऐसा कह प फ को दाहने पगकी पीठपर। (२८) ॐ बं भं नमः ऐसा कह ब भ को बाए पगकी पीठपर। (२९) ॐ म नमः ऐसा कह म को उदरमें। (३०) ॐ यं नमः ऐसा कह य को हृदयमें। (३१) ॐ रं नमः ऐसा कह र को दाहने कन्धेपर। (३२) ॐ ल नमः ऐसा कह ल को गलेमें (ककुदि)। (३३) ॐ व नमः ऐसा कह व को बाएं कन्धेपर। (३४) ॐ श नमः ऐसा कह श को हृदयसे लेकर दाहने हाथ तक लिखे। (३५) ॐ षं नमः ऐसा कह ष को हृदयसे लेकर बाए हाथ तक लिखे। (३६) ॐ सं नमः ऐसा कह स को हृदयसे लेकर दाहने पग तक लिखे। (३७) ॐ हं नमः ऐसा कह ह को हृदयसे लेकर बाएं पग तक लिखे। (३८) ॐ क्ष नमः ऐसा कह क्ष को हृदयसे लेकर उदर तक लिखे।

फिर आचार्य १०८ दफे नीचे लिखा अनादिसिद्ध मंत्र जपे—"ॐ णमो अरहताण, णमो सिद्धाणं, णमो आइरीयाणं णमो उवज्झायाणं' णमो लोए सव्वसाहूणं। चत्तारिमंगल, अरहंतमगल, सिद्धमगल, साहूमंगलं, केवलिपण्णत्तोधम्मोमगल। चत्तारिलोगुत्तमा, अरहंत लोगुत्तमा, सिद्धलोगुत्तमा, साहूलोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तोधम्मो लोगुत्तमा, चत्तारिसरणं पव्वज्जामि, अरहतसरण पव्वज्जामि, सिद्धसरण पव्वज्जामि, साहूसरण पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तोधम्मोसरणं पव्वज्जामि। झ्रौं झ्रौ स्वाहा। १०८ लौंग लेकर जपले या मालासे जपले।

फिर एक रकाबीमें लौंग या पुष्प लेकर प्रतिमापर नीचे लिखे मंत्रोंका संस्कार करे। अब उपदेश या भजन बन्द हो जावे। जैसे आचार्य मंत्र बोले उसीका भाव सूचक पात्र या कोई दर्शकोंको समझाता जाय—" जैसे जब कहा जाय सद्दर्शनसंस्कारः भवतु तब समझावे कि भगवानके बिम्बमें सम्यग्दर्शनका संस्कार प्राप्त हो यह भावना की गई है। इत्यादि।

(१) ॐ ह्रीं इह अर्हति सद्दर्शनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। इतना कह पुष्प या लौंग क्षेपे। इसी तरह पुष्प क्षेपता जाय। (२) ॐ

ह्रीं इह अर्हति सज्ज्ञानसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३) ॐ ह्रीं इह अर्हति सच्चारित्रसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (४) ॐ ह्रीं इह अर्हति सत्तपःसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (५) ॐ ह्रीं इह अर्हति (यहां दर्शन ज्ञान चारित्र व तपके वीर्यसे प्रयोजन मालूम होता है) सद्वीर्यचतुष्टयसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (६) ॐ ह्रीं इह अर्हति अष्टप्रवचनमातृकासंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (पांच समिति तीन गुप्तिको अष्टप्रवचनमातृका कहते हैं) (७) ॐ ह्रीं इह अर्हति शुद्ध्यष्टकावलंबसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा (आठ शुद्धि—भाव शुद्धि, कायशुद्धि, विनयशुद्धि, ईर्यापथशुद्धि, भिक्षाशुद्धि, प्रतिष्ठापनशुद्धि, शयनासनशुद्धि तथा वाक्यशुद्धि)—(८) ॐ ह्रीं अर्हति द्वाविंशतिपरीषहजयसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (९) ॐ ह्रीं इह अर्हति त्रियोगेन संयमाच्युतिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (१०) ॐ ह्रीं इह अर्हति कृतकारितानुमोदनैरतिचारनिवृत्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (११) ॐ इह अर्हति शीलसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (१२) ॐ ह्रीं इह अर्हति दशसंयमोपरमसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (५ इन्द्रियसंयम, ५ प्राणसंयम या पांच प्रकार जीव रक्षण)। (१३) ॐ ह्रीं इह अर्हति पञ्चेन्द्रियनिर्जयसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (१४) ॐ ह्रीं इह अर्हति संज्ञानचतुष्टयनिग्रहसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा (यहां मतिज्ञानादि चार स्थिर रहे)। (१५) ॐ ह्रीं इह अर्हति उत्तमक्षमादि दशविधधर्मधारणसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (१६) ॐ ह्रीं इह अर्हति अष्टादशसहस्रशीलपरिशीलनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (१७) ॐ ह्रीं इह अर्हति चतुरशीतलक्षोत्तरगुणसमाश्रयसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (१८) ॐ ह्रीं इह अर्हति अतिशयविशिष्टधर्मध्यानसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (१९) ॐ ह्रीं इह अर्हति अप्रमत्तसंयमसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२०) ॐ ह्रीं इह अर्हति सुदृढश्रुततेजोवाप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२१) ॐ ह्रीं इह अर्हति अप्रकंपक्षपकश्रेण्यारोहणसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२२) ॐ ह्रीं इह अर्हति अनन्तगुणविशुद्धिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२३) ॐ ह्रीं इह अर्हति अथाप्रमत्तकरण या अधःकरणप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२४) ॐ ह्रीं इह अर्हति पृथक्त्ववितर्कवीचारशुक्लध्यानसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२५) ॐ ह्रीं इह अर्हति अपूर्वकरणप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२६) ॐ ह्रीं इह अर्हति अनिवृत्तिकरणप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२७) ॐ ह्रीं इह अर्हति बादरकषायचूर्णनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२८) ॐ ह्रीं इह अर्हति सूक्ष्मकषायचूर्णनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (२९) ॐ ह्रीं इह अर्हति सूक्ष्मसाम्परायचारित्रसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३०) ॐ ह्रीं इह अर्हति प्रक्षीणमोहसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३१) ॐ ह्रीं इह अर्हति यथाख्यातचारित्रावाप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३२) ॐ ह्रीं इह अर्हति एकत्ववितर्कावीचारशुक्लध्यानावलम्बनसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३३) ॐ ह्रीं इह अर्हति घातिघातसमुद्भूतकैवल्यावगमसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३४) ॐ ह्रीं इह अर्हति धर्मतीर्थप्रवृत्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३५) ॐ ह्रीं इह अर्हति सूक्ष्मक्रियाशुक्लध्यानपरिणत्वसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३६) ॐ ह्रीं इह अर्हति शीलेशीकरणसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा (१८००० शीलका स्वामीपना)। (३७) ॐ ह्रीं इह अर्हति परमसंवरसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३८) ॐ ह्रीं इह अर्हति योगचूर्णकृतिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (३९) ॐ ह्रीं इह अर्हति योगायुतिभाक्त्वसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा (अयोग्य गुणस्थान प्राप्ति)। (४०) ॐ ह्रीं इह अर्हति समुच्छिन्नक्रियाशुक्लध्यानप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (४१) ॐ ह्रीं इह अर्हति निर्जरायाः परमकाष्ठारूढत्वसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (४२) ॐ ह्रीं इह अर्हति सर्वकर्मक्षयाप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (४३) ॐ ह्रीं इह अर्हति अनादिभवपरावर्तनविनाशसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (४४) ॐ ह्रीं इह अर्हति द्रव्यक्षेत्रकालभवभावपरावर्तननिष्क्रांतिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा।

(४५) ॐ ह्र इह अर्हति चतुर्गतिपरावृत्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (४६) ॐ ह्रीं इह अर्हति अनंतगुणविद्धत्वप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (४७) ॐ ह्रीं इह अर्हति अदेहबहनज्ञानोप्रयोगचारित्रसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। (४८) ॐ ह्रीं अर्हं इहार्हतिबिम्बे अदेहबहोत्पदर्शनोपयोगै-श्वर्यप्राप्तिसंस्कारः स्फुरतु स्वाहा। नोट-सूत्रकार या पंडित यह समझावे कि इस बिम्बमें यहगुण प्रकाशमान हों ऐसा स्थापन इस बिम्बमें किया जाता है। अब पूजा की जाये। मंडलके आगे आचार्य पूजा करे इन्द्र भी शामिल हो।

(६) तपकल्याणककी पूजा।

अथासिधाराव्रतमद्वितीयं निर्वाणदीक्षाग्रहणं दधानम्। यमर्चयामासुरशेषशक्रास्तमर्चयामो जगदर्चनीयम्॥

ऐसा कह पुष्पांजलि क्षेपै।

सारशांतरसनिर्जितास्मवत्त्वत्पदाग्रप्रति तेन वारिणा॥ तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम्॥

ॐ ह्रीं श्री तीर्थकृन्मुनिललामं जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

सद्गुणप्रगुणचंदनेन ते कीर्तिवत्सकलतोषपोषिणा।
तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम्॥ चंदनं॥ २॥
त्वन्मुखेन्दुभजनार्थमागतैर्भव्रजैरिव वलक्षकाक्षतैः।
तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम्॥ अक्षतं॥ ३॥
सुप्रमादसुकुमारतादिभिस्त्वद्वचोभिरिव नव्यपुष्पकैः।
तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम्॥ पुष्पं॥ ४॥
चारुणाथ चरुणामृतांशुवद्वर्यंजनैरपि तदंकशंकिभिः।
तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम्॥ चरुं॥ ५॥
धर्मदीपक न ते वयं समा, भक्तुमित्थमितयत्प्रदीपकैः।
तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम्॥ दीपं॥ ६॥
सेव्यपाद नयेद्भगवंतस्यान्मसुधूपधूमकैः।
तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम्॥ धूपं॥ ७॥
नम्रभव्यसुकृतानुकारिभिः सारभूतसहकारकाद्विभिः।
तीर्थकृन्मुनिललाम तावकं यायजीमि पदपंकजद्वयम्॥ फलं॥ ८॥

गुणमणिगणसिंधून्भव्यलोकैकबंधून्। प्रकटितजिनमार्गान्ध्वस्तमिथ्यात्वमार्गान् ॥
परिचितनिजतत्वान्पालिताशेषसत्वान्। शमरसजितचंद्रानर्घ्ययामो मुनीन्द्रान् ॥ अर्घ्यं ॥

श्रीमद्बोधत्रयाढ्य प्रविमलचरितस्वात्मसद्ध्याननिष्ठ।
स्याद्वादांभोजभानो त्रिजगदुपकृतिव्यग्रयोगीश्वर त्वाम् ॥
अर्घ्यं चानर्घ्यनानाविधिविहितं द्रव्यशुद्धार्थं वयं।
प्रेक्षिप्योद्दारपुष्पांजलिमलिकलितं सूरिभक्त्या नमामः ॥ महार्घं ॥ १० ॥

अब २४ भगवानकी तपकल्याणककी पूजा की जावे।

गीता छन्द—श्री रिषभदेव सु आदि जिन श्रीवर्द्धमान जु अंत हैं।
वन्दुहुं चरण वारिज तिन्होंके जपत तिनको संत हैं ॥
करके तपस्या साधु व्रत ले मुक्तिके स्वामी भए।
तिन तपकल्याणक यजनको द्रव्य आठों हैं लए ॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादि वर्द्धमानजिन अत्रावतरावतर संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, अत्र मम सन्निहितो भव२ वषट्।

छन्द चाली—शुचि गंगाजल भर झारी, रुज जन्म मरण क्षयकारी।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥

ॐ ह्रीं ऋषभादिवर्द्धमानजिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चंदन घसि लाऊं, भवका आताप शमाऊं। तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥चंदनं॥
अक्षत ले शशि दुतिकारी, अक्षयगुणके करतारी। तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥अक्षतं॥
बहु फूल सुवर्ण चुनाऊं, निज काम व्यथा हटवाऊं। तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ पुष्पं ॥
चरु ताजे स्वच्छ बनाऊं, निज रोग क्षुधा मिटवाऊं। तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ चरुं ॥
दीपक ले तम हरतारा, निज ज्ञानप्रभा विस्तारा। तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ दीपं ॥
धूपायन धूप खिवाऊं, निज आठों कर्म जलाऊं। तपसी जिन चौबीस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ धूपं ॥
फल सुन्दर ताजे लाऊं, शिवफल ले चाह मिटाऊं। तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥ फलं ॥
शुभ आठों द्रव्य मिलाऊं, करि अर्घ परमसुख पाऊं। तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए ॥अर्घं॥

प्रत्येक अर्घ ।

नौमी वदि चैत प्रमाणी, वृषभेश तपस्या ठानी । निजमें निज रूप पिछाना, हम पूजत पाप नशाना ॥
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णानवम्यां श्री ऋषभजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

दशमी शुभ माघ वदीको, अजितेश लियो तप नीको । जगका सब मोह हटाया, हम पूजत पापभगाया ॥
ॐ ह्रीं माघकृष्णादशम्यां श्री अजितनाथाय जिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

मगसिर सुदि पूरणमासी, संभव जिन होय उदासी । केशलोंच महातप धारो, हम पूजत भय निरवारो ॥
ॐ ह्रीं अगहनशुक्लापूरणमास्यां श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

द्वादश शुभ माघ सुदीकी, अभिनंदन वन चलनेकी । चित ठान परमतप लीना, हम पूजत हैं गुण चीन्हा ॥
ॐ ह्रीं माघशुक्लाद्वादश्यां श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (४)

नौमी वैसाख सुदीमें, तप धारा जाकर वनमें । श्री सुमतिनाथ मुनिराई, पूजूं मैं ध्यान लगाई ॥
ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लानवम्यां श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (५)

कातिक वदि तेरसि गाई, पद्म प्रभु समता भाई, वन जाय घोर तप कीना, पूजें हम सम सुख भीना ।
ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णात्रयोदश्यां श्रीपद्मप्रभुजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६)

सुदि द्वादश जेठ सुहाई, बारा भावन प्रभु भाई, तप लीना केश उपाड़े, पूजूं सुपार्श्व यति ठाड़े ॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लाद्वादश्यां श्री सुपार्श्वजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७)

एकादश पौष वदीको, चन्द्रप्रभु धारा तपको । वनमें जिन ध्यान लगाया, हम पूजत ही सुख पाया ॥
ॐ ह्रीं पौष कृष्णाएकादश्यां श्रीचन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८)

अगहन सुदि एकम जाना, श्री पुष्पदंत भगवाना । तप धार ध्याय निज कीना, पूजूं आतम गुण चीन्हा ॥
ॐ ह्रीं अगहनशुक्लाएकं श्री पुष्पदतजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (९)

द्वादशि वदी माघ महीना, शीतल प्रभु समता भीना । तप राखो योग सम्हारो, पूजें हम कर्म निवारो ॥
ॐ ह्रीं माघकृष्णा द्वादश्यां श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय तप जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१०)

वदि फाल्गुण ग्यारस गाई, श्रेयांसनाथ सुखदाई, हो तपसी ध्यान लगाया, हम पूजत हैं जिनराया ॥
ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णा एकादश्यां श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (११)

वदि फाल्गुण चौदसि स्वामी, श्रीवासुपूज्य शिवगामी । तपसी हो समता साधी, हम पूजत धार समाधी ॥
ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णा एकादश्यां श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१२)

वदि माघ चौथ हितकारी, श्री विमल सु दीक्षा धारी। निज परिणतिमें लय पाई, हम पूजत ध्यान लगाई॥
ॐ ह्रीं माघ कृष्णाचतुर्थ्यां श्री विमलनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१३)

द्वादशि वदि जेठ सुहानो, वन आए जिन अघ हानी। धर साम्यायिक तप साधा, हम पूजूं अनंत हरबाधा॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णाद्वादश्यां श्री अनंतनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१४)

तेरस सुदि माघ महीना, श्री धर्मनाथ तप लीना। वनमें प्रभु ध्यान लगाया, हम पूजत मुनिपद ध्याया॥
ॐ ह्रीं माघशुक्लात्रयोदश्यां श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१५)

चौदस शुभ जेठ वदीमें, श्री शांति पधारे वनमें। तहं परिग्रह तज तप लीना, पूजूं आतमरस भीना॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१६)

करि दूर परिग्रह सारी, वैसाख सुदी पड़िवारी। श्री कुन्थु स्वात्मरस जाना, पूजनसे हो कल्याणा॥
ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाप्रतिपदाम्यां श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१७)

अगहन सुदि दशमी गाई, अरनाथ छोड़ गृह जाई। तप कीना होय दिगंबर, पूजें हम शुभ भावों कर॥
ॐ ह्रीं अगहनशुक्लाचतुर्दश्यां श्री अरनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय निर्वपामीति स्वाहा। (१८)

अगहन सुदि ग्यारस कीना, सिर केशलोच हित चीन्हा। श्रीमल्लि यती व्रतधारी, पूजें नित साम्य प्रचारी॥
ॐ ह्रीं अगहनशुक्लाएकादश्यां श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१९)

वैसाख वदि दशमीको, मुनिसुव्रत धारा व्रतको। समता रसमें लौ लाए, हम पूजत हो सुख पाए॥
ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णादशम्यां श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०)

दशमी आषाढ वदीकी, नमिनाथ हुए एकाकी। वनमें निज आतम ध्याए, हम पूजत हो सुख पाए॥
ॐ ह्रीं आषाढकृष्णादशम्यां श्री नेमिनाथाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२१)

छठि श्रावण शुक्ला आई, श्री नेमिनाथ वन जाई। करुणा धर पशू छुड़ाए, धारा तप पूजूं ध्याए॥
ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लाषष्ठ्यां श्री नेमनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२२)

लखि पौष इकादशि श्यामा, श्री पार्श्वनाथ गुणधामा। तप ले वन आसन ठाना, हम पूजत शिवपद पाना॥
ॐ ह्रीं पौषकृष्णाचतुर्दश्यां श्री पार्श्वजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२३)

अगहन वदि दशमी गाई, धारा भावन शुभ भाई। श्री वर्द्धमान तप धारा, हम पूजत हों भव पारा॥
ॐ ह्रीं अगहनकृष्णादशम्यां श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२४)

जयमाल ।

भुजंगप्रयात छन्द—नमस्ते नमस्ते नमस्ते मुनिन्दा । निवारें भली भांतिसे कर्म फन्दा ॥
संवारे सु द्वादश तपं घन मंझारी । सदा हम नमत हैं तिन्हें मन सम्हारी ॥ १ ॥
त्रयोदश प्रकारं सु चारित्र धारा । अहिंसा महा सत्य अस्तेय प्यारा ॥
परम ब्रह्मचर्यं परिग्रह तजाया । सु धारा महा संयमं मन लगाया ॥ २ ॥
दया धार भूको निरखकर चलत हैं । सुभाषा महा शुद्ध मीठी वदत हैं ।
करैं शुद्ध भोजन सभी दोष टालें । दयाको धरे वस्तु लें मल निकालें ॥ ३ ॥
वचन काय मन गुप्तिको नित्य धारें । परम ध्यानसे आत्म अपना विचारें ॥
धरें साम्य भावं रहें लीन निजमें । सु चारित्र निश्चय धरें शुद्ध मनमें ॥ ४ ॥
ऋषभ आदि श्री वीर चौवीस जिनेशा । यजे वीर क्षत्री गुणी ज्ञान ईशा ।
खड्ग ध्यान आतम कुवल मोह नाशा । जजें हम यतनसें स्वआतम प्रकाशा ॥ ५ ॥

दोहा—धन्य साधु सम गुण धरें, सहें परीसह धीर । पूजत मंगल हों महा, टलें जगतजन पीर ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि वीरांत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो तपकल्याणकप्राप्तेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पूजाके पीछे फिर आचार्य नीचेका श्लोक पढ़ सामायिक चारित्रका स्थापन प्रतिमामें करके पुष्प प्रतिमापर क्षेपें ।

य: सर्वसावद्यनिवृत्तिरूपं, चारित्रमाद्यं विगतप्रमादं ।
आसेदिवान्सिद्धगुणानुरक्तः, स एव देवो जिनबिम्ब एषः ॥

फिर चार बत्तीका दीपक जलाकर नीचे लिखा श्लोक पढ़ प्रतिमापर पुष्प क्षेपे । संघको सूचित करे कि भगवानको मनःपर्यय-ज्ञानकी प्राप्ति हुई है अर्थात् भगवान ४ ज्ञानधारी हैं ।

यदा तु सामयिकभाववृत्तं, तदा मनःपर्ययचतुर्थबोधं ।
अतश्चतुर्ज्ञानविराजितो यः, स एव देवो जिनबिम्ब एषः ॥

फिर इन्द्रादि प्रणाम करके शांतिभक्ति पढ़े । फिर आचार्य भगवान्‌के केशोंको पात्रमें स्थापकर नीचेका श्लोक पढ़कर भगवान्‌के आगे पुष्प डाले—

यस्य प्रभोः केशकलापमिन्द्रः, सम्पूज्य निक्षिप्य च रत्नपात्रम् ।
निक्षेपयामास पयः पयोधौ, स एव देवो जिनबिम्ब एषः ॥

फिर आचार्य इन्द्रको कहे "इन पवित्र केशोंको क्षीरसमुद्रमें क्षेपो", इन्द्र लेकर बाजे बाजेके साथ देवोंके साथ जाकर किसी नदी या कूपमें क्षेपे । फिर आचार्य सर्व उपस्थित मंडलीसे नियमादि व व्रतादि लेनेको कहे । कुछ देर पीछे विसर्जन करके जय बोले, सर्व सब जावे । आचार्य मूर्तिको कपड़ेमें ढककर मूल वेदीपर लाकर विराजमान करे तब अन्य प्रतिमाओंके वस्त्रादि उतारकर चन्दनसे लेपकर फिर पोंछकर मूल प्रतिमाके समान अक न्यास करे अर्थात् अक्षरोंको लिखे फिर ४८ संस्कार पढ़के सबपर पुष्प डाले और कहे— अस्मिन् बिम्बे तपकल्याणकं आरोपयामि स्वाहा । फिर नमस्कार कर तपकल्याणककी क्रिया समाप्त करे ।

अध्याय सातवां ।

ज्ञानकल्याणक ।

(१) **भगवानका प्रथम आहार**—तपकल्याणकके दूसरे दिन बड़े सवेरे आचार्य, इन्द्र आदि पात्र मंडपमें आवे और पहलेके दिनकी भांति अग शुद्ध करके अभिषेक व पूजा तथा होम करले । मंडपमें ही यह दृश्य दिखाया जावे । पहले चबूतरे तक परदा पड़ा हो । दूसरे चबूतरे पर जहांतक विधि एकत्र की जावे वहांतक परदा रहे । दूसरे चबूतरे पर राजा सोम व श्रेयांसके घरकी कल्पना की जावे । आहार देनेके लिये इक्षुका रस तैयार किया जावे व पूजनकी सामग्री हो । एक स्थान आहार देनेको व एक स्थान पहले भगवानको विराजमान कर पूजा करनेको रहे । कोई दो गृहस्थोंको राजा सोम व श्रेयांस स्थापित किया जावे । इसके लिए बोली बोल ली जावे–जो अधिक रुपया प्रतिष्ठाके खर्चमें दे उन्हें ही बनाया जावे । यह पहले ही किया जावे । जो बनें वे स्त्री सहित हों व न्यायमार्गी जिनधर्मके पक्के श्रद्धालु हों । राजा सोम व श्रेयांस शुद्ध धोती दुपट्टा पहने, मस्तक ढके, दोनों स्त्रियां भी शुद्ध वस्त्र पहनें । चारों जने नारियलसे ढका पानीका कलश लेकर चबूतरेके आगे ही द्वारापेक्षणके निमित्त खड़े हों । इतनेमें परदा उठे ।

आचार्य मूल प्रतिमाको लेकर मंडपके बाहरसे सिरपर धरकर लावे उस समय सर्व सभाजन जयजयकार शब्द कहे । अब चबूतरेके पास प्रभु आजावें तब राजा सोम कहे–"अत्र आहार पानी शुद्ध, तिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ" फिर आचार्य भगवानको उच्च आसनपर विराजमान करें तब दातार राजा सोम भगवानके चरणोंको शुद्ध जलसे धोवे, गन्धोदक लगावे फिर हाथ धो अष्टद्रव्यसे नीचे प्रकार पूजन करें । पूजन करके तीन प्रदक्षिणा दे नमस्कार करें फिर नौ दफे णमोकार मंत्र पढ़े । भगवानको आचार्य उठाकर दूसरे उच्च आसनपर विराजमान करें तब राजा सोम इक्षु रसकी धारा भगवानके हाथपर डाले तब ही ऊपरसे रत्नोंकी व [illegible]ष्पोंकी [illegible] । मंडपके बा[illegible]

भीतर घंटा घड़ियाल बजे, मन्द सुगन्धित पवन चलानेके लिये सुगन्धित धूप खेई जावे तथा लोग यह कहें—धन्य यह दान, धन्य यह पात्र ! श्रीतीर्थंकर ऋषभदेव, धन्य यह दातार ! चारों तरफ खूब जयजयकार शब्द हो। फिर शुद्ध जलसे हाथोंको धोकर कपड़ेसे पोंछ दे। आचार्य प्रतिमाको दूसरे आसनपर विराजमान करें और आचार्य या सूचक पात्र या अन्य कोई पंडित दानका महात्म्य समझावें तथा उस समय राजा सोम व श्रेयांस स्त्री सहित हाथ जोड़े प्रभुके सन्मुख खड़े रहें तथा चार दान व विद्यादानार्थ कुछ रकमकी घोषणा करावे तथा आचार्य अन्य लोगोंको भी दानकी प्रेरणा करें। यदि दानकी इच्छा हो तो मुखिया पट्टी लेकर सबके पास घूम आवे। इधर आचार्य भगवानको लेकर मंडपसे बाहर ले जाकर मूल वेदीपर विराजमान करे, दूसरे चबूतरेपर भी परदा पड़ जावे परन्तु मंडपमें भजन होने लगें। जबतक दान न लिख जावे मंडपसे किसीको जाने न दिया जावे।

पूजा जो आहारके समय पढ़ी जावे।

पहले ही राजा सोम व श्रेयांस मिलकर स्तुति पढ़े—

पद्धरी छन्द—जय जय तीर्थंकर गुरु महान, हम देख हुए कृतकृत्य प्राण।
महिमा तुमरी बरणी न जाय, तुम शिव मारग साधत स्वभाव ॥ १ ॥
जय धन्य धन्य ऋषभेश आज, तुम दर्शनसे सब पाप भाज।
हम हुए सु पावन गात्र आज, जय धन्य धन्य तप सार साज ॥ २ ॥
तुम छोड़ परिग्रह भार नाथ, लीनो चारित तप ज्ञान साथ।
निज आतम ध्यान प्रकाशकार, तुम कर्म जलावन वृत्ति धार ॥ ३ ॥
जय सर्व जीव रक्षक कृपाल, जय धारत रत्नत्रय विशाल।
जय मौनी आतम मननकार, जग जीव उद्धारण मार्ग धार ॥ ४ ॥
हम गृह पवित्र तुम चरण पाय, हम मन पवित्र तुम ध्याय ध्याय।
हम भए कृतारथ आप पाय, तुम चरण सेवने चित बढ़ाय ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभ तीर्थंकर पुष्पांजलि क्षिपेत्। थालमें पुष्प डाले।

वसंत तिलका—सुन्दर पवित्र गंगाजल लेय झारी, डारूं त्रिधार तुम चरणन अग्र भारी।
श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभ तीर्थंकर मुनींद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा।

श्री चन्दनादि शुभ केशर मिश्र लाये, भव ताप उपशम करण निज भाव ध्याए।
श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा॥ चंदनं॥
शुभ श्वेत निर्मल सुअक्षत धार थाली, अक्षय गुणा प्रगट कारण शक्तिशाली।
श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा॥ अक्षतं॥
चम्पा गुलाब इत्यादि सु पुष्प धारे, है काम शत्रु बलवान तिसे विदारे।
श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा॥ पुष्पं॥
फेणी सुहाल बरफी पकवान लाए, क्षुद्रोग नाशने कारण काल पाए।
श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा॥ चरुं॥
शुभ दीप रत्नत्रय लाय तमोपहारी, तम मोह नाश सम होय अपार भारी।
श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा॥ दीपं॥
सुन्दर सुगन्धित सु पावन धूप खेऊं, अरु कर्म काटको बाल निजात्म वेऊं।
श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा॥ धूपं॥
द्राक्षा बदाम फल सार भराय थाली, शिव लाभ होय सुखसे समता संभाली॥
श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा॥ फलं॥
शुभ अष्ट द्रव्य मय उत्तम अर्घ लाया, संसार खार जल तारण हेतु आया।
श्रीतीर्थनाथ वृषभेश मुनींद्र चरणा, पूजूं सुमंगल करण सब पाप हरणा॥ अर्घं॥

जयमाल ।

छन्द सृग्विनी–जय मुद्रारूप तेरे सदा दोष ना, ज्ञान श्रद्धान पूरित धरैं शोक ना ।
राजको त्याग वैराग्य धारी भए, मुक्तिका राज लेने परम मुनि थये ॥ १ ॥
आत्मको जानके पापको भानके, तत्त्वको पायके ध्यान उर आनके ।
क्रोधको हानके मानको हानके, लोभको जीतके मोहको भानके ॥ २ ॥
धर्म मय होयके साधते मोक्षको, बाधते मोक्षको जीतते दूषको ।
शांतता धारते साम्यता पालते, आप पूजन किये सर्व अघ बालते ॥ ३ ॥
धन्य हैं आज हम दान सम्यक् करें, पात्र उत्तम महा पापके दुख दरें ।
पुण्य सम्पत भरें काज हमरे सरें, आप सम होयके जन्म सागर तरें ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभ तीर्थंकर मुनींद्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(२) भगवानका क्षपकश्रेणीपर आरूढ़ होना—सबेरे १० बजे तक आहारदानकी विधि हो जावे । दो घंटे छुट्टी रहे । १२ बजेसे मंडपमें कार्य प्रारंभ किया जावे । १२॥ बजे सर्व समूह टिकटों द्वारा एकत्र किया जावे । आज ज्ञानकल्याणक होकर शाम तक प्रभुका नगरमें विहार व उपदेश होजावे । रात्रिको मंडपमें उपदेश हो । विहार करनेके लिये यथायोग्य जुलूस तैयार रहे । रथपर प्रभुका विहार हो जो २ घंटेके भीतर लौट आवे । रास्तेमें चार जगह शामियाना रहे । ऐसा रास्ता लिया जावे जो जाते हुए दूसरा हो व आते हुए दूसरा हो । जब विहार होवे जो शामियाना हो, वहां रथ ठहर जावे, वहां १ भजन व २० मिनट धर्मोपदेश हो । मंडपमें दूसरे चबूतरेपर एक वनकी शोभा तैयार की जावे, कुछ गमले रख दिये जावे व एक छायादार वृक्ष रहे जिसके नीचे उच्च शिलापर भगवान् अकेले तप करते हुए बैठे हों ऐसी रचना उस वृक्षकी स्थापनाके लिये नीचेका श्लोक पढ़ उसपर पुष्प क्षेपे—

शाखाच्छायेन योसौ हरति खलु सतां कर्मघर्मोशुतापम् ।
यः सौख्योदारसारं फलति शुभफलं मोक्षनाकादिभेदम् ॥
सेवंते यं तदर्थं विबुधजनखगा यस्य चैवं प्रभावः ।
संगाज्जातो हि तस्य त्रिभुवनमहितः सोस्तु बोधिद्रुमोऽयम् ॥ १ ॥

जिस शिलापर आचार्य विराजमान करे उससे ऊपर मातृका यंत्र नीचे प्रमाण लिखदे । फिर प्रतिमाजीको विराजमान करे ।

मातृका यंत्र।

ॐ नमो	क ख ग घ ङ			च छ ज झ ञ
श ष स ह	अं अः	अ आ	इ ई	ट ठ ड ढ ण
	ओ औ	र्हं	उ ऊ	
	ए ऐ	ऌ ॡ	ऋ ॠ	
य र ल व	प फ ब भ म			त थ द ध न

क्ष्मीं ह्रीं क्ष्मौं स्वाहा।

और इसी मंत्रको १०८ वार पढ़कर आगे जलधारा देवे।

मातृका मंत्र।

ॐ नमोऽर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः, क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व, श ष स ह, क्ष्मीं ह्रीं क्ष्मौं स्वाहा।

फिर परदा उठावे तब सब जयजयकार शब्द कहें। दूसरे चबूतरेपर सिवाय आचार्यके और कोई न हो। सूचक पात्र एक कोनेमें खड़ा हुआ कहे कि भगवान् ध्यानमें मग्न हैं तपस्या कर रहे है। आचार्यके पास पूजनकी सामग्री हो।

२-३ मिनट ठहरकर आचार्य उठे और प्रतिमाजीको नमस्कार करता हुआ यह स्तुति पढ़े—

छन्द मुक्तादान—**नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु मुनीश। परम तपके करतार रिषीश॥**
न मोह न मान न क्रोध न लोभ। न हास्य न खेद न द्रोह न क्षोभ॥ १॥

ममत्व न राग पदारथ सर्व। चिदातम वेदत छांड़त गर्व ॥
सु भेद विज्ञान जगो चित बीच। सु आतम अनुभव लावत खींच ॥ २ ॥
स्वतत्त्व रमन्त करत निज काज। कषाय रिपु दलनेको आज ॥
लियो सत ध्यान मई अति सार। नमूं तुमको जिन कर्म निवार ॥ ३ ॥

फिर नीचेका श्लोक पढ़कर अर्घ देवे।

बाह्याभ्यन्तरभेदतो द्विविधता तत्रापि षट्भेदकं, बाह्याबांतरमेधितस्वविभवप्रत्यूहनिर्णोशनात्।
भक्ष्याभावनदूनताव्रतपरीसंख्यानषट्स्वादनामोहैकांतशयासनांगकदनान्येवं तु बाह्यं तपः ॥ ८४४ ॥

ॐ ह्रीं अनशनावमोदर्यवृत्तिपरिसंख्यानरसपरित्यागैकांतशय्यासनकायक्लेश षट्प्रकार बाह्यतपोधारकाय जिनाय अर्घं नि० स्वाहा।

अंत्ये दोषविसंगतो न भवति प्रायश्चितानां क्रमो, नो वा यत्र विनेयताव्युपरमादौपाधिकस्योद्भवः।
नान्यत्र स्थिनिमत्सु साधुषु तथा वैयावृतेः प्रक्रमो, नो वा शास्त्रसुशीलनं तिष्ठति परंपार्येण बोध्यं जिने ॥८४५॥
व्युत्सर्गं प्रतिवासरं प्रसरतो ध्यानं स्वमाध्यायन, आरूणामाञ्जुपावरत्नप्रतिकूलतेर्भोगप्रलं भावनात्।
गाढोत्कृष्टसुसंहननस्य जिनपस्यास्येति संरूढितः, कलृप्तं तच्छुचि नाम तत्फलगणैः संपूजयाम्यादरात् ॥८४६॥

ॐ ह्रीं प्रायश्चितविनयवैयावृत्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यान षट्प्रकारान्तरगतपोनिष्ठाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

यहांपर सूचक कहदे कि प्रभु १२ तपका साधन कर रहे हैं, धर्मध्यानमें मग्न है।

दोहा—अप्रमत्त थानक चढ़े, अधःकरणमें लीन। क्षपक श्रेणिका यत्न है, कर्म करे अति दीन ॥
सम्यक्त घातक प्रकृति, सात नहीं प्रभु पास। देव नरक तिर्यञ्चगति, नहीं तहां है वास ॥

ॐ ह्रीं अप्रमत्तगुणस्थानवर्ती अधःकरणप्रवृत्त मिथ्यात्वादि दशकर्मसत्तारहित श्रीजिनाय अर्घं।

यहा दो आचार्य या सूचकपात्र सभाको समझा दे कि भगवान क्षपकश्रेणीपर चढनेका उद्यम कर रहे हैं। सातिशय अप्रमत्त गुणस्थानमें अधःकरण लब्धिको प्रारम्भ किया है। यहा भगवान्‌की आत्मामें १० प्रकृति नहीं है।

दोहा—फिर अपूर्व थानक चढ़े, शुक्लध्यान गहलीन। मोह-शक्ति विध्वंशके, भाव अपूरव कीन।

ॐ ह्रीं अपूर्वगुणस्थानारूढ श्रीजिनाय अर्घं। यहा समझाया जाय कि प्रभु क्षपकश्रेणीमें चढ़े, आठवें गुणस्थानमें जाकर मोहकी २१ प्रकृतियोंके बलको निर्बल कर रहे है। (४ अनन्तानुबन्धी सिवाय)—

दोहा—**थानक अनिवृत्ती चढ़े, शुद्ध भाव असि धार। त्रिंशत् छः कर्मन प्रकृति, कीना प्रभु संहार॥**
नरकगति तिर्यंच गति, और आनुपूर्वीय। इक बे ते चहुं जातिको, उद्योता तप लीय॥
थावर सूक्ष्म साधारणे, खोटी निद्रा तीन। विंशति प्रकृति कषायकी, लोभ बिना क्षय लीन॥

ॐ ह्रीं अनिवृत्तिगुणस्थानारूढषट्त्रिंशत्प्रकृतिविदारणाय श्रीजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

यहा प्रकट किया जाय कि प्रभुने शुक्लध्यानकी अग्निसे ३६ कर्मोंका क्षय कर डाला।

दोहा—**सूक्ष्म कषाय सुथानमें, चढ़े नाथ अति धीर। लोभ प्रकृति नाशी सकल, मोह हत्यो जगवीर॥**

ॐ ह्रीं सूक्ष्मकषायगुणस्थानारूढलोभप्रकृतिविदारणाय श्रीजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

यहा सूचना हो कि १० वें में लोभका नाश किया।

दोहा—**बारम क्षीण कषाय गुण, चढ़े प्रभू बलवान। द्वितीय शुक्ल ध्यावत भये, एक भाव अमलान॥**

ॐ ह्रीं क्षीणकषायगुणस्थानारूढएकत्ववितर्कवीचार शुक्लध्यानधारकाय श्रीजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(२) तिलकदान विधि—फिर आचार्य खड़े हो बहुत विनयसे चारित्रभक्ति पढ़े और नीचे लिखे मंत्र पढ़े। इसवमय लग्न शुभ हो।

ॐ हां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः असि आ उ सा एहि संवौषट्। ॐ हां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः असि आ उ सा अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ॐ हां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः असि आ उ सा अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। फिर नीचे लिखे मंत्रका १०८ दफे जाप करे।

ॐ ह्रीं श्री अर्हं असि आ उ सा अप्रतिहत शक्तिर्भवतु ह्रीं स्वाहा। यह जाप करके फिर सुगंधित केशरसे प्रतिमाके नाभिस्थानमें सोनेकी सलाईसे ह्रीं ऐसा लिखे-(४) अधिवासना विधि-फिर जल चन्दनादि चढ़ावे—

सुगन्धिशीतलैः स्वच्छैः साधुभिर्विमलैर्जलैः, अनन्तज्ञानदृग्वीर्यं सुखरूपं जिनं यजे।

ॐ ह्रीं श्री नमः परमेष्ठिभ्यः स्वाहा जलं।

काश्मीरचन्दनरसेन विलुब्धशुम्भत्सौम्यमत्तमधुपावलिझंकृतेन।
पीठस्थलीं जिनपतेरधिपादपद्मं, संचर्चयामि मुनिभिः परितः पवित्राः॥ ८५२॥

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु चन्दनं गृहाण गृहाण स्वाहा। चन्दन चढ़ावे।

मुक्ताफलच्छविपराजितकामकांतिप्रोद्भूतमोहतिमिरैकफलौघहेतु।
शाल्यक्षतार्थंपरिपूर्णपवित्रपात्रमुत्तारयामि भवतो जिनपस्य पार्श्वे॥ ८५३॥

ॐ

सौरभ्यमांद्रमकरंदमनोऽभिरामपुष्पैः सुवर्णहरिचन्दनपारिजातैः ।
श्रीमोक्षमानिवनितापरिलम्भनाय, माल्यादिभिश्चरणधोरणिमुत्सृजामि ॥ ८५४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु पुष्पाणि गृहाण गृहाण स्वाहा । पुष्पं ।

षष्ठोपवासविषये नवसर्पिषाक्तनैवेद्यभाजनमिदं परिवर्त्य सम ।
वारं तदीयपरिहृत्यभिधाप्रसिद्धयै संस्थापये जिनवराग्रिमभूनघाऽग्यां ॥ ८५६ ॥

ॐ ह्रीं अर्हते सर्वशरीरावस्थिताय पृथु पृथु नैवेद्य गृहाण गृहाण स्वाहा ।

स्फूर्जन्मयूखविततिप्रहतांधकारं, दीपं घृतादिमणिरत्नविशालशोभं ।
उद्भिन्नशुक्लयुगलांतिमभागभाजो, देहद्यतिं द्विगुणकोटियुतां करोमि ॥ ८५७ ॥

ॐ ह्रीं प्रज्वल प्रज्वल अमि-तेजसे दीप गृहाण गृहाण स्वाहा ।

कर्पूरचन्दनपरागसुरम्यधूपक्षेपोऽस्तु मे सकलकर्महतिप्रधानः ।
इत्येषभावमभिधाय हसंतिकायामुत्क्षेपयामि किल धूपसमूहमेनं ॥८५८॥

ॐ ह्रीं सर्वतो दह दह तेजोऽधिपतये समूहभूताय धूप गृहाण गृहाण स्वाहा ।

कर्माष्टकापहरणं फलमस्ति मुख्यं, तत्प्राप्तिसन्मुखतया स्थितवानसि त्वं ।
यस्मादनेकगुणलास्यकलानिधानधाम्नस्तवस्थलमदभ्रफलैर्यजामि ॥ ८५९ ॥

ॐ ह्रीं आश्रितजनायाभिमतफलानि ददातु ददातु स्वाहा ।

त्रैलोक्याभपदं त्रिकालपतिताशेषार्थपर्यायजानन्तानन्तविकल्पनस्फुटकरं संसारचक्रोत्तरं ।
ज्योतिः केवलनामचक्रमवतो ध्यानावतानप्रभोर्योऽयं तुर्यविशंशनक्षणमहः कोप्येष जीयात्पुनः ॥८६०

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते द्वितीयशुक्लध्यानोपार्त्यसमयप्राप्ताय अर्घं ।

यस्याश्रयेण सकलाघतृणौघदाहशक्तित्वमाप चरितं चरितं जनेन ।
तच्चारूपञ्चतयरूपमपास्य चारमन्त्यं यथाख्यमगमत्परिपूर्णतांगं ॥ ८६१ ॥

ॐ ह्रीं यथाख्यातचारित्रधारकाय जिनाय अर्घं यहांतक अधिवासना विधि हुई—

(५) श्री मुखोद्घाटन क्रिया—

नूनं निरावृतिचमत्कृतिकारि तेजो, नो लोकमीक्षितमपारमपि प्रभुत्वात् ।
इत्येवमर्पितनयाननयेन शंभोरग्रे मुखाग्रपटमद्य मुपाकरोमि ॥ ८५९ ॥

ॐ ह्रीं अर्हते सर्व शरीरावस्थिताय समदन फलं सम धान्ययुत मुख वस्त्र ददामि स्वाहा ।

इतना कहे तब परदा पड जावे–सूचक कहे कि भगवान्को केवलज्ञान होनेवाला है । जबतक परदा न उठे आप सब मनमें णमोकार मत्रका जाप करे व सिद्ध परमात्माका ध्यान करे । आचार्य परदेके भीतर होजाय कोई तरफ दिखाव न हो । इस समय यदि कोई मुनि महाराज हों या ऐलक या क्षुल्लक या चारित्रवान् प्रतिमाधारी ब्रह्मचारी हों तो उनको आचार्य भीतर ले ले । यदि न हों तो कोई हर्ज नहीं है । एक शुद्ध वस्त्रमें सात प्रकार अनाज बांधकर मुखपर ढककर लपेट दे । तथा आगे जौकी माला रख दे ।

फिर आचार्य नग्न होजावे व ऐलकादि भी नग्न होजावे । ॐ नमः सिद्धेभ्यः ऐसा मत्र पढ़ें । आचार्य इस मंत्रको पढ़ते हुए चारोंतरफ जलधारा दे सिद्धचक्र यंत्रको पास रखकर नीचे लिखी स्तुति पढे, हाथ दोनों जोड खड़े रहे ।

स्वस्ति श्रीऋषभो देवोऽजितः स्वस्त्यस्तु संभवः । अभिनंदननामा च स्वस्ति श्रीसुमति प्रभुः ॥ ८६१ ॥
पद्मप्रभः स्वस्ति देवः सुपार्श्वः स्वस्ति जायतां । चंद्रप्रभः स्वस्ति नोऽस्तु पुष्पदंतश्च शीतलः ॥ ८६२ ॥
श्रेयान् स्वस्ति वासुपूज्यो विमलः स्वस्त्यनंतजित् । धर्मो जिनः सदा स्वस्ति शांति कुंथुश्च स्वस्त्यरः ८६३॥
मल्लिनाथः स्वस्ति मुनिसुव्रतः स्वस्ति वै नमिः । नेमिर्जिनः स्वस्ति पार्श्वो वीरः स्वस्ति जायतां ।८६४॥
भूतभाविजिनाः सर्वे स्वस्ति श्रीसिद्धनायकाः । आचार्य स्वस्त्युपाध्यायः साधवः स्वस्ति संतु नः ॥८६५॥

यह पढ़कर पुष्पांजलि देवे । फिर नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़कर मुखके ऊपरसे कपडेको हटाले ।

अथारुणालं प्रांतोद्यधरणिधृन्मूर्द्धनि प्रकाशोल्लासाभ्या युगपदुपयुंजं त्रिभुवनं ।
दधज्ज्योतिः स्वायंभवमपगतावृत्यपपथो मुखोद्घाटं लक्ष्म्यां व्रजतु भवनीं दूरमुदयेत् ॥८६६॥

ॐ उसहादिवड्ढमाणाण पंचमहाकल्लाणसंपण्णाण महइमहावीरवड्ढमाणसामीणं सिज्जउ मे महइमहाविज्जा अट्ठमहापाडिहेरसहियाणं सयलकलाधराणं सज्जाजादरूवाणं चउतीसातिसयविसेससंजुत्ताणं बत्तीसदेवींदमणिमत्थयमहियाण सयललोयस्स संतिपुट्ठि कल्लाणारोग्गकराणं बलदेववासुदेवचक्कहररिसिमुणिजदिअणगारोवगूढाण उहयलोयसुहफलयराण थुइसयसहस्सणिलयाण परापरपरमप्पाणं अणाइणिहणाणं बलिबाहुबलिप्पदाण वीरे वीरे ॐ हां क्षां सेणवीरे वड्ढमाणवीरे णहसंजयंतवराइए वज्जसिलथंभगयाण सस्सदबंभपइट्ठियाणं उसहाइवीरमंगलमहापुरिसाणं णिच्चकालपइट्ठियाणं इत्थसंणिहिया मे भवतु मे भवतु ठः ठः क्ष क्ष स्वाहा । यह श्री मुखोद्घाटन क्रिया हुई—

(६) नयनोन्मीलन क्रिया—फिर रकाबीमें कपूर जलाकर सुवर्णकी सलाईको रक्खे और दाहने हाथमें लेकर सोहं मंत्रको ध्याता हुआ तथा १०८ दफे 'ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं नमः" पढ़े। फिर नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़कर नेत्रमें सलाई फेरे—

येनाबद्धनिरूढकर्मविकृतिपालंबिका निघृणं, छिन्नात्मानमजं स्वयमसुखमपूर्वीयं स्वयं प्राप्तवान्।
सोऽयं मोक्षरमाकटाक्षसरणिप्रेमास्पदः श्रीजिनः, साक्षादत्र निरूपितः स खलु मां पायादपायात्सदा॥८४७।

ॐ णमो अरहंताणं णाणदंसणचक्खुमयाणं अमियरसायणविमलतेयाणं संति तुट्ठि पुट्ठि वरदसम्मादिट्ठीणं व झ अमिय वरसीण स्वाहा। यह मंत्र जयसेन कृत पाठमें है। नेमचन्द कृत पाठमें यह मंत्र है—"ॐ ह्रीं अर्हं नमो अरहंताणं असि आ उ सा श्रीं ॐ ह्रीं हं" त्रिकाल त्रिलोकपूजित सर्वज्ञथित रक्त नील काचन कृष्ण नेत्रोन्मीलनानतज्ञान अनंतदर्शन, अनंतवीर्य, अनंतसुखात्मकाय नयनोन्मीलनं विदधामि स्वौषट्। फिर आचार्य और मुनि आदि जो हों सो मिलकर सूरिमंत्र पढ़े—

ॐ ह्रीं णमोअरहंताणं णमोसिद्धाणं णमोआइरीयाणं णमोउवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं, चत्तारि मंगलं—अरहंत मंगलं, सिद्ध मंगल, साहूमंगल, केवलिपण्णत्तोधम्मोमंगलं। चत्तारिलोकोत्तमा—अरहंतलोकोत्तमा सिद्धलोकोत्तमा साहूलोकोत्तमा, केवलिपण्णतो धम्मोलोकोत्तमा। चत्तारिसरणं पव्वज्जामि अरहंतसरणं पव्वज्जामि सिद्धसरणं पव्वज्जामि साहूसरणं पव्वज्जामि केवलिपण्णत्तो धम्मंसरणं पव्वज्जामि। क्रौं ह्रीं स्वाहा। दोनों कानोंमें पढ़कर पुष्प प्रतिमापर क्षेपे तथा सर्वज्ञपना प्रगट करे।

नोट—सूरिमंत्रके देनेका वर्णन मात्र जयसेन पाठमें है, आशाधर व नेमचन्द कृतमें नहीं है। हमने सूरिमंत्र क्या है ऐसा प्रश्न दो उदासीन प्रतिष्ठा करानेवालोंसे पूछा परन्तु उन्होंने भी बताया नहीं। जयसेन पृ० १३६ में "अथ सूरिमंत्र" ऐसा लिखके आगे जो मंत्र लिखा था सो हमने नकल कर दिया है। यदि और कोई मंत्र हो तो प्राचीन प्रतिष्ठा करानेवाले उसे ही पढ़े व इस पुस्तकमें सुधार देवें। किसी बातको छिपाके रखना उचित नहीं है। फिर नीचेकी गाथा पढ़कर यवकी मालाको हटाले—

ॐ सत्तक्खरगब्भाणं अरहंताणं णमोत्थि भावेण। जो कुणइ अणण्णमणो सो गच्छइ उत्तमं ठाणं॥

फिर नीचेका श्लोक पढ़ अर्घ देवे।

शुक्लद्वयेन परिहृत्य तपोधितानमात्मानमाशु परिकल्प्य कृतावकाशं।
ज्ञानावलोकनसमत्यघनाशमापन्मोहस्य पूर्वदलनेन समस्तभावात्॥ ८४८॥

ॐ ह्रीं मोहनीय ज्ञानदर्शनावरणान्तराय निर्नाशकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

फिर नीचेकी गाथा पढ़कर पुष्प प्रतिमापर डाले—

ॐ केवलणाणदिवायरकिरणकलावप्पणासियण्णाणो णवकेवललद्धुग्गमसुजणियपरमप्पववएसो।
असहायणाणदंसणसहिओ इदिकेवली होदि। जोयेण जुत्तो त्ति स जोगिजिणो अणाहिणिहणारिसे वुत्तो॥

इत्येषोऽर्हन् साक्षादवतीर्णो विश्वं पातु इति स्वाहा।

तब बाहर बाजे बजने लगे। आचार्य भगवानके आगे बहुतसा कपूर जलता हुआ रक्खे और परदा उठे तब सब जय जय कहैं। तब आचार्य व सूचक कहैं कि भगवान्‌को केवलज्ञानकी प्राप्ति होगई है। आचार्य परदा खोलनेके पहले वस्त्र पहन ले। फिर आचार्य बहुत विनयसे नमस्कार करे और नीचे लिखी स्तुति पढ़े। स्तुतिके पीछे नमन करके यह सूचित करे कि भगवानने दूसरे शुक्लध्यानसे १६ प्रकृतियोंका नाश किया। ज्ञानावरणीय ५, दर्शनावरणीय ६, अन्तराय ५,—४७ पहले नाशीं थीं इस तरह ६३ प्रकृतियोंको नाशकर या चार घातिया कर्म नाशकर भगवान्‌ने केवलज्ञान प्राप्त किया है।

स्तुति।

पद्धरी छन्द—जय केवलज्ञान प्रकाश धरं। ज्ञान वरणाय विनाश करं॥
जय केवल दर्शन नायक हो। दर्शन आवरणी घायक हो॥ १॥
जय वीर्य अनन्त प्रकाशक हो जय अन्तराय अघ नाशक हो॥
तुम मोह बली क्षय कारक हो। क्षायिक समकितके धारक हो॥ २॥
क्षायिक चारित्र विशाल धरं। आनन्द अनन्त प्रकाश धरं॥
जग मांहि अपूरव सूरज हो। विकसन भवि जीवन नीरज हो॥ ३॥
मिथ्यात्व महा तम टालन हो। शिव मग उत्तम दरशावन हो॥
तुम तारण तरण तरंड वरं। सुखकारण रत्नकरण्ड वरं॥ ४॥

५ मिनट तक भगवानका दर्शन सब आने २ यहां बैठे हुए कर चुकें कि परदा गिर जावे। परदेके बाहर इन्द्र आता है, उसीके साथ कुबेरदेव भी आता है। इन्द्र सभाकी तरफ संकेत करके कहता है—

कुबेर! अभी ही तीर्थनायक श्री ऋषभदेवको केवलज्ञानका प्रकाश हुआ है। तीर्थप्रचार करनेका अवसर उपस्थित हुआ है। तुम शीघ्र समवसरणकी रचना तैयार करो, हम सब इन्द्रादि देव आते हैं। प्रभुकी भक्तिकर व उत्तम धर्मामृत पीकर तृप्तिता पांयगे और अपने भवभवके पापोंका संहार करेंगे। कुबेर नमन कर कहता है—"जो आज्ञा।"—पहले कुबेर जाता है फिर इन्द्र भी जाते हैं।

(८) **समवशरण रचना व पूजा**—परदेके भीतर समवशरणकी रचना तैयार की जाती है। वनकी रचना तुर्त हटानी चाहिये। गंधकुटी विराजमान करके तीन छत्र हों, दोनों तरफ दो इन्द्र चमर ढारते हों, सिंहासन हो, भामंडल हो, आगे आठ मंगलद्रव्य हों। गंधकुटीके आगे २४ कोठोंका मांडला एक छोटी चौकीपर रचा हुआ सुन्दर रक्खा जाय, आगे पूजा करनेका सामान हो, आगे चढ़ानेके लिये कुछ रक्खा जाय। इसतरह रचना बन जावे। वृक्ष जो पहले था वह गंधकुटीके पीछे रहने दिया जावे। यदि समवशरणके नकशेका

परदा हो तो एक तरफ टांग दिया जावे। यदि तीन कटनीदार चबूतरा हो व उसपर गंधकुटी रहे तो और भी ठीक है। पहली कटनीपर आठ मंगलद्रव्य हों व धर्मचक्र हों. दूसरी कटनीपर ध्वजाएं हों क्योंकि भगवान अन्तरीक्ष विराजते हैं इसलिये स्फटिक कमलाकार व शीशेका कमलाकार सिंहासन हो तो और भी शोभा हो। इस तरह रचना होनेपर परदा उठे। उस समय "श्री वृषभदेवके समवशरणकी जय" ऐसे शब्द चारों ओरसे होवें।

इतनेहीमें सौधर्म इन्द्र व अन्य इन्द्रदेवोंके साथ व इन्द्राणी कुछ अन्य देवियोंके साथ बाजा बजाते हुए जय जय शब्द कहते हुए मंडपमें पधारे व पुष्पांजलि देकर नमस्कार करे। एक ओर इन्द्र तथा आचार्य पूजा करे, इधर उधर इन्द्राणी पूजा करे। इधर उधर सामान पूजाका रक्खा हो। सब बैठे हों। तब नीचे प्रमाण अर्घ चढ़ावें—

सत्तामात्रग्राहकं दर्शनं च, तद्भेदानां ग्राहकं ज्ञानमुक्तं।
ताभ्यां स्वास्थ्यं पूर्णमुक्तं सुखं तच्छक्तेर्व्यक्तिर्वीर्यमत्रार्चयामि ॥ ८६९ ॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते भगवतेऽनंतज्ञानदर्शनसुखवीर्यविभ्राजते जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

यहां आचार्य या सूचकपात्र चार चतुष्टयको १ मिनटके भीतर समझादे।

सम्यक्त्वं चरितं सुबोधनदृशी वीर्यं तदिल्लाभको,
भोगोपादिभुजी हि यस्य नवकं लब्धैः सदा क्षायिक।
सम्पन्नं खलु केवलोद्गमनतस्तं सांप्रतं ध्यायतो,
विघ्नानां निचयः प्रणाशनमियात्तत्संस्मृतिप्रार्थनात् ॥ ८७० ॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते भगवते नवकेवललब्धिभ्यो अर्घं। यहां नव केवल लब्धियोंको समझा दिया जावे। (क्षायिकसम्यक्त, क्षायिकचारित्र, अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तवीर्य, अनन्तदान, अनन्तलाभ अनन्तभोग, अनन्तउपभोग।)

सौभिक्ष्य मुकुरोपमक्षितिरथा व्योमक्रमप्रक्रमः, प्राण्याघातविनिर्गमश्च कवलाहारव्यपायः परैः।
अक्लेशोपचयश्चतुर्मुखदृशिर्विद्येश्वरत्व ततो-रच्छायत्वमकेशवृद्धिरिति वै दिक्संख्यको: केवले ॥ ८७१॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते भगवते दशकेवलातिशयेभ्य ऽर्घम्। (यहां १० अतिशय समझा दी जावे।) १ सुभिक्षपना, २ दर्पण समान पृथ्वी, ३ आकाशकी निर्मलता, ४ प्राणिवधका अभाव ५ कवलाहारका अभाव, ६ उपसर्गका अभाव, ७ चार मुख दीखना, ८ सर्व विद्या ईश्वरपना, ९ शरीरकी छाया न पडना, १० नखकेश न बढ़ना।

दिव्या वाग् जनसौहृदं प्रतिपदं सर्वाह्वगोत्रारुहा, भूरादर्शतला मृदुस्वसनसन्मोदौ तु भूः शालिनी।
सौरभ्यांबुधरी सुवृष्टिरमला पादक्रमाधोतले, स्वच्छांभोरुहनिर्मितिः खममलं दिग्संमदश्चक्रकं ॥ ८७२ ॥
धर्माख्यां पुरतश्च मज्जनमनोमिथ्यात्वसंस्फेटनं, देवाह्वानपरस्परादिकमुदा सन्मंगलाष्टाविति ।
दिव्यातीशयसंयुतो जिनपतिः शक्राज्ञया रैधुचा, क्लृप्ते श्रीसमवादिसंस्तुतिपदे प्रतिष्ठवांस्तान्मुदे ॥८७३॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते भगवते चतुर्दशदेवकृतातिशयसम्पन्नाय जिनाय अर्घं। (यहां १४ देवकृत अतिशय बताई जावें।) १ अर्द्धमागधी दिव्यध्वनि, २ मैत्रीभाव प्रचार, ३ सर्वऋतुके फल फूल, ४ कटकरहित भूमि, ५ मंद सुगंध पवन, ६ सर्वधान्यमई क्षेत्र, ७ गन्धोदक वर्षा, ८ विहार समय सुवर्ण कमल रचना, ९ निर्मल आकाश, १० देवकृत परस्पर बुलाना, ११ धर्मचक्र, १२ आठ मंगल द्रव्य, १३ प्राणियोंमें मिथ्या भावका अभाव, १४ दिशाओंमें आनन्द)।

(नोट—अन्य ग्रन्थमें ऊपरके १० अतिशयोंमें पलके न लगना है, दर्पण समान पृथ्वी नहीं है)।

मानस्तम्भसरः प्रपुष्पविपिनं सत्खातिका चाभितः, प्राकारादिसुनाट्यभूमिविपिने नाकालयक्ष्मारुहाः।
स्तूपा हर्म्यतलिध्वजावलिसभे सद्गंधवेदिक्रमोऽ-शोकोर्वीरुहसिंहपादलसत्स्थायी जिनःपातु नः ॥८७४॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते भगवते समवशरणविभूतिसंपन्नाय जिनाय अर्घं। (यहां समवशरणका कुछ भाव बता दिया जावे)—

वनस्पतित्वेऽपि गतप्रशोको, बभूवातिमदप्रसून:।
अनेकसंदर्शकशोकहारी, वृक्षो जिनेन्द्राश्रयणप्रभावात ॥ ८७५ ॥

ॐ ह्रीं अशोकप्रातिहार्यसम्पन्नाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगस्तकः फलति नोऽमरसौख्यमुच्चैर्हर्षोत्सुकत्वपरिलंसनसन्निभेण ।
दैवैः कृता सुमनसां परिवृष्टिरेषां, मोदं ददातु भवदुःखजुषां जनानां ॥ ८७६ ॥

ॐ ह्रीं देवकृतपुष्पवृष्टिप्रातिहार्यसंपन्नाय जिनाय अर्घं। (यहा पुष्पोंकी वर्षा की जावे)—

त्रैलोक्यवस्तुमनतस्मरणावबोधो, येन स्वयं श्रवणगोचरतां गतेन ।
संजायते मुखरदोष्टविघातशून्यो, भूयाद् ध्वनिर्भवगदप्रसरातिहर्त्ता ॥ ८७७ ॥

ॐ ह्रीं दिव्यध्वनिप्रातिहार्यसम्पन्नाय जिनाय अर्घं।

यक्षेशपाणिलतिकांकुरसंगतानि, तुर्याधिषष्टिगणनान्यपि देवनद्याः।
वीचिभ्रमाणि भवतो द्विकपार्श्वयोस्ते, सचामराण्यघचयं मम निर्दलंतु ॥ ८७८ ॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्टिचामरप्रातिहार्यमण्डिताय जिनाय अर्घं।

सिंहासने छविरियं जिनदेवताया:, केषां मनोवधूनपापहरी न वा स्यात्।
स्याद्वादसंस्कृतपदार्थगुणप्रकाशोऽस्या मेस्तु निर्हलमहाविलजातशक्तेः ॥ ८७९ ॥

ॐ ह्रीं सिंहासनप्रातिहार्यमण्डिताय जिनाय अर्घं।

भामण्डलेऽथयवपृष्ठिभिभागरश्मिकल्पसे जनस्य भवसप्तकदर्शनेन।
श्रद्धानमाप्तगुरुधर्मपरम्पराणां. गाढं भवेत्तदितदेवपतिर्नमस्यः ॥ ८८० ॥

ॐ ह्रीं भामण्डलप्रातिहार्यमण्डिताय जिनाय अर्घं

देवस्य मोहविजयं परिशंसितु द्राक्, देवाः स्वहस्ततलतः परिवादयंति।
वाद्यानि मंगलनिनादकराणि यस्यो, मिथ्यात्वमोहजयिनः शुभगानि च स्युः ॥ ८८१ ॥

ॐ ह्रीं दुंदुभिप्रातिहार्यमण्डिताय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छत्रत्रयं जिनपमूर्धनि भास्वमानं, त्रैलोक्यराजपतितामभिदर्शयद् वा।
सोमार्कवह्निप्रतिमं सितपीतरक्तत्वादिरंजितमिदं मम मंगलाय ॥ ८८२ ॥

ॐ ह्रीं छत्रत्रयप्रातिहार्यमण्डिताय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

तालातपत्रचमरध्वजसुप्रतीकभृंगारदर्पणघटाः प्रतिवीथिचारं।
सन्मंगलानि पुरतो विलसंति यस्य, पादारविंदयुगलं शिरसा वहामि ॥ ८८३ ॥

ॐ ह्रीं अष्टमंगलद्रव्यसम्पन्नाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

बुद्धीशामरनारिकार्यमहतां ज्योतिष्कदृव्यंतरनागस्त्री भवनेशकिंपुरुषसज्ज्योतिष्ककल्पामराः।
मर्त्या वा पशवश्च यस्य हि सभा आदित्यसंख्या वृषपीयूषं स्वमतानुरूपमखिलं स्वादंति तस्मै नमः॥८८४॥

ॐ ह्रीं द्वादशसभासम्मिलिताय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(यहां १२ सभा में कौन २ बठते हैं सो क्रमवार दे—१ मुनि, २ आर्यिका व श्राविका, ३ कल्पवासी देवी, ४ ज्योतिषी देवी, ५ व्यंतरदेवी, ६ भवनवासी देवी, ७ भवनवासी देव, ८ व्यंतरदेव, ९ ज्योतिषी देव, १० कल्पवासी देव, ११ मनुष्य, १२ पशु)।

आगे २४ कोठोंके मंडलकी पूजा की जाय।

गीताछंद—चौवीस जिनवर तीर्थंकारी, ज्ञान कल्याण धरं। महिमा अपार प्रकाश जगमें, मोह मिथ्या तम हरं॥
कीने बहुत भविजीव सुखिया, दुःखसागर उद्धरं। तिनकी चरण पूजा करें, तिन सम बने यह रुचि धरं॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो पुष्पांजलिं क्षिपेत्। (पुष्प डाले)

छंद चामर—नीर ल्याय शीतलं महान मिष्टता धरे, गन्ध शुद्ध मेलिके पवित्र झारिका भरे।
नाथ चौविसों महान वर्तमान कालके, बोध उत्पन्न करूं प्रमाद सर्व टालके॥

ॐ ह्रीं रिषभादि महावीरपर्यंत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्वेत चन्दन सुगन्धयुक्त सार लायके, पात्रमें धराय शांतिकारणे चढ़ायके॥ नाथ०॥ चन्दनं॥
तन्दुलं भले सुश्वेत वर्ण धोय लाइये, पाय गुण सु अक्षतं अतृप्तिता नशाइये॥ नाथ०॥ अक्षतं॥
वर्ण वर्ण पुष्प सार लाइये चुनायके, काम कष्ट नाश हेतु पूजिये स्वभावके॥ नाथ०॥ पुष्प॥
क्षीर मोदकादि शुद्ध तुर्त ही बनाइये, भूखरोग नाश हेतु चर्णमें चढ़ाइये॥ नाथ०॥ नैवेद्यं॥
दीप धार रत्नमय प्रकाशना महान है, मोह अंधकार हार होत स्वच्छ ज्ञान है॥ नाथ०॥ दीपं॥
धूप गन्ध सार लाय धूपदान खेइये, कर्म आठको जलाय आप आप वेइये॥ नाथ०॥ धूपं॥
लौंग औ बदाम आम्र आदि पक्क फल लिये, सु मुक्तिधाम पायके स्वआत्म अमृत पिये॥ नाथ०॥ फलं॥
तोय गंध अक्षतं सु पुष्प चारु चरु धरे, दीप धूप फल मिलाय अर्घ देय सुख करे॥ नाथ०॥ अर्घं॥

छंद चाली—एकादशि फागुन वदिकी, मरुदेवी माता जिनकी।
हत घाती केवल पायो, पूजत हम चित उमगायो॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णा एकादश्यां श्रीवृषभनाथ जिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१)

एकादशि पूष सुदीको, अजितेश हतो घातीको। निर्मल निज ज्ञान उपाये, हम पूजत सम सुख पाए॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्ला एकादश्यां श्री अजितनाथाय जिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२)

कातिक वदि चौथ सुहाई, सम्भव केवल निधि पाई। भविजीवन बोध दियो है, मिथ्यामत नाश कियो है॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णाचतुर्थ्यां श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (३)

चौदशि शुभ पौष सुदीको, अभिनन्दन हन घातीको। केवल या धर्म प्रचारा, पूजूं चरणा हितकारा॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्ला चतुर्दश्यां श्री अभिनंदननाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (४)

एकादशि चैत सुदीको, जिन सुमति ज्ञान लब्धीको। पाकर भविजीव उधारे, हम पूजत भव हरतारे॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ला एकादश्यां श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (५)

मधु शुक्ला पूरणमासी, पद्मप्रभु तत्त्व अभ्यासी। केवल ले तत्त्व प्रकाशा, हम पूजत सम सुख भाशा॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ला पूर्णमास्यां श्रीपद्मप्रभुजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (६)

छठि फागुनकी अंधयारी, चउ घातीकर्म निवारी। निर्मल निज ज्ञान उपाया, धन धन सुपार्श्व जिनराया॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णा षष्ठ्यां श्री सुपार्श्वजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (७)

फागुन वदि नौमि सुहाई, चन्द्रप्रभ आतम ध्याई। हन घाती केवल पाया, हम पूजत सुख उपजाया॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णा नवम्यां श्रीचन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (८)

कातिक सुदि दुतिया जानो, श्री पुष्पदंत भगवानो। रज हर केवल दरशानो, हम पूजत पाप विलानो॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्ला द्वितीयायां श्री पुष्पदंतजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (९)

चौदसि वदि पौष सुहानी, शीतलप्रभु केवलज्ञानी। भवका संताप हटाया, समता सागर प्रगटाया॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णा चतुर्दश्यां श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१०)

वदि माघ अमावसि जानो, श्रेयांस ज्ञान उपजानो। सब जगमें श्रेय कराया, हम पूजत मंगल पाया॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णा अमावास्या श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (११)

शुभ दुतिया माघ सुदीको, पायो केवल लब्धीको। श्री वासुपूज्य अविकारी, हम पूजत अष्ट प्रकारी॥

ॐ ह्रीं माघशुक्ला द्वितीयायां श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१२)

छठि माघ वदी हट घाती, केवल लब्धी सुख लाती। पाई श्री विमल जिनेशा, हम पूजत कटत कलेशा॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णाषष्ठ्यां श्री विमलनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१३)

वदि चैत अमावसि गाई, निजु केवलज्ञान उपाई। पूजूं अनन्त जिन चरणा, जो हैं अशरणके शरणा॥

ॐ ह्रीं चैत्र कृष्णाअमावस्या श्री अनंतनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१४)

मासांत पौष दिन भारी, श्री धर्मनाथ हितकारी। पायो केवल सद्बोधं, हम पूजें छांड़ कुबोधं॥

ॐ ह्रीं पौषपूर्णिमायाम् श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१५)

सुदि पूस इकादशि जानो, श्री शांतिनाथ सुखदानो । लहि निर्मल धर्म उजारा, पूजूं मैं अघ हरतारा ॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लाएकादश्यां श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१६)

वदि चैत्र तृतीया स्वामी, कुन्थुनाथ गुण धामी । निर्मल केवल उपजायो, हम पूजत ज्ञान बढ़ायो ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णातृतीया श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१७)

कार्तिक सुदि बारस जानो, लहि केवलज्ञान प्रमाणो । परतत्त्व निजतत्त्व प्रकाशा, अरनाथ जजों हतआशा ॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्ल द्वादश्या श्री अरनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१८)

वदि पूष द्वितीया जाना, श्री मल्लिनाथ भगवाना । हत घाती केवल पाए, हम पूजत ध्यान लगाए ॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णाद्वितीयां श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानतपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१९)

वैसाख वदि नौमीको, मुनिसुव्रत जिन केवलको । लहि वीर्य अनन्त सम्हारा, पूजूं मैं सुख करतारा ॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णानवम्यां श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय ज्ञान कल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२०)

अगहन सुदि ग्यारस आए, नमिनाथ ध्यान लौ लाए । पाया केवल सुखदाई, हम पूजत चित हरषाई ॥

ॐ ह्रीं अगहनशुक्ला एकादश्या श्री नेमिनाथायजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१)

पडिवा शुभ क्वार सुदीको, श्री नेमनाथ जिनजीको । इच्छो केवल मल ज्ञानं, हम पूजत ही दुख हानं ॥

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाप्रतिपदाया श्री नेमनाथजिनेन्द्राय ज्ञानतपकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२२)

तिथि चैत्र चतुर्थी श्यामा, श्री पार्श्वप्रभू गुण धामा । केवल लहि तत्त्व प्रकाशा, हम पूजत कर शिव आशा ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाचतुर्थ्यां श्री पार्श्वजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३)

दशमी वैशाख सुदीको, श्री वर्द्धमान जिनजीको । उपजो केवल सुखदाई, हम पूजत विघ्न नशाई ॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लादशम्या श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४)

सृग्विणी छन्द—स्तुति—जय ऋषभनाथजी ज्ञानके आगरा, घातिया घातकर आप केवल वरा ।
कर्मबन्धनमई सांकला तोड़कर, आपका स्वाद ले स्वाद पर छोड़कर ॥ १ ॥
धन्य तू धन्य तू धन्य तू नाथजी, सर्व साधू नमें तोहिको नाथजी ।
दर्श तेरा करैं ताप मिट जात है, मर्म भाजें सभी पाप हट जात है ॥ २ ॥

धन्य पुरुषार्थ तेरा महा अद्भुतं, मोहसा शत्रु मारा त्रिघाती हतं ।
जीत त्रैलोकको सर्वदर्शी भए, कर्म सेना हता दुर्ग चेतन लए ॥ ३ ॥
आप सत् तीर्थ त्रय रत्नसे निर्मिता, भव्य लेवें शरण होंय भव भव रिता ।
वे कुशलसे तिरें संसृती सागरा, जाय ऊरध लहें सिद्ध सुन्दर घरा ॥ ४ ॥
यह समवशर्ण भवि जीव सुख पात हैं, वाणि तेरी सुनें मन यही भात हैं ।
नाथ दीजे हमें धर्म अमृत महा, इस बिना सुख नहीं दुःख भवमें सहा ॥ ५ ॥
ना क्षुधा ना तृषा राग ना द्वेष है, खेद चिंता नहीं आर्ति ना क्लेश है ।
लोभ मद क्रोध माया नहीं लेश है, वन्दता हूं तुम्हें तू हि परमेश है ॥ ६ ॥

इन्द्र ऊपरकी स्तुतिको समाप्त ही न कर पाए कि इतनेमें ही सभामें महाराज भरत व अन्य उनके कुछ भाई ऐसे ५–७ राजा अपनी२ स्त्री सहित अर्घ लिये आते हैं और विनय करके छटक चन्दनादि पढ़कर अर्घ चढ़ाते हैं। उस समय स्त्रियां एक तरफ व भरतादि पुरुष एक तरफ खड़े हो स्तुति पढते हैं—

पद्धरी छन्द—जय परम ज्योति ब्रह्मा मुनीशा, जय आदिदेव वृषनाथ ईशा ।
परमेष्ठी परमातम जिनेश, अजरामर अक्षय गुण विशेश ॥ १ ॥
शङ्कर शिवकर हर सर्व मोह, योगी योगीश्वर काम द्रोह ।
हो सूक्ष्म निरञ्जन सिद्ध बुद्ध, कर्मांजन मेटन नोय शुद्ध ॥ २ ॥
भवि कमल प्रकाशन रवि महान, उत्तम वागीश्वर राग हान ।
हो घात द्वेष हो ब्रह्म रूप, सम्यग्दृष्टी गुण राज भूप ॥ ३ ॥
निर्मल सुख इन्द्रिय रहित धार, सर्वज्ञ सर्वदर्शी अपार ।
तुम वीर्य अनन्त धरो जिनेश, तुम गुण पावत नहिं गणेश ॥ ४ ॥
तुम नाम लिये अघ दूर जाय, तुम दर्शनते भव भय नशाय ।
स्वामिन् अब तत्त्वनका प्रभेद, कहिये जासे हठे कर्म छेद ॥ ५ ॥

यह स्तुति पढ़ नमस्कार कर सब यथायोग्य बैठ जाते हैं। जब भरतजी आदि आए थे तब इन्द्र व आचार्य व इन्द्राणी सब यथायोग्य बैठ गए थे ।

(९) भगवानका धर्मोपदेश—अब आचार्य मात्र उठते हैं। वे पूजा करते हैं। सूचक पात्र या अन्य विद्वान् सभाको भगवानका उपदेश संक्षेपमें समझाता जाता है—

ज्ञानाभिन्नः सततचिद्रूपावृत्त एषोऽस्ति जीवोऽनाद्यंतः स्याच्छिवजगदितश्चकर्मायोगयोगात्।
पर्यायार्थैर्नरसुरपशुश्वभ्रभेदादिरर्थयाथातथ्यैर्निसुखचिदानंद एव ह्यसैत्सीत् ॥ ८८५ ॥

ॐ ह्रीं जीवतत्त्वस्वरूपनिरूपकाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

तब सूचकपात्र यह दोहा पढकर अर्घ करदे। पहले यह कहे कि भगवानकी दिव्यध्वनि प्रारम्भ हुई है। भगवान् तत्त्वोंको दर्शाते हैं।

दोहा—जीव अनादि अनन्त है, चेतनमय अविकार। कर्मबन्ध ते जग भ्रमें, कर्म छुटे भव पार ॥

इसीतरह हरएक तत्त्वको दोहा कहकर सूचक समझाता है।

रूपी स्पर्शादिभिरपि गुणः स्वः प्रधानैर्निरुक्तः, स्कंधाणुभ्यामनणुविवृत्तिव्यापृतः पुद्गलः स्यात्।
कर्माकर्मप्रकृतिनिगडैर्विश्वमापन्न हेतुर्बंधस्येति प्रभवति जिनं जल्पयंतं नमामि ॥ ८८६ ॥

ॐ ह्रीं पुद्गलतत्त्वस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—रूपी पुद्गल द्रव्य है, अणु अर खंध स्वरूप। कर्म और नोकर्मसे, बंधे जीव बहु रूप ॥

लोकस्थानां भवति गमने जीवसत्पुद्गलानां, हेतुर्धर्मः सहचारिचिवीक्षास्वमात्रप्रमेयः।
लोकालोकस्थितिविभजनेऽग्राण एवं सु धर्मं, स्वात्मानं संगदति जिनपः सोऽस्तु मे क्लेशहर्ता ॥८८७॥

ॐ ह्रीं धर्मतत्त्वनिरूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—जिय पुद्गलके गमनमें, उदासीन सहकार। लोकालोक विभागकर, धर्म द्रव्य अविकार ॥

वैलक्षण्यं तत उपगतो जीवसत्पुद्गलानां, स्थाता धर्मः सहचरतयौदास्यमात्रेऽपि तेषाम्।
एवं तस्य स्वभवनमसंदिश्यमानो जिनेन्द्रो, आहक्षाणां भवविधिहतिं संकरोत्वात्मनीनां ॥ ८८८ ॥

ॐ ह्रीं अधर्मद्रव्यस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—जिय पुद्गलके थंभनमें, उदासीन सहकार। लोकव्यापि अमूर्त है, द्रव्य अधर्म निहार ॥

जीवाजीवाद्युपधृतितयाऽऽधारभूतो ह्यनंतो, मध्ये तस्य त्रिभुवनमिदं लोकनाम्ना प्रसिद्धं।
सर्वेषां स्याद्वकशनदः शून्यमूर्तिर्महांश्चाकाशोऽनन्तनिजगुणगणं वक्ति तं पूजयामि ॥ ८८९ ॥

ॐ ह्रीं आकाशद्रव्यस्वरूपप्ररूपकाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा–सर्व द्रव्य अवकाश दे, है अनन्त आकाश। मध्य लोक षट् द्रव्य मय, बाहर फक्ताकाश ॥
वस्तूद्भूतागुणपरिणमस्यानुभूतेश्च हेतुः, सत्तार्थानां यदुपगमनादेव जातिं विधत्ते ।
सोऽयं कालो व्यवहरणकार्यानुमेयः क्रियायां, कर्तृत्वादित्यकथयदिनो मुक्तिलक्ष्मीं ददातु ॥ ८९० ॥
ॐ ह्रीं कालद्रव्यस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा–वस्तु परिणमन हेतु है, निश्चय काल प्रमाण। समय घटी दिन रात इति, व्यवहृत काल वखाण ॥
कायस्वांतवचःक्रियापरिणतिर्योगः शुभो, वाऽशुभ-स्तत्कर्मागमनायनं निजयुजो रागद्विषोरुद्भवात् ।
ईर्यामार्गभवौषधद्विविधया तत्संविधिं वेदयन्, जीयाच्चक्रीपतिपूज्यपादकमलस्तीर्थंकरः पुण्यगीः ॥८९१॥
ॐ ह्रीं आश्रवतत्वस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा–काय वचन मन परिणमन, योग शुभाशुभ रूप। कर्माश्रव कारण यही, मोह सहित भव रूप ॥
कषायाद्युतचेतसान्यविषयं स्वत्वं कृतं तद्विधे-र्योग्याः कर्मविभावशक्तिसहिता ये पुद्गलाश्चात्मना ।
संश्लिष्टा अवगानैक्यमटितास्तत्प्रकमो बंधभाक् तं छित्वा निजशुद्धभावविरतिप्राप्तः स मे स्यात् गुरुः ॥८९२
ॐ ह्रीं बंधतत्वस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा–कर्म वर्गणा जीवके, भाव कषाय प्रमाण। एक क्षेत्र अवगाह हो, बंधतत्व यह जान ॥
तद्रोधः खलु संवरो निगदितो द्रव्यार्थभेदाद् द्विधा, तद्धेतुर्व्रतगुप्तिधर्मसमितिप्रक्ष्यां चरित्रात्मता ।
मूलं निर्जरणस्य कर्मचितेर्नूत्नागमस्य स्वयं, तद्रूपं कथितं गणेश्वरपुरोभागे स आप्तो मम ॥ ८९३ ॥
ॐ ह्रीं संवरतत्वस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा–गुप्ति समति व्रत धर्मतें, कर्माश्रव रुक जाय, वीतरागमय भाव जहँ, संवरतत्व सुहाय ॥
स्वोद्भूतानुभवात्तथा कृततपोवीर्येण तच्छातनाद्, द्वेधा निर्जरणं विसंयमियमिस्वाम्याश्रयेणास्ति यत् ।
तद्रूपं समवश्रियां गदितवान् भव्यात्मनां श्रेयसः, संप्राप्त्य स जिनोऽस्तु मे दुरितसंघातस्य सच्छित्तये ॥
ॐ ह्रीं निर्जरातत्वस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा–कर्म अवधिसे निर्जरैं, तप प्रभाव क्षय होय। दुविध निर्जरा अत्यधिक, संयमीनिके होय ॥
मोहस्यात्यंतनाशात् ज्ञपितिदृशिचिदाच्छादकाशेषलोपात्,
प्रत्यूहस्यापि मूलंकषविमशनादात्मशक्तेः प्रकाशात् ।

निःमापत्नं ज्वलंतीं परमशिवसुखास्वादसंवेद्यमाना,
मुक्तिश्रीर्दिव्यतत्त्वं तिवति सकलजनादेयमुक्ते जिनेन्द्रैः ॥ ८९५ ॥

ॐ ह्रीं मोक्षतत्वस्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—मोहादिक सब कर्मसे, रहित मोक्ष सुखरूप । आतमशक्ति पूरण प्रगट, अविनाशी इक रूप ॥

देवोऽर्हन् सकलामयव्यपगतो हृष्टेष्टवाग्देशको, श्रव्यद्वैर्गतरागदोषकलनो मोक्षार्थिभिः श्रेयसे ।
आश्रेयः परिसेवनीय उदितज्ञानप्रबोधः स्वयं, शास्ता सर्वहितः प्रमाणपटुभिर्ध्येयो जिनः पातु नः॥८९६॥

ॐ ह्रीं आप्तस्वरूपप्ररूपकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—वीतराग सर्वज्ञ जिन, हित उपदेशी जान । निर्मल तत्त्व प्रकाश कर, सजो आप्त पहचान ॥

रागद्वेषकलंकपंककणिकाहीनो विसंवादको, निर्वांछो हितदेशनो व्रतगुणग्रामाग्रगण्य प्रभुः ।
आस्माकं भवपद्धतावनुलद्धाबाधितानां महा—नाराध्यः प्रियकारको गुरुरयं प्रोक्तो जिनेन त्वया ॥८९७॥

ॐ ह्रीं गुरुस्वरूपनिरूपक जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—वैरागी निस्पृह व्रती, सर्वपरिग्रह हीन । आतमध्यानी गुरु कहे, हितकर तत्त्व प्रवीण ।

यश्रामूलतनूभवन्यजडतापीडोत्कथाप्रच्युतिर्यश्च श्रेयसि दीपिकेव सरणिः प्राकाश्यमास्कंदते ।
विश्वप्रोतमहार्तिमोहमदिरानिर्भत्सनं सद्गुणाश्लेषा वासिरयं जिनवरैर्गीतो (!) वृषोऽस्तु श्रिये ॥८९८॥

ॐ ह्रीं धर्मस्वरूपप्ररूपकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—रत्नत्रय मय मोहहर, पीड़ा सब निवार । शिवकारण भव उद्धरण, धर्म सत्य अविकार ॥

शब्दाद्वाच्यलवस्त्वनादिकृतसंकेतेन वस्तुग्रहः,
केनापि ध्वनिना भवत्यथ स वै संजायते मातृकृत ।
सोऽपेक्षासहितो ह्यनेकगुणतस्ता एव तस्मात् स्थितं
वस्तु स्यात्पदसंस्कृतं तदुदयन् स्याद्वाद एवार्हतः ॥ ८९९ ॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते भगवते स्याद्वादस्वरूपनिरूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—वस्तु वाच्य अवाच्य है, नित्यानित्य स्वरूप । नय प्रमाण ते साधता, स्याद्वाद सुखरूप ॥

तीर्थेशां भरतेशिनां हलभृतां नारायणानां ततः, शत्रूणां त्रिपुरद्विषां च महतां सद्भाग्यसंशालिनां ।
पुण्यापुण्यचरित्रमत्र निहितं पूर्वानुयोगं विदन्, दृष्टांतप्रतिपत्तिदं जिनपतिः प्रारब्धवान् शासनं ॥९००॥

ॐ ह्रीं प्रथमानुयोगवेदस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—तीर्थंकर चक्रीश हर, प्रतिहर हलधर वृत्त । पुण्य पाप दृष्टांत कह, प्रथमनुयोग पवित्त ॥

संस्थानायामसंख्यागणितमसुभृतां मार्गणास्थानतज्ज-
कर्मोदीर्णोदयादिप्रकथनमधिपो वर्णयामास सम्यक् ।
लोकालोकोक्तभेदे नरकसुरमनुष्यादिसंस्थित्युदंतवृत्ति
त्वारख्यानसैलत्करणगमनुयोगं प्रकाश्य स्वयंभूः (?) ॥९०१॥

ॐ ह्रीं करणानुयोगवेदस्वरूपप्ररूपकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—लोकत्रय रचना सकल, जीव मार्गणा थान । करणानुयोग बखानना, कर्मबंध आख्यान ॥

शीलानां संयमानां व्रतसमितिचरित्रादिसाधर्हिनानां,
सागाराथोंक्तनीयधृतविरमणस्थूलधर्मक्रियाणां ।
तत्तत्स्थानोक्तवृद्धय निजनिजहृदयोद्भूतस्थं निरूप्य,
कर्तव्यत्वोपदेशो यद्विचरणाख्यानमुक्तं जिनेन ॥ ९०२ ॥

ॐ ह्रीं चरणानुयोगवेदस्वरूपप्रकाशक जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—मुनि संयम व्रत आचरण, गृही धर्म आचार । कर्महरणविधि सब कहे, चरणनुयोग विचार ।

षट्द्रव्यसत्त्वरूपाणवथ नयघटना तत्प्रमाणस्वरूपं,
नामस्थापादिकृत्यं तदधिकरणमिसूत्रतथं संस्थापनादि ।
सेनासेवत्वपरथा गत्यधिलसिता यत्र षड्भङ्गवाणी,
द्रव्याख्यानं निरूप्य प्रथममभिहितं मोक्षमार्गं जिनेन ॥ ९०३ ॥

ॐ ह्रीं द्रव्यानुयोगस्वरूपप्रकाशकाय जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा–नय प्रमाण निक्षेपसे, द्रव्य छहोंको साध तत्त्व सप्त शुद्धात्म कथ, द्रव्यानुयोग अबाध ॥

श्रीमत्स्वद्भक्तिभारप्रणिनतशिरसः केचिद्रिच्छंति मुक्तिं,
ते स्वयः साधुदीक्षाप्रणयनपटवस्त्वत्प्रसादावलंबात् ।
केचिद्रुच्छंति धर्मं गृहपतिनिरतं कद्भमार्गावरूढं,
स्वामिन् हस्तावलंबं कुरु शरणगतान् रक्ष रक्षेशनाथ ॥ ९०४ ॥

ॐ ह्रीं मुनिश्रावकधर्मोपदेशकजिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा–तब प्रसाद भवि लहत हैं, मुनि दीक्षा अधिकार । प्रतिमा ग्यारा भवि धरैं, तुम्हीं उतारन पार ॥

इसप्रकार धर्मोपदेश होजाय तब सब कहे–श्री धन्य आज वृषभ जिनेन्द्रकी जय२ । फिर मात्र इन्द्र उठता है और सब बैठ रहते हैं।

स्तुति ।

चौपाई—धन्य धन्य जिनराज प्रमाणा, धर्म वृष्टिकारी भगवाना ।
सत्य मार्ग दरशावन हारे, सरल शुद्ध मग चालन हारे ॥ १ ॥
आपीसे आपी अरहन्ता, पूज्य भार त्रैलोक महन्ता ।
स्वपर भेद विज्ञान बताया, आतम तत्त्व पृथक् दरशाया ॥ २ ॥
स्वानुभूतिमय ध्यान जताया, कर्मकाष्ठ पालन समझाया ।
धर्म अहिंसामय दिखलाया, प्रेम करन हितकरन बताया ॥ ३ ॥
वस्तु अनेक धर्मधरतारा, स्याद्वाद परकाशन हारा ।
मत विषादको मेटनहारा, सत्य वस्तु झलकावन हारा ॥ ४ ॥
धन तीर्थंकर तेरी वाणी, तीर्थ धर्म सुखकारण मानी ।
करहु विहार नाथ बहु देशा, करहु प्रचार तत्त्व उपदेशा ॥ ५ ॥

(१०) भगवानका विहार—इतना कहते ही इन्द्र देवोंको भेजता है कि विहारका प्रबन्ध करो । बाहर सब तय्यारी रहती है, रथ तय्यार रहता है । सब इन्द्र भगवानको मस्तकपर विराजमान करता है । उस समय सर्व खड़े होजाते हैं । आचार्य नीचेके श्लोक पढ़कर भगवानके आगे अर्घ चढ़ाता है ।

काश्यां काश्मीरदेशे कुरुषु च मगधे कौशले कामरूपे,
कच्छे काले कलिंगे जनपदमहिते जांगलांते कुराद्यौ।
किष्किंधे मल्लदेशे सुकृतिजनमनस्तोषदे धर्मवृष्टिं,
कुर्वन् शास्ता जिनेन्द्रो विहरति नियतं तं यजेऽहं त्रिकाल ॥ १०७ ॥
पांचाले केरले वाऽमृतपदमिहिरोमन्द्रचेदीदशार्ण-
वंगांगांघोलिकोशीनरमलयविदर्भेषु गौडे सुसह्ये।
शीतांशुरश्मिजालादमृतमिव समं धर्मपीयूषधारां,
सिंचन् योगाभिरामा परिणमयति च स्वांतशुद्धिं जनानां ॥ १०८ ॥
पुनाटचौलविषयेऽपि च मौड्रदेशे सौराष्ट्रमध्यमकलिंदकिरातकादौ।
सुयोग्ये सुदेशमहिते सुविहृत्य धर्मचक्रेण मोहविजयं कृतवान् जनानां ॥ १०९ ॥

दोहा—काशी कुरु काश्मीरमें, मगध सुकोशल काम। कच्छ कलिंग रकालमें, कुरुजांगल शुभ धाम ॥
किष्किंधा पांचालमें, मलय सुकेरल मन्द्र। चेदि दशार्ण सुवंगमें, अंग उलिक शुचि अन्ध्र ॥
गौड़ विदर्भ उसीनरे, सह्य चौल पुंनाट। मौंड्र सौराष्ट्र किरातमें, मध्य कलिंद विराट् ॥
इत्यादिक बहु देशमें, धर्मदेशनाकार। वंदहु पूजहुं प्रेमसे, करहु कर्म निरधार ॥
ॐ ह्रीं नमोऽर्हते भगवते विहारावस्थाप्राप्ताय देशे धर्मोपदेशेनोद्धर्त्रे जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

फिर बाजे बजने लगें, जयजयकार शब्द हो। भगवानपर पुष्पोंकी वर्षा हो। इन्द्र श्री जिनेन्द्रको लेजाकर रथपर विराजमान करें, सौधर्म इन्द्र खवासीपर बैठे, ईशान इन्द्र रथ चलावे, सानत्कुमार महेन्द्र दोनों तरफ चमर ढारें। रथपर चार भाइयोंके सिवाय और कोई न हो। रास्तेमें जय जय होते हुए नंगे पैर भक्तिमें भीजे सब चलें, कमसे कम चार जगह आने जानेके मार्गमें शामियाना हो वहां शांतिसे सब श्रोता बैठ जावें, भगवान्‌का रथ आगे खड़ा हो। पहले एक भजन बाजेके साथमें ५ मिनिटमें होजावे फिर उपदेश हो। चार स्थानमें भिन्न २ विषयपर अच्छे विद्वान् भिन्न २ उपदेश करें। २० मिनिटमें भाषण सारगर्भित कहा जाय—यह बताया जाय कि श्री जिनेन्द्र विहार करते हुए उपदेश कर रहे हैं। नीचे लिखे विषयमेंसे लिये जावें—

(१) निश्चय व्यवहार धर्म, (२) सप्त तत्त्व, (३) चार वेद प्रथमानुयोगादि, (४) मुनिधर्म, (५) श्रावकधर्म, (६) कर्मबंध, (७) आत्मस्वरूप, (८) स्याद्वादका महत्व, (९) आत्मानंदका उपाय, (१०) मोक्षस्वरूप, (११) एकांत खंडन, अनेकांत मंडन, (१२) अहिंसा धर्म, (१३) दशलक्षणधर्म, (१४) आत्मध्यान, (१५) बारह भावना, (१६) जगत अनादि, जैनधर्म अनादि।

शक्त्यनुसार रास्तेमें ठहरा जावे। संध्याके पहले २ लौट आया जावे। जब उधर श्रीजीका विहार हो इधर आचार्य अन्य प्रतिमाओंपर तिलकदान, श्रीमुखोद्घाटन, नयनोन्मीलन, सूरिमंत्र प्रदान इन क्रियाओंको संक्षेपसे करके पुष्पोंको क्षेपण कर ज्ञानकल्याणकका आरोपण करे।

(११) धर्मोपदेशकी सभा—रात्रिको टिकटोंद्वारा सभा लगे। भगवानकी गंधकुटीको रोशनीक बनाया जावे, आगे रोशनी इतनी हो कि भगवान्‌का दर्शन सबको दूरसे होसके। ठीक समय परदा खुले। पहले इन्द्रादि देव भगवान्‌की आरती १५ मिनिट तक करें। बड़े मनोहर शब्दोंमें पढ़े। फिर सब यथास्थान बैठ जावें। जो विद्वान् व्याख्याता नियत किये गए हों वे उपदेश देवें। उपदेश बहुत समतारूप शांतिका प्रचार मात्र जिनधर्म सम्बन्धी विषयोंपर हो। एक उपदेशके पीछे एक भजन हो। उपदेश दो घंटे होजावे फिर आध घंटा इसलिये दिया जावे कि जिस किसीको जो नियम लेना हो वह अपने स्थानपर खड़े होकर हाथ जोड़कर कहे कि मैं श्री जिनेन्द्रके समवशरणमें यह नियम लेता हू। फिर आध घटा समय वास्ते दर्शन करने व भंडारमें देनेके लिये नियत किया जावे। भंडारमें डालनेको थाल एक आर चबूतरेपर रक्खा हो। पहले क्रमसे ५ नर ५ नारी आवे जावें। भंडारमें कुछ डाल नमस्कार करके चलते जावें। १० टिकटोंसे काम किया जावे। भंडारमें जो रुपया आवे प्रतिष्ठाके कार्यमें लगे।

नोट—यदि ज्ञानकल्याणककी विधि करते हुए समय विहारका न रहे तथा मार्ग दूरका हो तो विहार दूसरे दिन किया जावे। तब रात्रिको धर्मोपदेश सभा हो। दूसरे दिन सवेरे पहले दिनके समान नित्यके समान पूजा होम हो। पीछे एक घटा सवेरे धर्मोपदेश भगवान्‌का हो। फिर सबजने खा पीले तब १ बजेसे विहार प्रारम्भ किया जावे तब इस रात्रिको भी धर्मोपदेश हो, नियमादि हों। रात्रिको धर्मोपदेशके पीछे नृत्य भजनादि भी कायदेके साथ किये जा सकते हैं। ऐसी दशामें मोक्षकल्याणक तीसरे दिन होगा। यदि विहार ज्ञान कल्याणकके दिन होजावे तो उसके दूसरे दिन बड़े सवेरे मोक्षकल्याणक किया जावे।

अध्याय आठवां।

मोक्षकल्याणक।

दूसरे दिन सवेरे ही पहले दिनके समान आचार्य न्हवनपूजा व होम कर चुके तब मोक्षकल्याणक किया जावे। मंडप उसीतरह नरनारियोंसे पूर्ण भरा हो। पहले ही दूसरे चबूतरेपर परदा आगे डालकर उसपर ऐसी रचना बनावे-एक ऊंची वेदी ऐसी हो जिसपर अर्धचन्द्राकार शीशेका व स्फटिकका सिंहासन हो या अन्य धातुका हो। यह अभी खाली रक्खा जावे। उसके कुछ नीचे कैलाशपर्वतके समान कोई पहाड़ या ऊंचा स्थान बनाके उसपर शिला स्थापन करे। तिसपर साथिया बनाकर जिन प्रतिमाको विराजमान करे, यहां अष्ट प्रातिहार्यादिक कुछ न हों। भगवान् योग निरोध करके ध्यानमें मग्न हैं ऐसा दिखे तब परदा उठे। तब सूचक यह प्रगट करे कि भगवान् ऋषभदेव विहार बंद करके अब कैलाशगिरिपर स्थित हैं। यहांपर आचार्य पढ़ें सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, आचार्यभक्ति, चारित्रभक्ति तथा निर्वाणभक्ति तथा शांतिभक्ति पढ़े। व आगे पुष्प क्षेपे। फिर नीचेका छंद पढ़के अर्घ चढ़ावे—

त्रिभंगी छन्द—जय जय वृषभेशा आदि जिनेशा हो परमेशा नमहुं तुम्हें,
प्रभु देश विहारे धर्म प्रचारे भवि उद्धारे नमहुं तुम्हें।
कैलाश पधारे आतम विचारे योग मगन जिनराज भए,
सूक्ष्मक्रिय शुक्लं धार स्वयं निज मोक्ष तभी निकटात्त भए॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभदेव जिनेन्द्राय तृतीयशुक्लध्यानारूढाय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा।

यहां सूचक कहे कि भगवान् तीसरे शुक्लध्यानमें है, योगोंका अति सूक्ष्म चलन हो रहा है। फिर—

जय जय तीर्थंकर, धर्म प्रभाकर, शिवसुख रंजन नाथ भए,
व्युपरतक्रिय ध्यानं शुक्ल महानं धारत आतम विशाल भए।
औदारिक तैजस कार्मण वपुते नाथ रहित क्षण होवेंगे,
हम पूजें ध्यावें मंगल गावें शिवपथगामी होवेंगे॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभनाथजिनेन्द्राय चतुर्थशुक्लध्यानारूढाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

यहां सूचक कहे कि भगवान्की आयुमें अ इ उ ऋ लृ इन पांच अक्षरोंको उच्चारने मात्र काल शेष है। प्रभु चौदहवें गुणस्थानमें चढ़कर चौथे शुक्लध्यानको ध्या रहे हैं। फिर झटसे परदा सब तरफ गिर जावे तब आचार्य प्रतिमाजीको वहांसे उठाकर अर्द्धचन्द्राकार सिंहासनपर साथिया करके विराजमान करदे। परदा उठे। उस समय सब कहें-निर्वाणकल्याणककी जय, सिद्धपरमेष्ठीकी जय।

तत्काल ही इन्द्रादि देव आवें, साथमें अग्निकुमारका इन्द्र भी आवे। जय वृषभदेवकी जय, जय मोक्षकल्याणककी जय इत्यादि जय जय शब्द करके आवें और आकर नमस्कार करें। फिर सब बैठ जावें। इन्द्र और आचार्य सामने साथिया करके उसपर चन्दन अगर कपूर व सूखा फूल चुने तथा एक रकाबीमें रक्खी हुई लौंगोंको नख केशके भावसे बीचमें डालदे। तब अग्निकुमार जाति भवनवासी देवोंका इन्द्र नमस्कार करे और लेटी हुई दशामें जला हुआ कपूर अपने मस्तकके मुकुटके पाससे उस चितापर डालके अग्नि जलावे उस समय आचार्य यह श्लोक व मंत्र पढ़े—

उसहाधि जिणे पणमामि सया। अमलो विरजो वरकप्पतरू॥
सज कामदुहा मम रक्ख सया। पुरुविज्जुणुही पुरुविज्जुणुही॥

ॐ ॐ ॐ ॐ रं रं रं रं स्वाहा। फिर सब कहें—निर्वाण कल्याणककी जय, पवित्र अग्निकी जय। फिर नीचे लिखा श्लोक पढ़कर अर्घ चढ़ावे—

तीर्थेश्वरस्यान्त्यमहोत्सवेयं, कृत्वा नताग्नीन्द्रकिरीट जातम्।
आनर्चुरिन्द्राः सकलास्तमेनं यजे जलाद्यैरिह गार्हपत्यम्॥

ॐ ह्रीं गार्हपत्यप्रणीताग्नये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

फिर इन्द्र नीचे लिखी स्तुति पढ़े। और भी शामिल हो सकते हैं। इन्द्र और आचार्य खड़े रहे, शेष सब बैठ जावें।

स्तुति।

पद्धरी छन्द—जय ऋषभदेव गुणनिधि अपार। पहुंचे शिवको निज शक्ति द्वार॥
वन्दूं श्री सिद्ध अर्हन्त आज। सुधरें जासें मम सर्व काज॥ १॥
निर्वाण थान यह पूज्य धाम। यह अग्नि पूज्य है रमणराम॥
मन वच तन वन्दूं बार बार। जिन कर्म वंश डाले उजाड़॥ २॥
कैलाश महा तीरथ पुनीत। जहं मुक्ति लही सब कर्म जीत॥
नहिं तैजस तन नहिं कारमाण। नहिं औदारिक कोई प्रमाण॥ ३॥
है पुरुषाकार सु ध्यान रूप। जिन तनमें था तिम है स्वरूप॥
तनु वातवलयमें क्षेत्र जान। पीवत स्वातम रस अपमाण॥ ४॥
हो शुद्ध चिदातम सुख निधान। हो बल अनन्त धारी सुज्ञान।
वन्दूं मैं तुमको बार बार। भवसागर पार लहूं अबार॥ ५॥

अग्नि बराबर जलती रहे. कपूर चन्दन डाला जाया करे। फिर थोड़ीसी भस्मको विरकरके लेवे। आचार्य और इन्द्र पहले उस भस्मको नीचेका दोहा पढ़कर नमस्कार करें और उसे अपने माथेपर दोनों भुजाओंपर, गलेमें और छातीपर ऐसे पांच जगह लगावें।

दोहा—**वन्दूं पावन भस्मको, कर्म भस्म कर्तार। अंग लगे पावन करे, धर्म बढ़े अधिकार॥**

फिर एक रकाबीमें भस्म लेकर भीतर चबूतरोंपर जो हों उनको दी जावे। वे सब अंगुलीसे लेकर नमनकर पांचों जगह लगावें। एक रकाबीमें भस्म पुरुषोंको व एक स्त्रियोंको भेज दी जावे। तब सूचक कहे—यह श्री तीर्थंकरके निर्वाणकी भस्म महा पवित्र है इसको नमनकर सब कोई माथे, दोनों भुजा, कंठ तथा छातीपर लगावे। इतनेमें पर्दा पड़ जावे, भीतर भस्मको उठा लिया जावे कि जब कोई मांगे तब उसे दी जा सके और मांडला एक चौकीपर बनाया हुआ भगवान्‌के सामने लाया जावे। यह मांडला पहलेसे बना तैयार हो बीचमें आठ दलका कमल हो उसके मध्यमें साथिया लिखा हो, साथियेके ऊपर अर्द्धचन्द्राकार लिखकर ऊपर बिंदु हो, आठ बर्त्तोंपर अपनी बांई तरफसे दाहनी ओर नीचे प्रमाण सिद्धोंके आठ गुणोंके आठ पुंज हों या फूल हों या नाम लिखे हों।

(१) सम्यक्त, (२) ज्ञान, (३) दर्शन, (४ वीर्य, (५) सूक्ष्मत्व, (६) अवगाहनत्व, (७) अगुरुलघुत्व, (८) अव्याबाधत्व। इस कमलके चारों ओर २४ कोठोंमें २४ पुष्प हों या पुंज हों या २४ तीर्थंकरके नाम हों ऐसा सुन्दर मांडला एक चौकीपर बना हुआ रखा जाय। बगलमें सामग्री हो तब पर्दा उठ जावे। इन्द्र व आचार्य नीचे प्रमाण पूजा करें—

स्थापना।

बाह्याभ्यन्तरहेतुजातसुदृशः पूर्वश्रुतैरादिमा- च्छुक्लध्यानयुगादिजित्य दुरितं लब्ध्वा सयोगिश्रियम्।
प्राप्यायोगिपदं परेण सकलं निर्जित्य कर्मोत्करं, शुक्लध्यानयुगेन सिद्धसुगुणान्सिद्धान्समाराधये॥

ॐ ह्रीं सिद्ध परमेष्ठिन् अत्र एहि एहि संवौषट्। ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

गंगादितित्थप्पवहप्पएहिं सुगंधड्ढा णिम्मलपएहिं। अच्चेमि णिच्चं परमट्ठसिद्धे सव्वट्ठसम्पादयसव्वसिद्धे॥

ॐ ह्रीं श्रीं नमः सिद्धाधिपतये जलं॥ १॥

गन्धेहिं घाणाण सुहप्पएहिं, समच्चेयाणंपि सुहप्पएहिं॥ अच्चेमि०॥ गन्धं॥ २॥
पेरंतखोणीलयकारणेहिं, वरक्खएहिं सियकारणेहिं॥ अच्चेमि०॥अक्षतं॥ ३॥
पुष्फेहिं दिव्वेहिं सुवण्णएहिं, कव्वे कऊसेहिं सुवण्णएहिं॥ अच्चेमि०॥ पुष्पं॥ ४॥
चरुभेहिं णाणासुररूप्पएहिं, भव्वाण णाणाइरसप्पएहिं॥ अच्चेमि०॥ चरुं॥ ५॥

दद्दिव्वमाणव्वरदीवएहिं, संकयआणं सिरिदीवएहिं ॥ अचेमि० ॥ दीपं ॥ ६ ॥
कालाअरुं धूमसुहुवएहिं, जीयाण पावाण सुहुवएहिं ॥ अचेमि० ॥ धूपं ॥ ७ ॥
अणग्घभूएहिं फलव्वएहिं, भव्वस्स संछिण्णफलव्वएहिं ॥ अचेमि० ॥ फलं ॥ ८ ॥
णयेण णाणेण य दंसणेण, तवेण उट्टेण य संजमेण।
सिद्धे तिकालेसु विसुद्धबुद्धे, समग्घयामो सयलेवि सिद्धे ॥ अर्घं ॥ ९ ॥

प्रत्येक अर्घ।

जानाति बोधो यदनुग्रहेण, द्रव्याणि सर्वाणि सपर्ययाणि।
तुराग्रहत्यक्तनिजात्मरूपं, तं सिद्धसम्यक्त्वगुणं यजामि ॥
ॐ ह्रीं सिद्धसम्यक्तगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जानाति नित्यं युगपत्समस्तान्य, सर्वार्थसामान्यविशेषपूर्वम्।
निर्बाधकं स्पष्टतर च वस्तं, सिद्धात्मविज्ञानगुणं यजामि ॥
ॐ ह्रीं सिद्धात्मविज्ञानगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वात्मस्थसामान्यविशेषसर्वं, साक्षात्कारोत्येव समं सदा यः।
सुनिश्चितासंभवबाधकं तं, सिद्धात्मनो दृष्टिगुण यजामि ॥
ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अनन्तविज्ञानमनन्तदृष्टिं, द्रव्येषु सर्वेषु च पर्ययेषु।
व्यापारयन्तं हतसंकरादि सिद्धात्मवीर्याख्यगुणं यजामि ॥
ॐ ह्रीं सिद्धवीर्यगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अबाधकं मानमबाध्यमेव, निष्पीतसर्वार्थमसंगसंगम्।
सर्वज्ञवेद्यं तदवाच्यमेव, सिद्धात्मसूक्ष्माख्यगुणं यजामि ॥
ॐ ह्रीं सिद्धसूक्ष्मगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

एकत्र सिद्धात्मनि चान्यसिद्धा, असंख्यसंबाधमनंतसंख्याः।
यस्य प्रभावात्सुनयस्थितं तं, सिद्धावगाहाख्यगुणं यजामि ॥
ॐ ह्रीं सिद्धावगाहगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
अधो न पातोस्ति यथा शिलादेर्न, तूलवद्वायुकृतेरणं च।
सिद्धात्मनां तेन सुयुक्तिसिद्धं, गुणं यजामोऽगुरुलघ्वभिख्यम् ॥
ॐ ह्रीं सिद्धागुरुलघुगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।
भवाग्निशांत्यै विहितश्रमोऽव्याबाधात्मना यं परिणाममेति।
स्वात्मोत्थसौख्यैकनिबन्धनं तं, सिद्धात्मनिर्बाधगुणं यजामि ॥
ॐ ह्रीं सिद्धव्याबाधगुणाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। फिर नीचे लिखे अनादि सिद्ध मंत्रको २१ वार जपे—
ॐ णमो सिद्धाणं, सिद्धा मंगलं, सिद्धा लोगुत्तमा, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि ह्रौं शांतिं कुरु कुरु स्वाहा।
इत्थं समभ्यर्चितसिद्धनाथसम्यक्त्वमुख्याश्च गुणास्तदीया।
सर्वार्चिताः सर्वजनार्चनीयाः, स्वात्मोपलब्ध्यै मम सन्तु तेऽमी ॥
ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।
प्रतिमामें सिद्धोंके आठ गुण नीचे प्रमाण करे।
जानाति बोधो यदनुग्रहेण, द्रव्याणि सर्वाणि सपर्ययाणि।
दुराग्रहत्यक्तनिजात्मरूप, सिद्धेत्र सम्यक्त्वगुणं न्यसामि ॥ १ ॥
ॐ ह्रीं परमावगाढसम्यक्त्वगुणभूषिताय नमः। ऐसा कह आचार्य प्रतिमापर पुष्प क्षेपे।
जानाति नित्यं युगपत्स्वतोन्यत्सर्वार्थसामान्यविशेषसर्वम्।
निर्बाधकं स्पष्टतरं च यत्त, सिद्धेत्र विज्ञानगुणं न्यसामि ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानभूषिताय नमः। (पुष्प क्षेपे)
स्वात्मस्थसामान्यविशेषसर्वं साक्षात्करोत्येव समं सदा यः।
सुनिश्चितासंभवबाधकं तं, सिद्धेत्र दृष्ट्याख्यगुणं न्यसामि ॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनभूषिताय नमः। (पुष्प क्षेपे)

अनन्तविज्ञानमनन्तदृष्टिं, द्रव्येषु सर्वेषु च पर्ययेषु ।
व्यापारयन्तं हतसंकरादिं, सिद्धेऽत्र वीर्याख्यगुणं न्यसामि ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

अबाधकं ज्ञानमबाध्यमेव, निष्पीतसर्वार्थमसङ्गसङ्गम् ।
सर्वज्ञवेद्यं तदवाच्यमेव, सिद्धेऽत्र सूक्ष्माख्यगुणं न्यसामि ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

एकत्र सिद्धात्मनि चान्यसिद्धा, वसंत्यसंबाधमनन्तसंख्याः ।
यस्य प्रभावात्तुनयस्थितं तं, सिद्धेऽवगाहाख्यगुणं न्यसामि ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं अवगाहनगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

अधोनुपातोऽस्ति यथा शिलादेर्न तूलवद्वायुकृतेरणं च ।
सिद्धात्मना तेन सुयुक्तिसिद्धं, गुणं न्यसामोऽगुरुलघ्वभिख्यम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं अगुरुलघुगुणभूषिताय नमः । (पुष्प क्षेपे)

अवाप्तिशान्त्यै विहितश्रमोऽव्याबाधात्मना यं परिणाममेति ।
स्वात्मोत्थसौख्यैकनिबन्धनं तं, सिद्धेऽत्र निर्बाधगुणं न्यसामि ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं अव्याबाधगुणभूषिताय नमः । (प्रतिमापर पुष्प क्षेपे) (अब २४ कोठोंकी पूजा करे)

त्रिभंगी—जय जय तीर्थंकर मुक्तिवधूवर भवसागर उद्धार करं,
जय जय परमातम शुद्ध चिदातम कर्मकलंक निवारकरं ।
जय जय गुणसागर सुखरत्नाकर आतमगनता सार लरं,
जय जय निर्वाण पाय सुज्ञानं पूजत पग संसार हरं ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विंशतितीर्थङ्करेभ्यो पुष्पांजलि क्षिपेत् ।

वसन्ततिलका छन्द–पानी महान भरि शीतल शुद्ध लाऊं । जन्मादि रोग हर कारण भाव ध्याऊं ॥
पूजूं सदा चतुर्विंशति सिद्ध काले । पाऊं महान शिवमंगल नाश काले ॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिमहावीरपर्यंत चतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यो नमः जलं ।

केशर सुमिश्रित सुगन्धित चन्दनादी । आताप सर्व भव नाशन मोह आदी ॥ पूंजूं सदा० ॥ चन्दनं ॥
चन्दा समान बहु अक्षत धार थाली । अक्षय स्वभाव पाऊं गुण रत्नशाली ॥ पूंजूं सदा० ॥ अक्षतं ॥
चम्पा गुलाब मरुवा बहु पुष्प लाऊं । दुख टार काम हरके निज भाव पाऊं ॥ पूंजूं सदा० ॥ पुष्पं ॥
ताजे महान पकवान बनाय धारे । बाधा मिटाय क्षुधरोग स्वयं सम्हारे ॥ पूंजूं सदा० ॥ नैवेद्यं ॥
दीपावली जगमगाय अंधेर घाती । मोहादि तम विघट जाय भव प्रतापी ॥ पूंजूं सदा० ॥ दीपं ॥
चन्दन कपूर अगरादि सुगन्ध धूपं । बालूं जु अष्ट कर्म हो सिद्ध भूपं ॥ पूंजूं सदा० ॥ धूपं ॥
मीठे रसाल बादाम पवित्र लाए । जासे महान फल मोक्ष सु आप पाए ॥ पूंजूं सदा० ॥ फलं ॥
आठों सुद्रव्य ले हाथ अरघ बनाऊं । संसार वास हरके निज सुक्ख पाऊं ॥ पूंजू सदा० ॥ अर्घं ॥

प्रत्येक अर्घ ।

गीता—चौदस वदी शुभ माघकी, कैलाशगिरि निज ध्यायके । वृषभेश सिद्ध हुवे शचीपति, पूजते हित पायके ॥
हम धार अर्घ महान पूजा, करें गुण मन लायके । सब राग दोष मिटायके, शुद्धात्म मनमें भायके ॥
ॐ ह्रीं माघकृष्णाचतुर्दश्यां श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१)

शुभ चैत सुदि पांचम दिना, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
अजितेश सिद्ध हुवे भविकगण, पूजते हित पायके ॥ हम० ॥
ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लापंचम्यां श्रीअजितनाथाय जिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२)

शुभ माघ सुदि षष्ठी दिना, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
सम्भव निजातम केलि करते, सिद्ध पदवी पायके ॥ हम० ॥
ॐ ह्रीं माघशुक्लाषष्ठ्यां श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (३)

वैशाख सुदि षष्ठी दिना, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
अभिनन्दनं शिव धाम पहुचे, शुद्ध निज गुण पायके ॥ हम० ॥
ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाषष्ठ्यां श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (४)

शुभ चैत सुदि एकादशी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्री सुमतिजिन शिव धाम पायो, आठ कर्म नशायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लाएकादश्यां श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (५)

शुभ कृष्ण फाल्गुन सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्री पद्मप्रभु निर्वाण हुवे, स्वात्म अनुभव पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णासप्तम्यां श्री पद्मप्रभुजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (६)

शुभ कृष्ण फाल्गुण सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्री जिन सुपार्श्व स्वस्थान लीयो, स्वकृत आनन्द पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्णासप्तम्यां श्री सुपार्श्वजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (७)

शुभ शुक्ल फाल्गुण सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्रीचन्द्रप्रभु निर्वाण पहुंचे, शुद्ध ज्योति जगायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुणशुक्ला सप्तम्यां श्री चन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (८)

शुभ भाद्र शुक्ला अष्टमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्रीपुष्पदंत स्वधाम पायो, स्वात्म गुण झलकायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं भाद्रशुक्लाअष्टम्यां श्री पुष्पदंतजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (९)

दिन अष्टमी शुभ क्वार सुद, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्रीनाथ शीतल मोक्ष पाए, गुण अनन्त लखायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाअष्टम्यां श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (१०)

दिन पूर्णमासी श्रावणी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
जिन श्रेयनाथ स्वधाम पहुंचे, आत्म लक्ष्मी पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं श्रावणपूर्णमास्यां श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (११)

शुभ भाद्र सुद चौदश दिना, मंदारगिरि निज ध्यायके ।
श्रीवासुपूज्य स्वथान ली हो, कर्म आठ जलायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं भाद्रशुक्लाचतुर्दश्यां श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा (१२)

आषाढ़ वद शुभ अष्टमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्रीविमल निर्मल धाम लीनो, गुण पवित्र बनायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णाअष्टम्यां विमलनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१३)

अम्मावसी वद चैत्रकी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके।
स्वामी अनन्त स्वधाम पायो, गुण अनन्त लखायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाअमावस्या श्री अनंतनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१४)

शुभ ज्येष्ठ शुक्ला चौथ दिन, सम्मेदगिरि निज ध्यायके।
श्रीधर्मनाथ स्वधर्म नायक, भए निज गुण पायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लाचतुर्थ्यां श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१५)

शुभ ज्येष्ठ कृष्णा चौदसा, सम्मेदगिरि निज ध्यायके।
श्रीशांतिनाथ स्वधाम पहुंचे, परम मार्ग बतायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१६)

वैशाख शुक्ला प्रतिपदा, सम्मेदगिरि निज ध्यायके।
श्रीकुन्थुनाथ स्वधाम लीनो, परम पद झलकायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाप्रतिपदायां श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१७)

अम्मावसी वद चैतकी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके।
श्री अरहनाथ स्वथान लीनों, अमर लक्ष्मी पायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाअमावस्या श्री अरनाथ जिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१८)

शुभ शुक्ल फाल्गुण पंचमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके।
श्री मल्लिनाथ स्वथान पहुंचे, परम पदवी पायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लपंचम्यां श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (१९)

फाल्गुण वदी शुभ द्वादशी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके।
जिननाथ मुनिसुव्रत पधारे, मोक्ष आनन्द पायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णाद्वादश्यां श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा। (२०)

वैशाख कृष्णा चौदशी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके।
नमिनाथ मुक्ति विशाल पाई, सकल कर्म नशायके॥ हम०॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णाचतुर्दश्यां श्री नमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२१)

आषाढ़ शुक्ला सप्तमी, गिरनार गिरि निज ध्यायके ।
श्री नेमिनाथ स्वधाम पहुंचे, अष्ट गुण झलकायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं आषाढशुक्लासप्तम्यां श्री नेमनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२२)

शुभ श्रावणी सुद सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्यायके ।
श्री पार्श्वनाथ स्वधाम पहुंचे, सिद्धि अनुपम पायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लासप्तम्यां श्री पार्श्वजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२३)

अमावसी वद कार्तिकी, पावापुरी निज ध्यायके ।
श्री वर्द्धमान स्वधाम लीनों, कर्म बंध जलायके ॥ हम० ॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णा अमावास्यां श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । (२४)

भुजंगप्रयात छंद—नमस्ते नमस्ते नमस्ते जिनन्दा । तुम्हीं सिद्ध रूपी हरे कर्म फंदा ॥
तुम्हीं ज्ञान सूरज भविक नीरजोंको । तुम्हीं ध्येय वायू हरो सब रजोंको ॥ १ ॥
तुम्हीं निष्कलंकं चिदाकार चिन्मय । तुम्हीं अक्षजीतं निजाराम तन्मय ॥
तुम्हीं लोक ज्ञाता तुम्हीं लोक पालं । तुम्हीं सर्वदर्शी त्रिकाल काल कालं ॥ २ ॥
तुम्हीं क्षेमकारी तुम्हीं योगिराजं । तुम्हीं शांत ईश्वर कियो आप काजं ॥
तुम्हीं निर्भय निर्मलं वीतमोहं । तुम्हीं साम्य अमृत पियो वीतद्रोहं ॥ ३ ॥
तुम्हीं भव उदधि पारकर्ता जिनेशं । तुम्हीं मोह तमके निवारक दिनेशं ॥
तुम्हीं ज्ञानवीरं भरे क्षीर सागर । तुम्हीं रत्न गुणके सु गम्भीर आकर ॥ ४ ॥
तुम्हीं चन्द्रमा निज सुधाके प्रचारक । तुम्हीं योगियोंके परम प्रेम धारक ॥
तुम्हीं ध्यान गोचर सु तीर्थंकरोंके । तुम्हीं पूज्य स्वामी परम गणधरोंके ॥ ५ ॥
तुम्हीं हो अनादी नहीं जन्म तेरा । तुम्हीं हो सदा सत नहीं अंत तेरा ॥
तुम्हीं सर्वव्यापी परम बोध द्वारा । तुम्हीं आत्मव्यापी चिदानन्द धारा ॥ ६ ॥

तुम्हीं हो अनित्यं स्व परिणाम द्वारा। तुम्हीं हो अभेदं अमिट द्रव्य द्वारा ॥
तुम्हीं भेदरूपं गुणानन्त द्वारा। तुम्हीं नास्तिरूपं परानन्त द्वारा ॥ ७ ॥
तुम्हीं निर्विकारं अमूरत अखेदं। तुम्हीं निष्कषायं तुम्हीं जीत वेदं ॥
तुम्हीं हो चिदाकार साकार शुद्धं। तुम्हीं हो गुणस्थान दूरं प्रबुद्धं ॥ ८ ॥
तुम्हीं हो समयसार निजमें प्रकाशी। तुम्हीं हो स्वचारित्र आतम विकाशी ॥
तुम्हीं हो निरास्रव निराहार ज्ञानी। तुम्हीं निर्जरा बिन परम सुख निधानी ॥ ९ ॥
तुम्हीं हो अबन्धं तुम्हीं हो अमोक्षं। तुम्हीं कल्पनातीत हो नित्य मोक्षं ॥
तुम्हीं हो अवाच्यं तुम्ही हो अचिन्त्य। तुम्हीं हो सुवाच्य सु गणराज नित्यं ॥ १० ॥
तुम्हीं सिद्धराजं तुम्हीं मोक्षराजं। तुम्हीं तीन भूके सु ऊरध विराजं ॥
तुम्हीं वीतरागं तदपि काजं सारं। तुम्हीं भक्तजन भावका मल निवारं ॥ ११ ॥
करैं मोक्ष कल्याणकं भक्त भीने। फुरैं भाव शुद्धं यही भाव कीने ॥
नमे हैं जजे हैं सु आनन्द धारें। शरण मंगलोत्तम तुम्हींको विचारें ॥ १२ ॥

दोहा—परम सिद्ध चौबीस जिन, वर्तमान सुखकार। पूजत भजत सु भावसे होय विघ्न निरवार।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिवर्तमानजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षकल्याणकेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—बिम्बप्रतिष्ठा हो सफल, नरनारी अघ हार। वीतराग विज्ञानमय, धर्म बढ़ो अधिकार ॥

इत्याशीर्वादः। पुष्प क्षेपे।

फिर साधारणतया पूजा विसर्जन करे, पर्दा पड़े। सवेरे यह कार्य हो जावे तब नरनारी भोजनादि करें। ऊपर आचार्य शेष प्रतिमाओंपर पुष्प द्वारा कल्याणककी स्थापना करे। अस्मिन्बिम्बे निर्वाणकल्याणक आरोपयामि स्वाहा। सिद्धाष्टगुणानि न्यसामि स्वाहा।

अध्याय नौवां।

अन्तिम होम, अभिषेक व शांति

तीसरे पहर करीब १ बजे फिर मडप टिकटोंके द्वारा भरा जावे। होमकी सामग्री इतनी तैयार की जावे जिससे १२००० के करीब आहुति हो सकें। अभिषेकके लिये १०८ कलश हों तो ठीक है। यदि न हो सकें तो ५४, २७, ९ भी हो सकते हैं। इनमें जन्मकल्याणकके समान दूधसे मिला जल जो सफेद दीखे भरा जावे व एक बड़ा कलश केशरादि सुगन्ध द्रव्योंसे भरा हुआ हो व चार कलश दोनोंके हों। पहले आचार्य व इन्द्र सब स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन सवेरेके समान अंग शुद्धि करें फिर एक सिद्ध पूजा करके तीनों कुण्डोंमें होम करें। उस समय वह सब विधि करें जो यागमण्डलकी पूजाके प्रारम्भमें की थी (होम विधि अध्याय दूसरा पृष्ठ २१ परसे सिद्धार्चा सम्बन्धी पीठिका मंत्रोंसे होम करे। "ॐ सत्य जाताय नमः" आदिसे ऐसी ११२ आहुतियां देवे। फिर जिस मंत्रकी एक लाख जाप्य की थी उस मंत्रकी १००० आहुति तीनों कुण्डोंमें देवे। अर्थात् कुल ३००० हुईं। एक ही साथ एक मंत्र पढ़ा जावे व तीनों कुण्डोंमें दो दो इन्द्र आहुति देवें-"ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः सर्वविघ्नविनाशनाय स्वाहा।

इसप्रकार होम हो चुके तब महा अभिषेक प्रारम्भ किया जावे। पहले आचार्य और इन्द्र कायोत्सर्ग करके सिद्धोंका ध्यान करें फिर सिद्धभक्ति, चारित्रभक्ति तथा समाधिभक्ति पढ़ें। फिर पूजन करें।

(१) जिनयज्ञ विधानम्।

आहूता भवनामरैस्सुरगता ये सर्वदेवास्तथा, तस्थौ यस्त्रिजगत्सभांतरमहापीठाग्रसिंहासने।
यं ह्यं हृदि सन्निधाप्य सततं, ध्यायंति योगीश्वराः, तं देवं जिनमर्चितं कृतधियामाव्हाननाद्यैर्भजे॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उ साऽर्हन् एहि २ संवौषट्। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आ उ सा अर्हन् तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अर्हन् मम सन्निहितो भव भव वषट्। पुष्पांजलि क्षेपे।

स्थापना।

यत्रागाधविशालनिर्मलगुणे लोकत्रयं सर्वदा। सालोकं प्रतिबिंबितं प्रविशतां नित्यामृतानन्दनम्।
सर्वाज्ञानिमिषास्पदं स्मृतिगतं पापापहं धीमताम्। अर्हत्तीर्थमपूर्वमक्षयमिदं साधारया धारये॥ १॥

ॐ ह्रीं परमब्रह्मणे अनन्तानन्तज्ञानशक्तये जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गन्धस्यन्दनगन्धबन्धुरतरो यद्दिव्यदेहोद्भवो, गन्धर्वाद्यमरस्तुतो विजयते गन्धांतरं सर्वतः।

गन्धादीनखिलानवैति विशदं गन्धादिमुक्तोऽपि यः, तं गन्धाद्यघगन्धमानहतये गन्धेन सम्पूजये ॥

ॐ ह्रीं भवाताप विनाशनाय चन्दनम् ।

ॐ ह्रीं अक्षयफलप्राप्ताय अक्षत निर्वपामीति स्वाहा ।

यस्य द्वादशयोजने सदसि सद्गन्धादिभिः स्वोपमा । नव्यर्थान्सुमनोगणान्सुमनसो वर्षन्ति विष्वक्सदा ।
यः सिद्धिं सुमनः सुखं सुमनसां स्वं ध्यायतामावहे-त्तं देवं सुमनोमुखैश्च सुमनोभेदैः समभ्यर्चये ॥

ॐ ह्रीं कामबाण विध्वंशनाय पुष्पम् ।

यद्दुष्याबाधविवर्जितं निरुपमं स्वात्मोत्थमत्यूर्जितम् । नित्यानन्दसुखेन तेन लभते यस्तृप्तिमात्यन्तिकीम् ।
यं चाराध्य सुधाशिनो ननु सुधास्वादं लभंते चिरम् । तस्योद्यद्रसचारुणैव चरुणा श्रीपादमाराधये ॥

ॐ ह्रीं सुमनः सुखप्रदाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वस्यान्यस्य च स्वप्रकाशनविधौ दीपोपमोऽप्यन्वहम्, यः सर्वं ज्वलयन्ननंतकिरणैस्त्रैलोक्यदीपोऽस्त्यतः ।
येनोद्दीपितधर्मतीर्थमभवत्तस्यं विभो स्वस्य म-द्दीप्त्या दीपितदिङ्मुखस्य चरणौ दीपैः समुद्दीपये ॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ।

येनेदं भुवनत्रयं चिरमभूदुद्धूपितं सोप्यहो मोहो येन सुधूपितो निजमहाध्यानाग्निना निर्दयम् ।
यस्यास्थानपदस्थधूपघटजैर्धूमैर्जगद्धूपितम् । धूपैस्तस्य जगद्वशीकरणसद्धूपैः पदं धूपये ॥

ॐ ह्रीं वशीकृतत्रिलोकनाथाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ।

यद्भक्त्या फलदायि पुण्यमुदितं पुण्यं नवं बध्यते । पाप नैव फलप्रदं किमपि नो पापं नवं प्राप्यते ।
आर्हन्त्यं फलमद्भुतं शिवसुखं नित्यं फलं लभ्यते । पादौ तस्य फलोत्तमादिसुफलैः श्रेयः फलायार्च्यते ॥

ॐ ह्रीं अभीष्टफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

वार्गंधतंदुललतांतहविःप्रदीपै- र्धूपैः फलैः कनकपात्रगतैर्जिनाग्रे ।
नद्यादिवर्तदधिस्वस्तिकदर्भदूर्वा-सिद्धार्थकैश्च कृतमहर्घ्यमिहोद्धरामः ॥

ॐ ह्रीं विनष्टाष्टकर्मणे अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्तुतिः ।

तुभ्यं नमो दशगुणोर्जितदिव्यगात्र । कोटिप्रभाकरनिशाकरजैत्रतेजः ।
तुभ्यं नमोऽतिचिरदुर्जयघातिजात- । घातोपजातदशसारगुणाभिराम ॥ १ ॥

तुभ्य नमः सुरनिकायकुलैर्विहारे। दिव्यैश्चतुर्दशविधातिशयैरुपेत ॥
तुभ्यं नमस्त्रिभुवनाधिपतिस्वलक्ष्म-श्रीप्रातिहार्याष्टकलक्षिताऽर्हन् ॥ २ ॥
तुभ्यं नमो निरुपमान अनन्तवीर्य। तुभ्य नमो निजनिरंजननित्यसौख्य ॥
तुभ्यं नमः परमकेवलबोधवार्धे। तुभ्यं नमः समसमस्तपदार्थलोक ॥ ३ ॥
तुभ्यं नमः सकलमंगलवस्तुमुख्य। तुभ्यं नमः शिवसुखप्रद पापहारिन्।
तुभ्यं नमस्त्रिजगदुत्तमलोकपूज्य। तुभ्यं नमः शरणभूत्रय रक्ष रक्ष ॥ ४ ॥
तुभ्यं नमोस्तु नवकेवलपूर्वलब्धे। तुभ्यं नमोस्तु परमैश्वर्योपलब्धे।
तुभ्यं नमोऽस्तु मुनिकुंजरयूथनाथ। तुभ्यं नमोस्तु भुवनत्रितयैकनाथ ॥ ५ ॥

(२) सिद्ध पूजा।

आहूता इव सिद्धमुक्तिवनिता मुक्तान्यसंगा ययुः। तिष्ठन्त्यष्टमभूमिसौधशिखरे सानन्तसौख्याः सदा ॥
साक्षात्कुर्वत एव सर्वमनिशं सालोकलोकं समं। तानद्धेद्ध विशुद्धसिद्धनिकरानावाहनाद्यैर्भजे ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र एहि२ संवौषट्। ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

गंगादितित्थप्पवहप्पएहिं सगंधदाणिम्मलदाणएहिं। अच्चेमि णिच्चं परमट्ठसिद्धे सव्वट्ठसम्पादय सव्वसिद्धे।

ॐ ह्रीं श्रीं नमः सिद्धाधिपतये जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गन्धेहिं घाणाण सुहप्पएहिं, समच्चयाणं पि सुहप्पएहिं अच्चेमि० ॥ गन्धं। २ ॥
पेरंत छोणासिय कारणेहिं, वरक्खएहिं सियकारणेहिं ॥ अच्चेमि० ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥
पुष्फेहिं दिव्वेहिं सुवण्णएहिं, कव्वे कऊसेहिं सुवण्णएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥
चरूहिं णाणासुररूप्पएहिं, भव्वाणणाणायिरसप्पएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ चरु ॥ ५ ॥
देदिव्वमाणप्पहदीवएहिं। सैऊयआणं मिरिदिवएहिं ॥ अच्चेमि० ॥ दीपम् ॥ ६ ॥
काळाअरुब्भूयसुहूवएहिं। जीवाण पावाण सुहूवएहिम् ॥ अच्चेमि० ॥ धूपं ॥ ७ ॥

एणाणवम्भूएहिं फलवणएहिं । कन्नस्स संदिण्णफलवणएहिम् ॥ अचेमि० ॥ फलं ॥ ८ ॥

णाणेण णाणेण य दंसणेण तवेण उट्ठेण य संजमेण ॥
सिद्धे तिकाले सुविसुद्धबुद्धे । समच्चयामो सयले वि सिद्धे ॥

ॐ ह्रीं ह्रीं श्री सिद्धाधिपतये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्तुति ।

नमस्ते पुरुषार्थानां, परां काष्ठामधिष्ठित । सिद्ध भट्टारकस्तोत्र, निष्ठितार्थ निरञ्जन ॥ १ ॥
स्वाभाव नमस्तुभ्यं अव्याज नमोस्तु ते । अक्षयाय नमस्तुभ्यं, अव्याबाधाय ते नमः ॥ २ ॥
अनन्तोऽनंतविज्ञान दृष्टवीर्यसुखास्पद । नमो नीरजसे तुभ्यं निर्मलायास्तु ते नमः ॥ ३ ॥
अच्छेद्याय नमस्तुभ्यं, अभेद्य च नमो नमः । अक्षताय नमस्तुभ्यं, अप्रमेय नमोस्तु ते ॥ ४ ॥
नलोहत्वमगर्भावासाय, नमोऽगौरवलाघव । अक्षोभ्याय नमस्तुभ्यमविलीनाय ते नमः ॥ ५ ॥
नमः परमकाष्ठायोगरूपत्वजोयुषे लोकाग्रवासिने तुभ्यं, नमोऽनंतगुणाश्रय ॥ ६ ॥
निःशेषपुरुषार्थानां, निष्ठां सिद्धिमधिष्ठित । सिद्ध भट्टारकव्रात, भूयो भूयो नमोस्तु ते ॥ ७ ॥

विविधव्युरिपुशुद्धान्सर्वतत्वार्थबुद्धान् । परमसुखसमृद्धान्युक्तिशास्त्राविरुद्धान् ॥
बहुनिजगुणवृद्धान्सर्वलोकप्रसिद्धान् । प्रमितसुनयसिद्धान्संस्तुवे सर्वसिद्धान् ॥ ८ ॥

(३) महर्षिपूजा ।

ये येऽनगारा ऋषयो यतीन्द्रा, मुनीश्वरा भव्यभवद्रुयानीताः ।
तेषां समेषां पदपंकजानि, सपूजयामो गुणशीलसिद्धय ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रपवित्रतरगात्रचतुरशीतिलक्षगुणगणधरचरणाः अत्रागच्छत २ संवौषट्, ॐ ह्रीं अत्र तिष्ठ २ ठः ठः, ॐ ह्रीं मम रत्नत्रयशुद्धिं कुरुत २ वषट् ।

सुगंधिशीतलैः स्वच्छैः, स्वादुभिर्विमलैर्जलैः । साधद्वीपद्वयातीतभवद्रव्ययतीन्यजे ।

ॐ ह्रीं गणधरचरणेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सारकर्पूरकाश्मीरकलितश्चन्दनद्रवैः। सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ गंधम् ॥ २ ॥
अक्षतैरक्षतैः सूक्ष्मैर्वलक्षैरक्षसन्निभैः। सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ अक्षतम् ॥३॥
पुष्पैः प्रसरदामोदाहूतपुष्पंधयावृतैः। सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ पुष्पम् ॥ ४ ॥
हव्यैर्नव्यघृतापूपपायसैर्व्यंजनान्वितैः। सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ चरु ॥ ५ ॥
कर्पूरप्रभवैर्दीपैर्दीप्त्या दीपितदिङ्मुखैः। सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ दीपं ॥ ६ ॥
दशांगधूपसद्धूमैर्दशाशापूर्णसौरभैः। सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ धूपं ॥ ७ ॥
चोचमोचाम्रजंबीरफलपूरादिसत्फलैः। सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्ययतीन्यजे ॥ फलं ॥ ८ ॥

गुणमणिगणसिंधून्भव्यलोकैकबन्धून् । प्रकटितनिजमार्गान्ध्वस्तमिथ्यात्वमार्गान् ।
परिचितनिजतत्त्वान्पालिताशेषसत्त्वान् । शमरसजितचन्द्रानर्घयामो मुनींद्रान् ॥ अर्घं ॥ ९ ॥

स्तुति ।

ये सर्वतीर्थप्रभवा गणेन्द्राः, सप्तर्धयो ज्ञानचतुष्टयाढ्याः ।
तेषां पदाब्जानि जगद्धितानां, वचोमनोमूर्द्धसु धारयामः ॥ १ ॥
तपोबलाक्षीणरसौषधर्द्धीन्, विज्ञानऋद्धीनपि विक्रियर्द्धीन्
सप्तर्द्धियुक्तानखिलानृषींद्रान्स्मरामि वन्दे प्रणमामि नित्यम् । २ ॥
सर्वेषु तीर्थेषु तदंतरेषु, सप्तर्षयो ये महिता बभूवुः ।
भवांबुधेः पारमिताः कृतार्थाः । भवन्तु नस्ते मुनयः प्रसिद्धाः ॥ ३ ॥
ये केवलींद्राः श्रुतकेवलींद्रा, ये शिक्षकास्तूर्यतृतीयबोधाः ।
सविक्रिया ये वरवादिनश्च सप्तर्षिसंज्ञानिह तान्प्रवन्दे ॥ ४ ॥
प्रमत्तमुख्येषु पदेषु सार्धद्वीपद्वये ये युगपद्भवन्ति ।
उत्कर्षतस्तान्नवकोटिसंख्यान्वंदे त्रिसंख्यारहितान्मुनींद्रान् ॥ ५ ॥

(४) नीचेका स्वस्तिपाठ पढ़कर पुष्पांजलि क्षेपे।

श्री पंचकल्याणमहार्हणार्हा, वागात्मभाग्यातिशयैरुपेताः।
तीर्थंकराः केवलिनश्च शेषाः, स्वस्तिक्रियां नो भृशमावहन्तु ॥ १ ॥

ते शुद्धमूलोत्तरसद्गुणानामाधारभूताद्यनगारसंज्ञाः निर्ग्रंथवर्या निरवद्यवर्गा ॥ स्वस्ति० ॥ २ ॥
ये चाणिमाद्यष्टनुविक्रियाढ्यास्तथाक्षयावासमहानसाश्च। राजर्षयस्ते सुरराजपूज्याः स्वस्तिक्रियां० ॥ ३ ॥
ये कोष्ठबुध्यादिचतुर्विधर्द्धीश्चापुराममुखौषधर्द्धीः ब्रह्मर्षयो ब्रह्मणि तत्परास्ते ॥ स्वस्ति० ॥ ४ ॥
जलादिनानाविधचारणा ये, ये चारणाश्चांबरचारणाश्च। देवर्षयस्ते नतदेववृंदाः ॥ स्वस्ति० ॥ ५ ॥
सालोकलोकोज्ज्वलनैकतानं, प्राप्ताः परं ज्योतिरनंतधामम्। सर्वर्षिवंद्याः परमर्षयस्ते। स्वतिक्रियां०॥६॥
श्रेणीद्वयारोहणसावधानाः, कर्मोपशांतिक्षपणप्रवीणाः एते समस्ता यतयो महान्तः ॥ स्वस्ति ॥ ७ ॥
समग्रमध्यक्षमिताक्षदेशप्रत्यक्षप्रत्यक्षसुखानुरक्ताः। मुनीश्वरास्ते जगदेकमान्याः ॥ स्वस्ति० ॥ ८ ॥
उग्रं च दीप्तं च तपोभितप्तं, महच्च घोरं च परं चरन्तः। तपोधना निर्वृतसाधनोत्काः ॥ स्वस्ति० ॥ ९ ॥
मनोवचःकायबलप्रकृष्टाः, स्पष्ट कृताप्राप्तमहानिलिप्ताः। क्षारामृतस्त्र विमुखा मुनींद्राः। स्वस्ति० ॥ १० ॥
प्रत्येकबुद्धप्रमुखा मुनींद्रा शेषश्च ये ये त्रिविधर्द्धियुक्ताः सर्वेऽपि ते सज्जनोनयुक्ताः ॥ स्वस्ति० ॥११॥
शापानुग्रहशक्त्याद्यतिशयैश्चाचैरचिताः। ये सर्वे परमर्षयो भगवतां तेषां गुणस्तोत्रतः ॥
एतत्स्वस्त्ययनादपैति सकल, संक्लेशभावः शुभो। भाव स्यात्सुकृतं च तच्छुभविधेः सदाविदं श्रेयसे ॥१२॥

फिर आचार्य नीचे लिखा मत्र पढ भूमिशुद्धिके लिये जल छिड़के। "ॐ ह्री श्रीं क्षीं भूः स्वाहा।" फिर शुद्ध भूमिपर या बड़ी चौकीपर साथिया करके १०८ या ५४ या २७ या ९ कलश क्षीर जलसे भरे स्थापित करे, या रक्खे हों तो यह मत्र पढ़ उनपर पुष्प क्षेपे–"ॐ ह्रीं स्वस्तये कलशस्थापन करोमि स्वाहा।" तथा जिस उच्च स्थानपर न्हवन करना हो उसके चारों कोनोंपर ४ कलश शुद्ध जलके भरे स्थापित करे तब भी ऊपर लिखा मत्र पढ़े। इसके ऊपर ऐसा पात्र विराजमान करे जिसके दोनों ओर पानी बहनेकी नाली हो जिससे न्हवनका जल दोनों तरफ गिरकर नीचे रक्खे हुए तसलोंमें पड़े। भूमिपर दो तसले ऐसे दोनों तरफ रख दिये जावें जिससे कुल कलशोंका न्हवन जल उनमें आ सके। फिर जिस पीठ या चौकीपर भगवानको विराजमान करना हो उसे उस पात्रके ऊपर नीचे लिखा मत्र पढ़कर रक्खे—"ॐ ह्रीं अर्हं क्ष्मं ठः ठः स्वाहा।" फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़ उस पीठको धोवे—

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमो अर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन श्रीपीठप्रक्षालनं करोमि स्वाहा। फिर नीचेका मंत्र पढ उस पीठपर श्रीं लिखे— "ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं श्रीलेखनं करोमि स्वाहा।" फिर नीचे लिखा मंत्र पढ इन्द्र जिन प्रतिमाको जिसकी प्रतिष्ठा हो चुकी है स्पर्श करे। "ॐ ह्रीं अत्र वषट् प्रतिमा स्पर्शनम्।" फिर वीच प्रतिमाको बड़ी विनयसे इन्द्र लावे और पीठपर विराजमान करे तब आचार्य नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़े—

नीत्वा मूर्द्धनि भूरिभिः नागिरि श्रीपाण्डुकापाश्रने। पूर्वास्य जिनेश्वरं ते सुरवराः, संस्नापयंति स्म यम् ॥

तं देवं स्नपनाभ्यपंक्तिपवित्रं. नीत्वा विभूत्या परं। पीठेत्र श्रुतबीजमालुरतले, पूर्वाननं स्थापये ॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीं धर्मतीर्थाधिनाथ भगवन्निह पाण्डुकशिला पीठे तिष्ठ तिष्ठेति स्वाहा।

फिर नीचे लिखा मंत्र पढ प्रतिमाके चरणोंको इन्द्र स्पर्शे—

ॐ उसहाय दिव्वदेहाय सज्जोजादाय महप्पणाय अणंतचउट्ठयाय परमसुहपइट्ठयाय णिम्मलाय सयंभुवे अजरामरपरमपदपत्ताय चउमुहपरमेट्ठणे अरहंताय तिलोयणाणाय तिलोयपूजाय अट्ठदिव्वदेहाय देवपरिपूजिताय परमपदाय मम यत्थ सन्निहिदाय स्वाहा।

फिर दोनों सौधर्म ईशान १०८ कलशोंमेंसे एक कलश लेकर खड़े हों तब आचार्य नीचेका श्लोक व मंत्र पढ़े। इसके पहले यदि भाषा मंगल पढना हो तो दूसरा मंगल पढले

मेरोर्मूर्धनि मूर्द्धिनि यदम्बु पयसां, भागं पयोवारिधेः सौधर्मः प्रथमं जयेति परया, भक्त्या समापातयत् ॥

ईशानादिसुरेश्वराश्चतु यं, संस्नापयांचक्रिरे तं देवं निजपंकपालनकृते, संस्नापयामो जिनम् ॥ १ ॥

षड्जातादि नदीनदीनवतरस्ताकासमेत्यां तथा। स्या जात्वभिषिचनीह, जिनमिस्याविष्कृताशंकैः ॥

आच्छाच्छैरपि शीतलैः सुमधुरैर्तीर्थोपनीतैर्जलैः। क्षान्त्यापादितवारिमूर्तिमनघं, देवं जिनं स्नापये ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा।

आचार्य उसी मंत्रको पढता रहे, १०८ कलशोंसे दोनों इन्द्र अभिषेक करते रहे, दोनों तरफ कतारबंध दूसरे इन्द्र खड़े हो जावें और कलशोंको देते रहें। खाली कलशोंको पीछेके इन्द्र लेकर रखते रहें। न्हवनके समय बाहर बाजे बजते रहे, स्त्रियां मंगलगीत गावें, जय जय शब्द हो फिर उदक चन्दनादि मिलकर अर्घ चढावे। फिर केशरादि मिश्रित गाढ़े जलके कलशसे स्नान हो तब यह श्लोक व मंत्र पढ़ा जावे—

कर्कोलैलामलयजहिमग्रंथिपर्णागरुश्रीजातीपत्रिप्रभृतिसुरभिद्रव्यसंमिद्धचूर्णैः ।
स्वर्मोक्षश्रीविषयविलसद्वश्यचूर्णैरमीभिर्देवस्यामुष्य चूर्णीकृतदुरघगिरेरंगमुद्धलयामः ॥ १७ ॥

ॐ ह्रीं सुगन्धजलेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा। फिर अर्घ चढ़ावे। फिर चार कोनोंके कलशोंको दो दो कलश एक साथ एक एक इन्द्र लेकर नीचेका श्लोक व मंत्र पढकर स्नान करावे।

चत्वारः सारतोयांबुधय उत घनाः पुष्करावर्तकाद्याः।
निर्यद्दुग्धाः स्तना वा किमु, सुरसुरभेरित्थमाशंक्यमानैः।
अच्छाच्छस्वादशीतप्रपरिमलविलसत्तीर्थवारिप्रवाहैः।
कुम्भैभिश्चतुर्भिर्युगपदभिषवं, कुर्महे भव्यबन्धोः॥

ॐ ह्रीं पवित्रतरचतुःकोणकुम्भपरिपूर्णजलेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा। फिर अर्घ चढ़ावे। फिर नीचे लिखा श्लोक व मंत्र पढ़कर कुछ चन्दन मिले हुए जलसे अभिषेक करे।

सकलभुवननाथं तं जिनेन्द्रं सुरेन्द्रैरभिषवविधिमाप्तं स्नातकं स्नापयामः।
यदभिषवनवारां बिन्दुरेकोऽपि नृणां, प्रभवति हि विधातुं भुक्तिसन्मुक्तिलक्ष्मीः॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं व म ह प त प व व म म ह ह स स त त प प झ झ झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते। ॐ ह्रीं क्रौं मम पापं खण्ड खण्ड दह दह हन हन पच पच पाचय पाचय हं झं झ्वीं क्ष्वीं हं सः झं वं ह्वः पः हः क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः क्ष्वीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः ह्रीं द्रां द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ठः ठः मम श्रीरस्तु सिद्धिरस्तु पुष्टिरस्तु। शांतिरस्तु। कल्याणमस्तु। स्वाहा।

फिर अर्घ चढावे। फिर नीचे लिखा श्लोक पढके आशीर्वादसूचक पुष्प क्षेपे—

घातिव्रातविघातजातविपुलश्रीकेवलज्योतिषो। देवस्यास्य पवित्रगात्रकलनात्पूतं हितं मङ्गलम्॥
कुर्याद्भव्यभवातिदावशमनं स्वर्मोक्षलक्ष्मीफलप्रोद्यद्धर्मलताभिवर्धनमिदं ऋद्धंधगन्धोदकम्॥

फिर भगवानको पोंछकर तथा पाठको भी पोंछकर भगवानको विराजमान करे। फिर श्री आदिनाथ भगवानकी या जिस तीर्थंकरकी प्रतिमा हो उसकी पूजा करे फिर शांतिधारा देवे तब यह पढ़े—

ॐ अर्हद्भ्यो नमः सिद्धेभ्यो नमः सूरिभ्यो नमः पाठकेभ्यो नमः सर्वसाधुभ्यो नमः। अतीतान, गतवर्तमानत्रिकालगोचरानंतद्रव्य गुणपर्यायात्मकवस्तुपरिच्छेदकसम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानचारित्राद्यनेकगुणगणाधारपंचपरमेष्ठिभ्य नमः। ॐ पुण्याहं २ प्रीयतां २ ऋषभदेवाय महति महावीर वर्धमानपर्यन्तपरमतीर्थंकरदेवान् तत्समयपालिन्योऽप्रतिहतचक्रचक्रेश्वरीप्रभृतिचतुर्विंशतिशासनदेवताः गोमुखयक्षप्रभृति

चतुर्विंशतियक्षा आदित्यचन्द्रमंगलबुधबृहस्पतिशुक्रशनिराहुकेतुप्रभृत्यष्टाशीतिग्रहाः वासुकिशंखपालककर्कोटपद्मकुलिकानंततक्षकमहापद्मजय विजयनागाः देवनागयक्षगन्धर्वब्रह्मराक्षसभूतव्यंतरप्रभृतिभूताश्च सर्वेप्येते जिनशासनवत्सलाः ऋष्यार्यिकाश्रावकश्राविकायष्टृयाजकराजमंत्रि पुरोहितसामंतारक्षिकप्रभृतिसमस्तलोकसमूहस्य शांतिवृद्धिपुष्टितुष्टिक्षेमकल्याणस्वायुरारोग्यप्रदा भवतु । सर्वसौख्यप्रदाश्च सन्तु । देशे राज्य पुरे च सर्वदेव चौरारिमारीतिदुर्भिक्षावग्रहविघ्नौघदुष्टग्रहभूतशाकिनीप्रमृत्यशेषानिष्टानि प्रलयं प्रयांतु, राजा विजयी भवतु प्रजासौख्यं भवतु, राज-प्रभृतिसमस्तलोकाः सततं जिनधर्मवत्सलाः पूजादानव्रतशीलमहामहोत्सवप्रभृतिषूद्यता भवंतु. त्रिकालं नन्दन्तु । यत्र स्थिता भव्यप्राणिनः संसारसागरं लीलयोत्तीर्यानुपमं सिद्धिसौख्यमनन्तकालमनुभवंति तच्चाशेषप्राणिगणशरणभूतं जिनशासनं नंदत्विति स्वाहा ।

फिर न चेके श्लोक पढ़े व इन्द्रादि हाथ जोड़े व पुष्प क्षेपण करते रहें ।

ये सामग्रीविशेषद्विषमरहवात्क्षिप्तदुर्वारवैरि-
व्रातप्रेष्यस्पताकाप्ततपरिचितज्ञानसाम्राज्यलीलाः ।
भूनाथोद्भेदकन्दव्यवहरणघटांह्रिसंपृक्तौक्तियुक्ति-
क्षिप्ताप्त मन्यमाना जगदतिपुनते ते जिनाः पांतु विश्वम् ॥ ४ ॥

स्फूर्जच्छलश्युदर्चिर्भरमसितदशामाकृतैनः पतंगाः,
स्वांगाकाराक्षरैकक्षणसुमरनिराकारसाकारचित्काः ।
व्योम्नोविश्वैकथाम्नः कृततिलरुचः प्रष्टमात्मंभराणां,
व्यंजन्तः स्वं सदान्यज्जिनसमयजुषाः सन्तुसिद्धाः शिवाय ॥ ५ ॥

श्रुतधृतिबलसिद्धाः पञ्चधाचारमुच्चैः, शिवसुखमनसो ये चारयन्तश्चरंति ।
शमरसभरसंविद्भूरयः सूरयस्ते, विदधतु जिनधर्माराधनाशिष्टसिद्धिम् ॥ ६ ॥
येंऽगपविष्टबहिरंगजिनागमाब्धिपारंगमा, निरतिचारचरित्रसाराः ।
धर्मं यथावदनुशासति शिष्यवर्गान्, पुष्णंतु पाठकवृषा जगतां नमस्ते ॥ ७ ॥
तुद्ध्वा ध्यानात्परमपुरुषं तत्त्वत· श्रद्दधानाः, ये विद्वांसःस्वयमुपरतप्रत्यनीकप्रतापम् ।
एकीकुर्वंत्युदयानन्दनिष्पीतचिंतास्ते, भव्यानां दुरितमनिशं साधव संहारंतु ॥ ८ ॥
ये मंगललोकोत्तमशरणात्मानं समृद्धमहिमान, पांतु जयंत्यहत्सिद्धसाधुकेवल्युपज्ञधर्मास्ते ॥ ९ ॥
सूते भेदाभेदरत्नत्रयात्मानाद्यंताद्यंतार्थोदितौ भुक्तिमुक्ती ।

सोऽस्मिन् राजामात्यपौरादिलोकान्, धर्मस्तन्वन् शर्म पायादपायात् ॥ १० ॥

शांतिः स तनुतां समस्तजगति संगच्छतां धार्मिकैः, श्रेयःश्री परिवर्द्धतां नयधुराधुर्यो धरित्रीपतिः ।
सद्विद्यारसमुद्गिरन्तु कवयो नामाप्यघः स्यात्तु मा, प्रार्थ्यं वा कियदेक एव शिवकृद्धर्मो जयत्वर्हताम् ॥२०॥

फिर नीचेके श्लोक पढ़कर आचार्य इन्द्रादिके मस्तकपर पुष्प क्षेपे ।

आयुस्तन्वन्तु तुष्टिं विदधतु विधुनंत्वापदो घ्नंतु विघ्नान्,
कुर्वंत्वारोग्यमुर्वीवलयविलासितां कीर्तिवल्लीं सृजन्तु ।
धर्मं संवर्धयन्तु श्रियमभिरमयत्वर्पयंत्विष्टकामान्,
कैवल्यश्रीकटाक्षानपि जिनचरणाः संजयन्तु सदा वै ॥ २५ ॥

आज्ञैश्वर्यमकायकार्यविचयैः सन्तानवृद्धिर्जयः, सौभाग्य धनधान्यवृद्धिरभयं निःशेषशत्रुक्षयः ।
पांडित्यं कविता परार्थपरता कार्तज्ञमोजस्विता, मानित्वं विनयो जयश्च भवतादर्हत्प्रसादेन वः ॥२६॥

कांताः कांतिकलानुरागमधुराः पुण्यास्त्रिवर्गोद्धुरा,
भृत्याः स्वाम्यनुरक्तिशक्तिरुचिरा श्च्योतन्मदाः कुञ्जरा ।
वाहास्तर्जितशक्रसूर्यतुरगाः शौर्योद्धताः पत्तयो,
भूयासुर्भवतां जिनेन्द्रचरणांभोजप्रसादात्सदा ॥ २७ ॥

गांभीर्यमौदार्यमजर्यमार्यशौर्यं सशौंडीर्यमवार्यवीर्यम्,
धैर्यं विपद्यार्जवमार्यभक्तिः संपद्यतां श्रीजिनपूजनाद्वः ॥ २८ ॥

भवतु भवतामर्हद्भक्त्या सदा मुदितं मनो, ग्रहमुपचिता चौरौचित्यं प्रदासेन परस्परः ।
प्रणयविवशाः स्वैर्संवौसौद्यागयमाहितं, स्थितिरपि चित्ते प्रज्ञापराधपराहतिः ॥ २९ ॥

दृक्संशुद्धिरतोन्यतोस्तु भवतामर्हत्प्रतिष्ठाविधे, जातु क्वापि कथंचिदीषदपि मा शीलं व्रतं म्लायतु ।
दूरादेव शिरस्यधीरमरयो बध्नंतु देवांजलिं, प्रेम्णा सद्गुणसंपदा च सुहृदः श्लिष्यंतु पुष्णंतु च ॥३०॥

यष्टॄणां याजकानां प्रतिनुतिकृतामभ्यनुज्ञायकानां, भूयस्यांतः पुरस्य क्षितिपतनुभुवां मंत्रिसेनापतीनाम् ।
सामंतानां पुरोधः पुरविषयवनादिस्थवर्णाश्रमाणां, सर्वेषामस्तु शांत्यै सततमयमिह स्थापितो विश्वनाथः ॥३१॥

त्रिचित्रैः खैर्द्रव्यं प्रतिसमयमुत्पद्विपदपि, स्वरूपादुल्लोलैर्जलमिव मनागप्यविचलम् ।
अनेहो माहात्म्याहितनवनवीभावमखिलं, प्रणिणन्ना: स्पष्टं युगपदिह ते पांतु जिनपा: ॥ ३२ ॥
संभुज्यार्थिभिः संनिभज्य च यथा विध्येयमबाधया, निर्विण्णास्तृणवद्विसृज्य कमलां स्वं स्वं स्वयं केऽपि ये ।
संवेद्यामलकेवलाचलचिदानंदे प्रदबाप्ते ते सिद्धाः प्रथयतु न प्रति शिवश्रीसद्धुलाभान् ॥ ३३ ॥

ज्ञात्वा अद्धाय तत्वं भजति समरसास्वादमानान्यनीहा,-
वृत्त्या प्राण नुमर्पन्नरूत्नु च कलानष्टमे ब्रह्मरंध्रे ।
भृश्यत्यह्नाय मोहो मृतिमयति मनः केवलं चापि माया,-
च्छून्यध्यानेन येषां प्रसद भरमिमे योगिनस्तन्वतां वः ॥ ३४ ॥

नार्पत्यान् विरमयांनर्हितपलनरुजो दत्तझंपान्वितन्वन्,
निःश्रेणीकृत्य भोगं वलयितपृथुतन्मूलमार्द्राहिनांघ्रि ।
श्रीकुंडद्रंगगृह्यावनितरुचि.खरा चौवतोणः स्वकर्ण,-
ण्यासंगं संगमस्य व्यधितबहुमहा: वीरनाथः स बोव्यात् ॥ ३५ ॥

फिर आचार्य व इन्द्र आदि कायोत्सर्ग करे, ९ दफे णमोकार मंत्र पढे । फिर नीचे लिखी स्तुति सर्व पात्र मिलकर पढे । फिर सर्व सभा खड़ी होजावे तब पुष्प सबको बांट दिये जावे और यागमंडल सहित वेदीकी अथवा फेरीका स्थान न हो तो मंडपभरकी तीन प्रदक्षिणा देवे । पहले आचार्य फिर इन्द्र फिर पात्र फिर पुरुष फिर स्त्रिया रहे । शांतिपाठ पढ़ते रहें । शांतिपाठ होजावे तो दूसरे पाठ पढते रहें । फिर आकर कायोत्सर्ग करे । तथा १ व २ भजन पढ़े जावे । फिर विसर्जन की जावे । इस समय बड़ा आनंद मनाया जावे । जो गन्धर्वादि याचक हो उनको दान दिया जावे । व बहार भूखोंको अन्नादि बांटा जावे । प्रतिमाको मूल वेदीपर विराजमान किया जावे, यह प्रतिष्ठाविधि पूर्ण हो ।

स्तुतिः ।

त्रिभंगी छन्द—जय जय अरहंता सिद्ध महंता, आचारज उवझाय वरं,
जय साधु महानं समयज्ञानं, सम्यक्चारित पालकरं ।
हे मंगलकारी भव हरतारी, पाप प्रहारी पूज्यवरं,
दीनन निस्तारन सुख विस्तारन, करुणाधारी ज्ञानवरं ॥ १ ॥

हम अवसर पाए पूज रचाए करी प्रतिष्ठा बिम्ब महा,
बहु पुण्य उपाए पाप धुवाए सुक्ख उपजाये सार महा।
जिन गुण कथ पाए भाव बढ़ाए दोष हटाये यश लीना,
तन सफल कराया आतम लखाया दुर्गतिकारण हर लीना ॥ २ ॥

निज मति अनुसारं बल अनुसारं यज्ञविधान बनाया है,
सब भूल चूक प्रभु क्षमा करो अब यह अरदास सुनाया है।
हम दास तिहारे नाम लेत हैं इतना भाव बढ़ाया है,
सब याहीसे सब काज पूर्ण हों यह श्रद्धान जमाया है ॥ ३ ॥

तुम गुणका चिन्तन होय निरन्तर जावत मोक्ष न पद पावें,
तुमरी पदपूजा करैं निरन्तर जावत उच्च न हो जावें।
हम पठन तत्त्व अभ्यास रहें नित जावत बोध न सर्व लहें,
शुभ सामायिक अर ध्यान आतमका करत रहें निज तत्त्व गहें ॥ ४ ॥

जय जय तीर्थंकर गुण रत्नाकर सम्यक्ज्ञान दिवाकर हो,
जय जय गुण पूरण औगुण चूरण संशय तिमिर हरणकर हो।
जय जय भवसागर तारण कारण तुम ही भवि आलम्बन हो,
जय जय कृतकृत्यं नमें तुम्हें नित तुम सब संकट टारन हो ॥ ५ ॥

अध्याय दशवाँ ।

आचार्यादि प्रतिबिम्ब प्रतिष्ठाविधि ।

सिद्ध प्रतिबिम्ब—अर्हंत और सिद्धके बिम्बमें इतना अन्तर होता है कि अर्हंतके आठ प्रातिहार्य होते हैं जब कि सिद्धके नहीं होते। हमारी रायमें अरहन्त और सिद्धकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठामें कोई अन्तर नहीं है, क्योंकि अरहन्तके बिम्बमें हम पांचों कल्याणकोंका आरोप कर देते हैं। अन्य आचार्यादिकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठामें अन्तर होना ही चाहिये क्योंकि इनके कल्याणक नहीं होते हैं।

(१) आचार्य प्रतिबिम्ब प्रतिष्ठाविधि—पीछी कमंडलके चिह्न सहित आचार्यकी मूर्ति होती है। आसन पद्मासन या खड्गासन ही मुख्य है, नग्नता होती है, आचार्यकी प्रतिष्ठामें १०००० मंत्रकी जाप देवे। जैसे तीर्थंकरकी मूर्तिमें १ लाखकी दी थी, मन्त्र वही है। पहले मंडप बनाकर यागमंडलका माडला बनावे उसमें पहले अध्यायके अनुसार मध्यमें ॐ लिखे उसके चारों तरफ १७ खानेका वलय करे, फिर दूसरा वलय ३६ कोठोंका हो जिसमें आचार्यके छत्तीस गुण लिखे जाय। फिर तीसरा वलय ४८ कोठोंका हो जिसमें ऋद्धिये लिखी जाय। इस तरह तीन वलयका मंडल बनाकर जो पूजा दूसरे अध्यायमें लिखी उसको उसी विधिसे इन्द्र व आचार्य करे। अंगशुद्धि, न्यास व सकलीकरण विधि पहलेके अनुसार की जाय। फिर पूजामें अर्घ १७+३६+४८=१०१ इतने चढ़ें श्लोक व छन्द वे ही हैं। पूजाके पहले पूज्य प्रतिमा अर्हंतका अभिषेक करे फिर तीन कुण्डोंमें होम किया जावे। होममें सत्यजाताय नमः आदि मंत्रोंके सिवाय १०८ आहुति उसी मंत्रकी देवे जो वहां लिखा है। फिर स्तुति पढ़ी जाय व मंडलकी पूजा की जावे। पूजाके पीछे आचार्यभक्ति, अर्हंतभक्ति, सिद्धभक्ति व चारित्रभक्ति पढ़ें। फिर दूसरे दिन या उसी दिन मंडपमें पहली विधिके अनुसार अंगशुद्धि, अभिषेक नित्यपूजा व होम करके आचार्यके बिम्बकी प्रतिष्ठाका प्रारम्भ करे। यदि उसी दिन प्रतिष्ठा करना हो तो फिर होम करनेकी जरूरत नहीं है। आचार्यके बिम्बको अभिषेक करनेकी पीठपर विराजमान करे। फिर इन्द्र शुद्ध जलसे स्नान करावे। पीछे पांच आचारके रूपमें पांच कलशोंसे जिनमें केशरादि द्रव्य बहुत मिला हो सर्वौषधिके रूपमें उनसे स्नान करावे। फिर प्रतिमाको पोंछकर पांचवें अध्यायमें कहे प्रमाण मातृकामंत्रको १०८ वार जपकर प्रतिमाके अंगपर सोनेकी सलाईसे लिखकर ३८ नं० तक लिखा जावे फिर महर्षि उपासना की जाय।

ये येऽनगारा ऋषयो यतीन्द्रा, मुनीश्वरा भव्यभवदुःखतीताः।

तेषां समेषां पदपंकजानि, सम्पूजयामो गुणशीलसिद्धयै ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रपवित्रतरगात्रचतुरशीतिलक्षगुणगणधरचरणा आगच्छत २ संवौषट्। ॐ ह्रीं सम्यग्० अत्र तिष्ठत२ ठः ठः। ॐ ह्रीं सम्यग्० मम रत्नत्रयशुद्धिं कुरुत २ अत्र मम सन्निहिता भवत २ वषट्। अथाष्टकम्।

सुगन्धिशीतलैः स्वच्छैः स्वादुभिर्विमलैर्जलैः सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं गणवरचरणेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सारकर्पूरकाश्मीरकलितैश्चन्दनद्रवैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं गन्धम् ॥

अक्षतैरक्षतैः सूक्ष्मैर्वलक्षैरक्षसंनिभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं अक्षतान् ॥

पुष्पैः प्रसरदामोदाहतपुष्पंधयावृतैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं पुष्पाणि ॥

हव्यैर्नव्यघृतापूपपायसव्यंजनान्वितैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं चरुं ॥

कर्पूरप्रभवर्दीपैर्दीप्त्या दीपितदिङ्मुखैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं दीपम् ॥

दशांगधूपसद्धूमैर्दशाशापूर्णसौरभैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं धूपम् ॥

चोचमोचचाम्रजम्बीरफलपुंगादिसत्फलैः । सार्धद्वीपद्वयातीतभवद्भव्यतीन्यजे ॥ ॐ ह्रीं फलम् ॥

गुणमणिगणसिंधून्भव्यलोकैकबन्धून् । प्रकटितनिजमार्गान्ध्वस्तमिथ्यात्वमार्गान् ।

परिचितनिजतत्वान्पालिताशेषसत्वान् । शमरसजितचन्द्रानर्घयामो मुनींद्रान् ॥ ॐ ह्रीं अर्घं ॥

स्तुति ।

ये सर्वतीर्थप्रभवा गणेन्द्राः, सप्तर्द्धयो ज्ञानचतुष्टयाढ्याः ।

तेषां पदाब्जानि जगद्धितानां, वचोमनोमूर्धसु धारयामः ॥ १ ॥

तपोबलाक्षीणरसौषधर्द्धीन्, विज्ञानऋद्धीनपि विक्रियर्द्धीन्

सप्तर्द्धियुक्तानखिलानृषीन्द्रान्स्मरामि वन्दे प्रणमामि नित्यम् ॥ २ ॥

सर्वेषु तीर्थेषु तदन्तरेषु, सप्तर्षयो ये महिता बभूवुः ।

भवांबुधेः पारमिताः कृतार्था, भवन्तु नस्ते मुनयः प्रसन्नाः ॥ ३ ॥

ये केवलीन्द्राः श्रुतकेवलीन्द्रा, ये शिक्षकास्तुर्यतृतीयबोधाः ।

सविक्रिया ये वरवादिनश्च, सप्तर्षिसंज्ञानिह तान्प्रवन्दे ॥ ४ ॥

प्रमत्तमुख्येषु पदेषु सार्धं, द्वीपद्वये ये युगपद्भवन्ति ।

उत्कर्षतस्तान्नवकोटिसंख्यान्वन्दे, त्रिभंगारहितान्मुनीन्द्रान् ॥ ५ ॥

फिर प्रतिमाको स्पर्श करके पुष्पांजलि देवे और एव आचार प्रतिमामें स्थापित करे। नीचे प्रमाण मन्त्र पढ़कर प्रतिमापर पुष्प क्षेपै—

ॐ ह्रूं दर्शनाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः। ॐ ह्रूं ज्ञानाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः। ॐ ह्रूं चारित्राचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः। ॐ ह्रूं तपाचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः। ॐ ह्रूं वीर्याचारगुणभूषिताय आचार्याय नमः।

फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर प्रतिमापर पुष्प क्षेपे—

ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्यपरमेष्ठिन् अत्र एहि एहि संवौषट्, ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्यपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं मम सन्निहितो भव भव वषट्। फिर १०८ दफे नीचे लिखा मन्त्र पढ़े—

ॐ णमो आइरियाणं धर्माचार्याधिपतये नमः। फिर सुगंधित केशरसे सोनेकी सलाईसे नाभिमें ह्रूं लिखे। यह तिलकदान विधि हुई। फिर अधिवासनाविधिमें नीचे प्रमाण अष्टद्रव्य चढ़ावे। ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं आचार्यपरमेष्ठिन् जलं गृहाण २ नमः। इसी तरह जलके स्थानमें चन्दनादि चढ़ावे। फिर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ मुखपर वस्त्र ढकें व परदा करदे। ॐ ह्रूं मुखवस्त्रं ददामि स्वाहा। फिर आचार्य नग्न होकर चारित्रभक्ति पढ़कर नीचे लिखा मन्त्र १०८ दफे पढ़कर मुखसे कपडा अलग करे।

ॐ ह्रूं आचार्यमुखवस्त्रं अपनयामि स्वाहा। फिर १०८ दफे नीचे लिखा मन्त्र पढ़ सोनेकी सलाई आंखोंमें फेरे।

"ॐ ह्रूं आचार्यप्रबुद्धस्वध्यातृजनमनांसि पुनीहि २ स्वाहा।" तब परदा हट जावे और सब कहे—श्री आचार्यपरमेष्ठीकी जय। फिर आचार्यकी पूजा नीचे प्रमाण की जावे—

गीता छन्द—मुनिराज आचारज बड़े, शिव मार्गको दर्शावते, जो पालते आचारको, अर अन्यको पलवावते।
जो जैन आगम तत्त्व जाने, स्व पर भेद लखावते, निज आतममें रमते सदा, निज ध्यान सम्यक् भावते॥

ॐ ह्रूं श्री आचार्यपरमेष्ठिन् अत्र अवतर २ आदि स्थापना।

स्थापना—अष्टक।

चाली छन्द—भर सलिल महा शुचि झारी, दै तीन धार हितकारी।
पद आचारज सुखकारी, पूजत त्रय रोग निवारी॥ जलम्॥

चन्दन घस केसर लाऊँ, मनमें बहु भाव धराऊ।
आचारज हैं गुणदाई, पूजत भव ताप मिटाई॥ चंदनम्॥

अक्षत ले दीर्घ अखण्डे, उज्वल शशि समदुति मण्डे।
गुरु पाद जजों मन लाई, अक्षयपद हो सुखदाई॥ अक्षतम्॥

लै फूल सुवर्ण सुहाई, बहु गंध युतं सुखदाई।
गुरु पूज काम दुखदाई, भयभीत होय नश जाई॥ पुष्पम्॥

ताजे पकवान बनाऊँ, आदर युत गुरु ढिग लाऊँ ।
पूजत क्षुद रोग शमाऊं, अमृत निज ले सुख पाऊँ ॥ नैवेद्यम् ॥

ले दीपक तम हर तारा, बहु ज्योति प्रगट करतारा ।
गुरु पाद पूज सुख पाऊँ भ्रम तम सब तुर्त नशाऊँ ॥ दीपम् ॥

बहु धूप सुगंधित लाऊँ धूपायन माहिं खिवाऊं ।
आचारन जज हितकारी, जल जांय कर्म दुखकारी ॥ धूपं ॥

बहु दाख बदाम छुहारा, पिस्ता अखरोट सम्हारा ।
गुरु पाद जजे हित पावे, शिव वनिताको परणावे ॥ फलम् ॥

शुचि द्रव्य जु आठ मिलाऊं, करि अर्घ महा सुख पाऊ ।
गुरु चरणन शीश नवाऊं, जासे सब दोष मिटाऊं ॥ अर्घम् ॥

जयमाल ।

छन्द सृग्विनी—जय कृपाकन्द आनन्दरूपी सदा । आत्म गुण वेदते हैं न तृष्णा कदा ।
धन्य आचार्य है साधु रक्षा करें । बोध दे दण्ड दे तत्त्व शिक्षा करें ॥ १ ॥

सात तत्त्वार्थको श्रद्धते भावसे । तत्त्व शुद्धात्मको चाहते चावसे ॥
दर्शनाचारमें लीन सुख पावते । अन्यको बोध दे दर्श झलकावते ॥ २ ॥

शास्त्रको जानते ज्ञान उपजावते । सप्तभङ्गी सुनय तत्त्वको साधते ॥
मोह मिथ्यात्वके हेतुको टालते । बोध दे ज्ञानको लोक विस्तारते ॥ ३ ॥

व्रत महा पालते गुप्ति त्रय धारते पंच समितीनको ध्यानसे पालते ॥
आत्ममें लीन हो ध्यान दृढ़ धारते । सब आचारको लोक विस्तारसे ॥ ४ ॥

तप महा द्वादशं पालते भावसे । अनशन आदिको धारते चावसे ॥
सेव कर साधुजन मानको टालते । भव्यको मार्ग तपमें सदा लावते ॥ ५ ॥

वीर्यको गुप्त रखते नहीं हैं यती । कार्य उत्साहसे चूकते नहीं रती ॥
आत्मशक्तिको दिन दिन अधिक पावते । अन्यको बोध दे वीर्य वीस्तारते ॥ ६ ॥

पंच आचार ये पालते भावसे। अन्य साधूनको बोधते चावसे।
निश्चयं आतमरस पीवते प्रेमसे। धन्य आचार्य हैं चालते नेमसे ॥ ७ ॥ महार्घं० ॥

दोहा–जो पूजे आचार्यको, मन एकाग्र कराय। सो पावे निज निधि सही, भव-सागर तर जाय ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

फिर आचार्यभक्ति या चारित्रभक्ति पढ़के नीचेका श्लोक पढ़कर चहुँओर पुष्प क्षेपें।

प्राज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां, जायतां दीर्घमायु-
र्भूयाद्भूयांश्च भोगः स्वजनपरिजनैस्तात्सदा रोग्यमग्र्यम्।
कीर्तिर्व्याप्ताखिलाशा, प्रभवतु भवतान्निःप्रतीपः प्रतापः,
क्षिप्रं स्वर्मोक्षलक्ष्मीर्भवतु तनुभृतां, धर्मसूरिप्रसादात्।

फिर शांतिपाठ विसर्जन करके आचार्यकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा पूर्ण की जाय।

(२) उपाध्याय बिंबप्रतिष्ठाविधि—उपाध्यायका बिम्ब भी मुनिके समान पीछी कमण्डल सहित हो तथा हाथमें या अग्रभागमें शास्त्र चिह्न सहित भी हो सकता है। इसकी भी सब विधि आचार्यबिम्बकी प्रतिष्ठा विधिके समान है। अन्तर नीचे प्रमाण है—

(१) मण्डलमें १७ कोठेका पहला वलय फिर २५ कोठोंका फिर ४८ कोठोंका हों।

(२) उपाध्यायके बिम्बको पांच कलशोंके स्थानमें प्रथमानुयोग आदि ४ अनुयोगके रूपमें चार कलशोंसे अभिषेक करे।

(३) पंच आचारके स्थानमें चार अनुयोग प्रतिमामें नीचेके मंत्रोंसे स्थापित करे–ॐ ह्रौं प्रथमानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः। ॐ ह्रौं करणानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः। ॐ ह्रौं चरणानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः। ॐ ह्रौं द्रव्यानुयोगज्ञानभूषिताय उपाध्यायाय नमः।

(४) तिलकदानमें आह्वानन मंत्र नीचे प्रमाण पढ़े—ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्यायपरमेष्ठिन् अत्र एहि २ संवौषट्। ॐ ह्रौं णमो० अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ॐ ह्रौं णमो० मम सन्निहितो भव २ वषट्। तथा जाप १०८ दफे नीचे लिखे मंत्रकी देवे—ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाण पाठकाय नमः। तथा नाभिमें ह्रौं लिखे।

(५) अधिवासनाविधिमें नीचेके मन्त्रसे आठ द्रव्य चढावे। ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं उपाध्यायपरमेष्ठिन् जल गृहाण२ नमः इत्यादि।

(६) मुखको ढकनेका नीचेका मन्त्र पढ़े—ॐ ह्रौं मुखवस्त्रं ददामि स्वाहा।

(७) मुखके उद्घाटनमें यह मन्त्र पढ़े—ॐ ह्रौं उपाध्यायमुखवस्त्रं अपनयामि स्वाहा।

(८) नयनोन्मीलन मन्त्र यह पढ़े—ॐ ह्रौं उपाध्यायप्रबुद्धस्व ध्यातृजनमनांसि पुनीहि २ स्वाहा।

(९) पूजा नीचे प्रमाण की जावे—

स्थापना।

मुनिराज पाठक तत्त्वज्ञानी, तत्त्व शिक्षा देत हैं। बहु शिष्य पढ़त जिनागमं, अज्ञान तिनहर लेत हैं॥
अनुयोग चारों जानते, अध्यातम विद्या नाथ हैं। चारित्र साधु सुपालते बहु, साधु रहते साथ हैं॥
ॐ ह्रीं उपाध्यायपरमेष्ठिन् अत्र अवतर २ अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छन्द मालिनी—सम रस सम चोखा लाय पानी सुमारं। सुवरण झारी ले भव गदं सर्व टारं॥
कर शुचि मन पूजूं, पाठकं तत्त्व धारी। नमत सब कुबोधं, होय आनंद भारी॥ जलं॥
बहु सुरभि धराई, चन्दनं लाय नीके। भव ताप बुझाई, अमृतं शांत पीके।
कर शुचि मन पूजूं, पाठकं तत्त्वधारी। नशत सब कुबोधं, होय आनन्द भारी॥ चन्दनं॥
करमें अक्षत ले, दीर्घ अति श्वेतवर्णं। अखय गुण प्रचारी, सर्व सन्देह हर्णं॥कर शुचि मन०॥अक्षतं॥
सुमन सुगन्धित ले, पंचधा वर्णधारी। दुख काम मिटावे, शील धर्म प्रचारी॥ कर शुचि०॥ पुष्पं॥
चरु करके ताजे, शुद्ध मुनि अग्र धारूं। क्षुध रोग नशाऊँ, तृप्तता गुण सम्हारूँ॥ कर शुचि०॥ चरुं॥
कर दीप संजोऊं, अन्धकारं नशाई। सब मोहतिमिर सब, एक क्षणमें पलाई॥ कर शुचि०॥ दीपं॥
बहु सुरभि धराई, धूप अग्नि जलाई। मम आठ करम सब, भस्म हों साधु ध्याई॥कर शुचि०॥ धूपं॥
ले शुचि फल नीके, दाख बादाम पिस्ता। जासे शिवफल हो, नाशे संसार रस्ता॥कर शुचि०॥फलं॥
ले ले अठ द्रव्यं, शुद्ध अर्घं बनाऊँ। अठ कर्म नशाके, अष्ट गुण सार पाऊँ॥ कर शुचि०॥ अर्घं॥

जयमाल।

भुजंगप्रयात छन्द—गुणानन्दधारी उपाध्याय प्यारे, सु साधु चरित्रं धरे निर्विकारे।
परम साम्य धारी सभी दोष टारी, रत्नत्रय सम्हारी निजातम विचारी॥१॥
इकादश सु अगं पढ़े तत्व जाने, चतुर्दश सु पूरव लखें सत पिछाने।
सकल श्रुत विचारें परम ज्ञान धारी, लखे आतमको निश्चयं निर्विकारी॥२॥
चतुर्विंश तीर्थंकरोंके चरित्रं, सुचक्री सु बलदेव जीवन पवित्रं।
हरी प्रतिहरी वृत्तको जानते हैं, सु अनुयोग प्रथमं जु पहचानते हैं॥३॥

त्रिलोकं लखें सर्व रचना पिछाने, गुणस्थान मार्गण करम भेद जाने।
करण सूत्रसे सर्व गिनती लखाने, सु अनुयोग करणं भलीभांति माने ॥४॥
यतीका सु आचार सब भेद पाया, गृही भेद चारित् इकादश बताया।
क्रिया—कांड व्यवहारको जानते हैं, सु चरणानुयोगं सकल मानते हैं ॥५॥
पदारथ नवम तत्व शुभ सात ज्ञानी, छहों द्रव्य पंचास्तिकाया पिछानी।
भलीभांति आतम परम तत्व माने, सु द्रव्यानुयोग सकल भेद जाने ॥६॥
अनेकांत वस्तु सु स्याद्वाद ठाने, तिसे जान समता हृदय माहिं आने।
नहीं है विरोधं नहीं कोई खेदं, परम तत्व जाने लखें सर्व भेदं ॥ ७ ॥
दयासागरं पाठकं भक्ति करनी, पढ़ावैं यती सीख संसार तरणी।
नहीं खेद माने परम हर्ष ठाने, सकल ज्ञान दे आप सम साधु आने ॥ ८ ॥
नमूं पाद सुखदायक उवझायजीके, लहूं ज्ञान सुन्दर करूं कर्म फीके।
सु छाया गुरूकी परम रक्षिका है, जजूं मन लगाई परम दक्षिका है।९॥ महार्घं ॥
सोरठा—पाठक पूजूं पाय, पाठ पठन पटुता करै। गुण गाऊं नित गाय, मगल हो अघ सब भगै ॥

(१०) फिर चारित्रभक्ति पढ़के नीचेका श्लोक पढ़े।

प्राज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां जायतां दीर्घमायु—
भूयाद्भूयांश्च भोगः स्वजनपरिजनैस्तात्सदारोग्यमग्र्यम् ॥
कीर्तिर्व्याप्ताखिलाशा प्रभवतु भवतान्निःप्रतीपः प्रतापः।
क्षिप्रं स्वर्मोक्षलक्ष्मीर्भवतुतनुभृतां पाठकेन्द्रप्रसादात् ॥

फिर शांतिपाठ विसर्जन करके उपाध्याय बिम्बकी प्रतिष्ठा पूर्ण करे।

(३) साधुबिम्बप्रतिष्ठाविधि—पीछी कमंडल सहित ध्यानमय साधुकी बिम्ब बनावे। इसकी प्रतिष्ठाविधि भी पहलेके समान है। विशेष यह है—

(१) मण्डलमें १७ कोठेका पहला फिर २८ कोठेका फिर ४८ कोठोंका हो। (२) साधुके बिम्बको रत्नत्रयमई तीन कुम्भोंसे अभिषेक किया जावे। (३) तीन रत्न नीचेके मन्त्रोंसे प्रतिमामें स्थापित करे। ॐ ह्रः सम्यग्दर्शनभूषिताय साधवे नमः। ॐ ह्रः सम्यग्ज्ञानभूषिताय साधवे नमः। ॐ ह्रः सम्यग्चारित्रभूषिताय साधवे नमः। (४) तिलकदानमें आह्वानन मन्त्र नीचे प्रमाण पढ़े।

ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं साधुपरमेष्ठिन् अत्र एहि२ संवौषट् इत्यादि तथा जाप १०८ दफे नीचेके मन्त्रसे देवै। ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं साधवे नमः तथा नाभिमें ह्रः लिखे। (५) अधिवासना विधिमें नीचेके मन्त्रसे आठ द्रव्य चढावे। ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूण साधुपरमेष्ठिन् जलं गृहाण २ स्वाहा इत्यादि। (६) मुखके ढकनेका नीचे लिखा मंत्र पढ़े—ॐ ह्रः मुखवस्त्रं ददामि स्वाहा (७) मुखके उद्घाटनमें यह मंत्र पढे—ॐ ह्रः साधुपरमेष्ठिन् मुखवस्त्रं अपनयामि स्वाहा। (८) नयनोन्मीलन मन्त्र यह पढ़े—ॐ ह्रः साधु प्रबुद्धस्व-ध्यातृजन्मनांसि पुनीहि २ स्वाहा। (९) पूजा नीचे प्रमाण करे—

स्थापना।

छंद गीता—मुनिराज हैं गुणधाम जगमें मोक्षमारग साधते,
त्रय रत्नधारी निज विचारी ज्ञान आसन मांडते।
तप करत द्वादश भेद अनुपम सहत हैं उपसर्गको,
जिनचरण पूजूं धाप उरमें लहूं मैं अपवर्गको॥

ॐ ह्रः श्री साधुपरमेष्ठिन् अत्र०

अष्टक।

वसन्ततिलका छन्द—पानी महान अति शीतल कुम्भ धारा। धारा सुदेत मृत जन्म जरा निवारा॥
पूजूं मुनीन्द्र चरणा शुचि भाव कीने। पाऊं निजात्म सुखदा वसुकर्म हीने॥ जलं॥
केशर मिलाय शुभ चन्दन अग्र धारूं। आताप भव शमन धाय स्वगुण सम्हारूं॥ पूजूं०॥ चंदनं॥
चन्द्रा समान अति श्वेत सुगन्ध अक्षत। धारूं सुथाल पाऊं गुण सार अक्षत॥ पूजूं०॥ अक्षतं॥
नीरज गुलाब वेल चम्पा सुहाई। बहु पुष्प धार निज काम व्यथा नशाई॥ पूजूं०॥ पुष्पं॥
ताजे पवित्र पकवान सु लाय थारी। जासे मिटाय क्षुद रोग स्वकाज हारी॥ पूजूं०॥ नवेद्यं॥
दीपक जराय घृत सार कपूर लाऊं। मम मोह सर्व अंधियार तुरत मिटाऊं॥ पूजूं०॥ दीपं॥
धूपादि खेय शुचि अग्नि धुआं प्रसारा। आठों महान मल कर्म जलाय डारा॥ पूजूं०॥ धूपं॥
पिस्ता बदाम अखरोट सुफल धराए। जासे सुमोक्ष फल आप नजीक आए॥ पूजूं०॥ फलं॥
जल चन्दनादि वसु द्रव्य मिलाय थारी। संसार पार झट होय स्वगुण विचारी॥ पूजूं०॥ अर्घं॥

जयमाल ।

त्रोटकछन्द-जय साधु सदा गुण वास नमो, अनगार सु सत्य सुचाल नमो ।
भवसागर तारण पोत नमो, निजमें धारत निज जोत नमो ॥ १ ॥
जय सप्त तत्त्व रुचिकार नमो, आपा पर भेद विचार नमो ।
निज आतम सु श्रद्धाकार नमो, सम्यग्दर्शन अधिकार नमो ॥ २ ॥
जय जिन आगम बुध धार नमो, ज्ञायक निश्चय व्यवहार नमो ।
निज आतम पदारथ ज्ञान नमो, धारें नित सम्यग्ज्ञान नमो ॥ ३ ॥
जय पंच महाव्रत धार नमो, समिती गुप्ती प्रतिपाल नमो ।
निज साम्यभाव झलकाय नमो, सम्यक्चारित उर ध्याय नमो ॥ ४ ॥
जय आतम समाधि प्रकाश नमो, सब इंद्रिय आश निराश नमो ।
चहुं दुष्ट कषाय विनाश नमो, निज शांत भाव हुल्लास नमो ॥ ५ ॥
जय साधु सु साधत आतम बली, जय साधु सु अनुभव सार रली ।
जय साधु परम उपकारी हैं, संयम सामायिक धारी हैं ॥ ६ ॥ महार्घं ॥
दोहा—वन्दत साधु महन्तको, पूजत गुण अविकार ।
निजानन्द पावे सुधी, खुलजावे शिवद्वार ॥ इत्याशीर्वादः ॥

(१०) फिर चारित्रभक्ति पढ़के नीचे लिखा श्लोक पढ़े—

प्राज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुतरां, जायतां दीर्घमायु-
भूयाद्भूयांश्च भोगैः स्वजनपरिजनैस्तात्सदा रोग्यमद्यम् ।
कीर्तिर्व्याप्ताखिलाशा प्रभवतु भवतान्निःप्रतीपः प्रतापः,
क्षिप्रं स्वर्मोक्षलक्ष्मीर्भवतु तनुभृतां सर्वसाधुप्रसादात् ॥

फिर शांतिपाठ विसर्जन करके साधुबिम्बकी प्रतिष्ठा पूर्ण करे ।

(४) श्रुतस्कंध प्रतिष्ठाविधि—द्वादशांगवाणीका एक पट धातुका बनवाया जाता है जैसा बहुधा दक्षिणमें मिलता है व सिद्धांत-भवन—आरामें विद्यमान है । उसकी प्रतिष्ठाकी विधि नीचे प्रकार है—

(१) इसमें भी यागमंडलकी पूजा की जाय। बीचमें ॐ बनाकर पहला वलय १७ कोठोंका बनावे फिर ११ अंग-१४ पूर्व अर्थात् २५ कोठोंका बनावे और पहलेकी भांति पूजा करें। जो विधि आचार्यके बिम्बकी प्रतिष्ठामें है वो करे।

(२) इस जिनवाणीकी मूर्तिको चार अनुयोगरूप चार कलशोंमें स्नान करावे तब कहे—

"ॐ ह्रीं श्रुतदेव्याः कलशस्नानं करोमि इति स्वाहा।"

(३) फिर नीचेकी स्तुति पढ़े और मूर्तिपर पुष्प क्षेपे—

निर्मूलमोहतिमिरक्षपणैकदक्षं, न्यक्षेण सर्वजगदुज्ज्वलनैकतानम्।
सोषेस्व चिन्मयमहो जिनवाणि नूनं, प्राचीमतो जयसि देवि तदल्पसूतिम्॥

आभवादपि दुरासदमेव श्रायसं, सुखमनन्तमचिंत्यम्।
जयतेद्य सुलभं खलु पुंसां, त्वत्प्रसादात् इहांब नमस्ते॥

चेतश्चमत्कारकरा जनानां, महोदयाश्चाभ्युदयाः समस्ता।
हस्ते कृताः शास्तजनैः प्रसादात्, तवैव लोकांब नमोस्तु तुभ्यम्॥

सकलयुवतिसृष्टेरंबचूडामणिस्त्वं, त्वमसि गुणसुपुष्टेर्धर्मसृष्टेश्च मूलम्।
त्वमसि च जिनवाणि स्वेष्टमुक्त्यंगमुख्या, तदिह तव पदाब्जं भूरिभक्त्या नमामः॥

(४) फिर नीचे लिखी स्तुति पढ़े—

बारह अंगंगिज्जा दंसणतिलया चरित्तवत्थहरा। चोद्दसपुव्वाहरणा ठावे दव्वाय सुयदेवी॥ १॥
आचारशिरसं सूत्रकृतवक्त्रां सुकण्ठिकाम्। स्थानेन समवायांगव्याख्याप्रज्ञप्तिदोर्लताम्॥ २॥
वाग्देवतां ज्ञातृकथोपासकाध्ययनस्तनीम्। अन्तकृद्दशसन्नाभिमनुत्तरदशांगतः॥ ३॥
सुनितंबां सुजघनां प्रश्नव्याकरणश्रुतात्। विपाकसूत्रदृग्वादचरणां चरणांबराम्॥ ४॥
सम्यक्त्वतिलकां पूर्वचतुर्दशाविभूषणाम्। तावत्प्रकीर्णकोदीर्ण-चारुपत्रांकुरश्रियम्॥ ५॥
आप्तदृष्टप्रवाहौघद्रव्यभावाधिदेवताम्। परब्रह्मपथादृप्तां स्यादुक्तिं भुक्तिमुक्तिदाम्॥ ६॥
सर्वदर्शनपाखण्डदेवदैत्यखगार्चिताम्। जगन्मातरमुद्धर्तु जगदत्रावतारयेत्॥ ७॥

(५) फिर नीचे लिखे मंत्रको १०८ बार पढ़कर प्रतिमाको स्पर्श करे।

ॐ अर्हन्मुखकमलवासिनी पापांधकारक्षयकारिणो श्रुतज्वालासहस्रप्रज्वलिते सरस्वति मम पाप हन हन क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः क्षीरवरधवले अमृतसंभवे वं वं मं मं ह स्वाहा।

(६) फिर नीचे लिखा मंत्र पढ़कर आह्वाननादि पूजा करे।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलवासिनी पापात्मकारक्षयकारिणी श्रुतज्वालासहस्रप्रज्वलिते सरस्वति अत्र एहि २ संवौषट्। ॐ ह्रीं अर्हन्मुख० अत्र तिष्ठ २ ठः ठः। ॐ ह्रीं अर्हन्मुख० मम सन्निहिता भव भव वषट्।

(७) फिर १०८ दफे नीचेका मंत्र पढ़े—ॐ ह्रीं सरस्वतीदेव्यै नमः। तथा उस बिम्बके मध्यमें ह्रीं लिखे। यह तिलकदान विधि हुई।

(८) फिर अधिवासना विधिमें नीचेके मन्त्रोंसे आठ द्रव्य चढ़ावे—

ॐ ह्रीं श्रीं वद वद वाग्वादिनि भगवति सरस्वति जल गृहाण२ स्वाहा। इत्यादि।

(९) फिर नीचेका मन्त्र पढ़ वस्त्रसे ढके व परदा करे। ॐ ह्रीं मुखवस्त्र ददामि स्वाहा। (१०) फिर आचार्य नम्र हो श्रुतभक्ति पढ़े व नीचे लिखा मन्त्र १०८ दफे पढ़ मुखसे कपड़ा अलग करे। ॐ ह्रीं भगवति सरस्वति मुखवस्त्रं अपनयामि स्वाहा। फिर नीचे लिखा मंत्र १०८ वार पढ़कर सोनेकी सलाई उस बिम्बपर फेरे यह नयनोन्मीलन क्रिया है। ॐ ह्रीं श्रुतदेवि प्रबुद्धस्व ध्यात् जन मनांसि पुनीहि २ स्वाहा। तब परदा हटे व जयजयकार शब्द हो। (११) फिर पूजा नीचे प्रकार की जावे—

स्थापना।

गीता—श्री जिन विनिर्गत वाणी, अनुपम परम प्रकाशनी।
मिथ्यात मल धोकर सु भविजन चित्त उज्वल कारिणी॥
संसार ताप प्रशान्त कारण, चन्द्र कर सुखदायनी।
आनन्द अमृत दाय वाणी, पूजहुं अघ नाशनी॥

ॐ ह्रीं वाग्वादिनी भगवती सरस्वती अत्र अवतर २ इत्यादि।

अष्टक।

छन्द नाराच—महान गन्ध धार नीर लाइये सु प्रेमसों। अनादि जन्म व्याधि मेट दीजिये सु नेमसों॥
सरस्वती महान देवि पूजिये सु भावसे। हटे कुबोध तम अपार ज्ञान होय चावसे॥ जलं॥
परम सुगन्ध चन्दनं मिलाय शुद्ध केशर। मिटाय ताप संसृती सुपाय शांतता वरं॥ सरस्वती०॥चन्दनं॥
लहे अखण्ड अक्षतं सफेद शुद्ध थालमें। करे प्रकाश अक्षतं गुणं निजात्म हालमें॥ सरस्वती०॥ अक्षतं॥
गुलाब कुंज चम्पकं सुवर्ण फूल लाइये। महा कठोर काम बाण टाल शील पाइये॥ सरस्वती०॥ पुष्पं॥
बनाय शुद्ध अन्न तुर्त मिष्टता मिलायके। क्षुधा कुरोग नाश होय भावना सु भायके॥ सरस्वती०॥ चरुं॥

॥१८८॥

कपूरको जलाय स्वर्ण दीपदान मैं धरूं। मिटाय मोह अन्धकार ज्ञान दीप प्रज्वलूं ॥ सरस्वती० ॥ दीपं ॥
मंगाय धूप गंधकार धूपदान मैं दिया। निजाठ कम काठ जाल धूमको उड़ा दिया ॥ सरस्वती० ॥ धूपं ॥
सुगंध मिष्ट आम्र आदि फल महान धारके। महान मोक्ष लाभ काज भावको सम्हारके ॥ सर० ॥ फलं ॥
सुधार गंध अक्षतं सुपुष्प चारु चरु लिये सु दीप धूप फल मंगाय अर्घ शुद्ध यों किये ॥ सरस्वती० ॥ अर्घं ॥

जयमाल।

छन्द मुक्तादाम—नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु हमेश, श्री जिनवाणी स्वतु स्वादेश।
श्री सर्वज्ञ विगत सब दोष, कहैं परकाश भविक जन तोष ॥ १ ॥
तिसे धारें गणधर मुनिराज, सु बारह अङ्ग रचें भवि काज।
पढ़े आचारज शिष्य समाज, रचें बहु ग्रन्थ सु आतम काज ॥ २ ॥
यही श्रुतज्ञान हरे अज्ञान, दिखावे तत्त्व स्वपर पहचान।
लखावे वस्तु स्वरूप अपार, मिटे संशय संमोह असार ॥ ३ ॥
जुहै स्याद्वाद परम हितकार, विरोध मिटाय जु ऐक्य प्रचार।
यही दर्पण सम तत्त्व प्रसार, यही समता प्रगटावन हार ॥ ४ ॥
सही जिनधर्म सु आतम रूप, यही रतनत्रय ध्यान स्वरूप।
यही भवसागर तारण सेतु, यही सुखसागर वर्द्धन हेतु ॥ ५ ॥
इसे समझावे यह जिनवाणी, मिटावे दोष परम गुण दानी।
सरस्वती मात नमूं मैं तोहि, करहु किरपा जो आनन्द होहि ॥ ६ ॥ महार्घं ॥

दोहा—श्री जिन मात प्रसादसे, सुधरे हम सब कार्य। वन्दूं पुन पुन मातको, दीजे हमें स्वराज ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

फिर श्रुतभक्ति पढे और नीचे लिखा श्लोक पढ़े—

प्राज्यं साम्राज्यमस्तु स्थिरमिह सुभरां जायतां दीर्घमायु-
र्भूयाद्भूयाश्च भोगः स्वजनपरिजनैस्तात्सदारोग्यमद्यम् ॥

कीर्तिव्याप्ताखिलाशा प्रभवतु भवतान्निःप्रतापः प्रतापः ।
क्षिप्रं स्वर्मोक्षलक्ष्मीर्भवतु तनुभृतां पाठकेन्द्रप्रसादात् ॥

फिर शांतिपाठ विसर्जन किया जावे ।

(१) श्री चरणपादुका प्रतिष्ठाविधि—जहां२ तीर्थंकरोंके कल्याणक होते हैं वहां२ चरणचिह्न स्थापित किये जाते हैं, इनकी प्रतिष्ठा विधिमें इन्द्र अंगशुद्धि आदि करके पूर्ववत् १७ कोठोंकी पूजा प्रथम वलय अनुसार व नित्य पूजा तथा एक या तीन कुण्डमें होम करे, मण्डल बनावे या योंही करे। फिर जिस तीर्थंकरकी चरणपादुका हो उनका पूजन किया जावे। पूजनके पहले चरण-पादुकाका अभिषेक करे। फिर नीचे लिखे मंत्रको १०८ वार जपे—ॐ ह्रीं अस्मिन् क्षेत्रे जन्मस्थानस्थापना करोमि स्वाहा या तपस्थान या ज्ञानस्थान या निर्वाणस्थान स्थापना करोमि स्वाहा। फिर चरणचिह्नमें ॐ ह्रूं लिखे। यह तिलकदान विधि है। पश्चात् सिद्धभक्ति, निर्वाणभक्ति, आचार्य भक्ति आदि भक्ति यथायोग्य पढ़े, स्तुति पाठ पढ़े, शांति विसर्जन करे। यदि आचार्य उपाध्याय या साधुकी पादुका हो तो उसको प्रतिष्ठा उनहीके अनुसार करे, जैसा पहले कह चुके है।

अध्याय ग्यारहवाँ ।

मंदिर या वेदीप्रतिष्ठा विधि ।

मदिर व वेदी निर्माण होनेपर उसकी प्रतिष्ठा या शुद्धि नीचे प्रकार करनी योग्य है—शुभ मुहूर्तमें अलग मण्डप बनाकर ढाई द्वीप व २४ तीर्थंकर व समवशरणका कोई पाठ किया जावे। माण्डला बना लिया जावे। यदि बहुत संक्षेप करना हो तो विना माण्डला बनाएं २४ तीर्थंकरकी या परमेष्ठीकी पूजा की जावे। मंदिर या वेदीप्रतिष्ठाके दिन जलयात्रा की जावे तथा शुद्धिविधान करके प्रतिमा विराजमान की जावे। कमसेकम ८००० जप उसी मंत्रसे व उसी विधिसे जैसा बिम्बप्रतिष्ठाके सम्बंधमें पहले अध्यायमें कह चुके हैं, की जावे। जलयात्राके पहले आचार्य इन्द्रकी स्थापना करे जैसा बिम्बप्रतिष्ठामें किया था। वह इन्द्र प्रतिष्ठाविधिमें सेवा करनेको आज्ञा करे उसी प्रमाण जैसा पहले अध्याय (नं० ९) में मण्डपाक्षाविधिमें कहा गया है।

चतुर्णिकायामरसंघ एष, आगत्य यज्ञे विधिना नियोगं ।
स्वीकृत्य भक्त्या हि यथार्हदेशे, सुस्था भवंत्वाह्निककल्पनायां ॥ ३२२ ॥
आयात मारुतसुराः पवनोद्भटाशा, संघट्टसंलमितनिर्मलनांतरीक्षाः ।
वात्यादिदोषपरिभूतवसुन्धरायां, प्रत्यूहकर्मनिखिल परिमार्जयन्तु ॥ ३२३ ॥

आयात वास्तुविधिपूरकृतसंनिवेशा, योग्यांशभागपरिपुष्टवपुः प्रदेशाः ।
अस्मिन् मखे रुचिरसुस्थितभूषणांके, सुस्था यथार्हविधिना जिनभक्तिभाजः ॥ ३२४ ॥
आयात निर्मलनभः कृतसंनिवेशा, मेघासुराः प्रमदभारनमच्छिरस्काः ।
अस्मिन्मखे कृतविकयया नितांते, सुस्था भवन्तु जिनभक्तिमुदाहरन्तु ॥ ३२५ ॥
आयात पावकसुराः सुरराजपूज्य, संस्थापनाविधिषु संस्कृतविक्रियार्हाः ।
स्थाने यथोचितकृते परिबद्धकक्षाः, मन्तु श्रियं लभत पुण्यसमाजभाजां ॥ ३२६ ॥
नागाः समाविशतभूतलसंनिवेशाः, स्वां भक्तिमुल्लसितगात्रतया प्रकाश्य ।
आशीविषादिकृतविघ्नविनाशहेतोः, स्वस्था भवन्तु निजयोग्यमहासनेषु ॥ ३२७ ॥
पुरुकृतदिशिस्थितिमेहि करोद्धृतकांचनदंडगखण्डरुचे ।
विधिना कुमुदेश्वरसव्यशाये धृतपंकजशंकितकङ्कणके ॥ ३२८ ॥
वामनाशुयमदिग्विभागतः स्थानमेहि जिनयज्ञकर्मणि ।
भक्तिभारकृतदुष्टनिग्रहः पूतशासनकृशामबंध्यकः ॥ ३२९ ॥
पश्चिमासु विततासु हरित्सु भूरिभक्तिभरभूकृतपीठाः ।
अंजनस्वहितकाम्यया त्वरे तिष्ठ विघ्नविलयं प्रणिणुधेहि ॥ ३३० ॥
पुष्पदन्तभवनासुरमध्ये त्वत्कृतोऽसि यत इत्थमवोचम् ।
उत्तरत्र मणिदण्डकराग्रस्तिष्ठ विघ्नविनिवृत्तिवि... ॥ ३३१ ॥
करकृतकुसुमानामंजलिं सवितीर्य धनदमणिसुररत्नानीशपूजार्थसार्थे ।
विकिर विकिर शीघ्रं भक्तिमुद्भावयित्वा निगदतु परमांके मंडपोर्ध्वाधकाशे ॥ ३३२ ॥

जलयात्रामें गाजेबाजेके साथ इन्द्र व आचार्य किसी नदी या सरोवर या कूएंपर जल भरने जावे। साथमें कलश १०८ या ५४ या २७ या २१ या ९ या ५ जितने संभव हों उतने, जो नारियलसे ढके हों, ऊपर केशरसे रंगा छन्ना हो, कलशोंके कंठमें फूलमालाएं सुशोभित हों, उनको शुद्ध केशरिया वस्त्र पहने हुए कुलीन स्त्रियां मस्तकपर रखके लेजावें, सामग्री साथ जावे। मार्गमें इन्द्र जब चले उस समयसे लेकर पहुंचने तक मार्गमें जाते आते नीचे लिखे मंत्रसे मंत्रितकर जो और सरसों बखेरता जाय जिसमें कोई विघ्न न हो व शांति रहे।

मंत्र—ॐ हूं क्षूं फट् किरिटि घातय२ परविघ्नान्स्फोटय२ सहस्रखंडान्कुरु२ परमुद्रा छिंद२ परमंत्रान् भिद२ क्षः क्षः हूं फट्स्वाहा।

जलस्थान पर जाकर किसी ऐसे तीर्थकी पूजा करे जो नदी व सरोवर तटपर हो। जैसे सिद्धवरकूट, पावापुरी, अथवा निर्वाणक्षेत्र पूजा या सिद्धपूजा करे फिर छानकर कलशोंसे जल भरे। लवंग चूरा या चन्दन मिलावे। वे ही स्त्रिया मस्तकपर रक्खे हुए मंडपमें लावे, यदि कहीं स्त्रिया न जासकें तो इन्द्र ही अधिक बने और वे ही कलश लावें, उनको विराजमान किया जावे। फिर इसी जलसे मंदिर या वेदीको धोकर शुद्ध किया जावे तब यह मंत्र पढा जावे। ॐ नीरजसे नमः। फिर जिस वेदीमें श्रीजीको विराजमान करना हो उसीके आगे एक उच्च पीठपर जिस मूर्तिको वेदीपर विराजमान करना हो लाकर स्थापित करे। उसीके आगे १७ कोठोंका वलययुत याग मंडल बनाया जावे। यदि न बने तौ भी पूजा हो सकती है। आगे एक चौखुटा कुण्ड या तीनो होमकुण्ड बनाए जावें। प्रतिमाजीको लानेके पहले जहांपर खड़े हो पूजन करे वहा डाभका आसन दर्पमथनाय नमः पढ़कर बिछावे. "शीलगंधाय नमः" यह मंत्र पढ़कर प्राशुक-जलसे छींटे। विमलाय नमः यह मत्र पढ़कर पुष्प चढ़ावे, "अक्षताय नमः" यह पढ़कर अक्षत चढ़ावे, "श्रुतधूपाय नमः" यह पढ़कर धूप देवे, "ज्ञानोद्योताय नमः" यह पढ़कर दीप चढ़ावे, "परमसिद्धाय नमः" यह पढ़कर नैवेद्य चढ़ावे, प्रतिमाको विराजमान करे, अभिषेक उसी जलसे करे जो लाया गया है। अभिषेककी विधि पहले कही जाचुकी है। जो विधि अभिषेककी व होमकी दूसरे अध्यायमें यागमण्डलकी पूजामें कही है उसी तरह करे। नित्यनियम व सिद्धपूजा करके सत्यजाताय नमः आदि पीठिकामन्त्रोंसे होम करे। पश्चात् १०८ आहुति उसी मंत्रसे देवे जो दूसरे अध्यायमें लिखी है। फिर स्तुति आदि पढ़े।

ध्वजा व कलश भी चढ़ाना होता है वे भी इसी समय प्रतिमाजीके पास स्थापित रहे। वेदीके ऊपर व मदिरके शिखरके ऊपर कलश व ध्वजा चढती है। पूजाके समय विनायक यंत्रको भी स्थापित करे। यदि न हो तैयार कराले या थालपर खींचले। मध्यमें ॐ लिखके पांच कोठेका वलय करना, उसमें अ सि आ उ सा लिखे। फिर १२ कोठेका वलय करके अरहन्त मंगलं आदि लिखना। उसको ह्रीं क्रौं से वेष्ठित करे। फिर इन्द्र सिद्धभक्ति पढ़े। फिर कायोत्सर्ग कर ९ दफे मंत्र पढ़े। फिर पढ़े—

ॐ जय जय जय, निस्सही, निस्सही, निस्सही, वर्धस्व, वर्धस्व, वर्धस्व, स्वस्ति, स्वस्ति, स्वस्ति, वर्द्धतां, जिनशासनं। णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरीयाणं, णमो उवज्झायाणं, णमोलोए सव्वसाहूणं। चत्तारि मंगलं, अरहंतमंगलं, सिद्धमंगलं, साहुमंगल, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा, अरहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहु लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहन्तसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहुसरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि।

फिर आचार्यभक्ति तथा श्रुतभक्ति पढ़े और कहें—

ॐ अद्य वेदीमण्डपप्रतिष्ठायां, तत्शुद्ध्यर्थं भावशुद्धये पूर्वं आचार्यभक्तिपूर्व कायोत्सर्गं करोम्यहं।

फिर यन्त्रकी पूजा करे।

अथ यंत्रपूजा

परमेष्ठिन्! मंगलादित्रय विघ्नविनाशने। समागच्छ तिष्ठ तिष्ठ मम सन्निहितो भव ॥ २६३ ॥

ॐ अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपरमेष्ठिन्! मंगल लोकोत्तम !! शरणभूत !!! अत्रावतर अवतर संवौषट् (आह्वाननं), अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (स्थापनं), अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (सन्निधिकरणं)

स्वच्छैर्जलैस्तीर्थभवैर्जरापमृत्युप्ररोगापनुदे पुरस्तात्।
अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥२६४॥

ॐ ह्रीं अद्य बिंबप्रतिष्ठोत्सवे वेदिकाशुद्धिविधाने अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुमंगललोकोत्तमशरणेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सच्चंदनैर्गंधहृतालिवृन्दचितैर्हिमांशुप्रसरावदातैः।
अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥चंदनं॥

सदक्षतैर्मौक्तिककांतिपाटच्चरैः सितैर्मानसनेत्रमित्रैः।
अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेहं ॥अक्षतं॥

पुष्पैरनेकैरसुवर्णगन्धप्रभासुरैर्वासितदिग्वितानैः।
अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ पुष्पं ॥

नैवेद्यपिंडैर्घृतशर्करात्तहविष्यभागैः सुरसाभिरामैः।
अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ नैवेद्यं ॥

आरार्तिकैरत्नसुवर्णरुक्मपात्रार्पितैर्ज्ञानविकाशहेतोः।
अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ दीपं ॥

आशासु यद्धूमवितानमृद्धं तैर्धूपवृन्दैर्दहनोपसर्पैः।
अर्हन्मुखान् पञ्चपदान् शरण्यान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ धूपं ॥

फलैरसालैर्वरदाडिमाद्यैर्हृद्घ्राणहार्यैरमलैरुदारैः।
अर्हन्मुखान् पंचपदान् शरण्यान्, लोकोत्तमान्मांगलिकान् यजेऽहं ॥ फलं ॥ २७१ ॥

द्रव्याणि सर्वाणि विधाय पात्रे, ह्यनर्घमर्घं वितरामि भक्त्या।
भवे भवे भक्तिरुदारभावाद्येषां सुखायास्तु निरन्तराया ॥ अर्घं ॥ २७२ ॥

अनादिसन्तानभवान् जिनेन्द्रानर्हत्पदेष्टानुपदिष्टधर्मान्।
द्वेधा श्रिया लिंगितपादपद्मान्, यजामि वेदीप्रकृतिप्रसत्त्यै ॥ २७३ ॥

ॐ ह्रीं उद्भिन्नानंतज्ञानगभस्तिसंदृष्टलोकालोकानुभावान् मोक्षमार्गप्रकाशनानन्तचिद्रूपविलासान् अर्हत्परमेष्ठिनः संपूजयामि स्वाहा अर्घं।

कर्माष्टनाशाच्च्युतभावकर्मोद्भूतीन् निजात्मस्वविलासभूपान्।
सिद्धाननंतांस्त्रिककालमध्ये, गीतान् यजामीष्टविधिप्रशक्त्यै ॥ २७४ ॥

ॐ ह्रीं द्विविधकर्मतांडवापनोदविलसत्साकारचिद्विलासवृत्तीन् निजाष्टगुणगणोद्घूर्णान् प्रगुणीभूतानंतमाहात्म्यान् लोकाग्रशिखरावस्थायिनः सिद्धपरमेष्ठिनोऽर्चयामि स्वाहा ॥ अर्घं ॥

ये पंचधाचारपरायणानामग्रेसरा दीक्षणशिक्षिकासु।
प्रमाणनिर्णीतपदार्थसार्थानाचार्यवर्यान् परिपूजयामि ॥ २७५ ॥

ॐ ह्रीं व्यवहाराचाराचारवत्त्वाद्यनेकगुणमणिभूषितोरस्कान् संघप्रतिपालनाचार्यवर्यान् परिपूजयामि स्वाहा ॥ अर्घं ॥

अर्थश्रुतं सत्यविबोधनेन, द्रव्यश्रुतं ग्रन्थविदर्भनेन।
येऽध्यापयंति प्रवरानुभावास्तेऽध्यापका मेऽर्हणया दुहन्तु ॥ २७६ ॥

ॐ ह्रीं द्वादशांगश्रुताबुधिपारंगतान् परिप्राप्तपदार्थस्वरूपान् उपाध्यायपरमेष्ठिनः पूजयामि स्वाहा ॥ अर्घं ॥

द्विधा तपोभावनया प्रवीणान्, स्वकर्मभूमिप्रविखण्डनेषु।
विविक्तशय्यासनहर्म्यपीठस्थितान् तपस्विप्रवरान् यजामि ॥ २७७ ॥

ॐ ह्रीं घोरतपश्चरणोद्युक्तप्रयासभासमानान् स्वकारुण्यपुण्यपुण्यागण्यपण्यरत्नालकृतपादान् साधुपरमेष्ठिनः पूजयामि स्वाहा ॥ अर्घं ॥

अर्हन्मङ्गलमर्चे सुरनरविद्याधरैकपूज्यपदं। तोयप्रभृतिभिरर्घैर्विनीतमूर्ध्नो शिवाप्तये नित्यं ॥ २७८ ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलाय अर्घम्।

ध्रौव्योत्पादविनाशरूपाखिलवस्तुजाननार्थकरं। सिद्धंमंगलमितिवा मत्वार्चे चाष्टविधवस्तुभिः ॥ २७९ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धमंगलायार्घं।

यद्दर्शनकृतविभवाद् रोगोपद्रवगणा मृगा इव मृगेंद्रात्। दूरं भजंति देशं साधुश्रेयोऽर्च्यंते विधिना ॥२८०॥

ॐ ह्रीं साधुमंगलार्घं।

केवलिमुखावगतया वाण्या निर्दिष्टभेदधर्मगणं । मत्वा भवसिंधुतरीं प्रयजे तन्मंगलं शुद्ध्यै ॥ २८१ ॥
ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तिधर्ममङ्गलायार्घं ।
लोकोत्तममथ जिनराड् पदाब्जसेवनममितदोषविलयाय । शक्तं मत्वा धूनये जलगंधैरीडितुं प्रभवे ॥
ॐ ह्रीं अर्हंतलोकोत्तमायार्घं ।
सिद्धाश्च्युत दोषमला लोकाग्रं प्राप्य शिवसुखं व्रजिताः । उत्तमपथगा लोके तानर्चे वसुविधार्चनया ॥
ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमायार्घं ।
इंद्रनरेंद्रसुरेंद्रैरर्थिततपसां व्रतैषिणां सुधियां । उत्तमपंथानमम विचेऽर्हं सलिलगंधमुखैः ॥२८४॥
ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमेभ्यः अर्घं ।
रागपिशाचविमर्दनमत्र भवे धर्मधारिणाममतुलम् । उत्तममवातिकामो वृषमर्चे शुचितरं कुसुमैः ॥२८५॥
ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तिधर्माय लोकोत्तमायार्घं ।
अर्हच्चरणमथार्चेऽनंतजनुष्वपि न जातु संप्राप्त । नर्तनगानादिविधिमुद्दिश्याष्टकर्मणां शांत्यै ॥२८६॥
ॐ ह्रीं अर्हंतशरणायार्घं ।
निर्व्याबाधगुणादिक प्राप्यं शरणं समेतचिदनंतं । सिद्धानाममूर्तानां भूत्यै पूजेयमशुभहान्यर्थम् ॥२८७॥
ॐ ह्रीं सिद्धशरणायार्घं ।
चिदचिद्भेदं शरणं लौकिकमाप्यं प्रयोजनातीतं । त्यक्त्वा साधुजनानां शरणं भूत्यै यजामि परमार्थम् ॥
ॐ ह्रीं साधुशरणायार्घं ।
केवलिनाथमुखोद्गतधर्मः प्राणिसुखहितार्थमुद्दिष्टः । तत्प्राप्त्यै तद्यजनं कुर्वे मखविघ्ननाशाय ॥ २८९ ॥
ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मशरणायार्घं ।

औषधीरसबलर्द्धि तपःस्था क्षेत्रबुद्धिकलिताः क्रिययाढ्याः ।
विक्रयर्धिमहिताः प्रणिधानप्राप्तसंस्तुतितटा मुनिपूज्याः ॥ २९० ॥
केवलावधिमनः प्रसरांगाः बीजकोष्ठमतिभाजनशुद्धाः ।
वीतरागमदमत्सरभावा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९१ ॥
यद्वचोऽमृतमहांनदमग्ना जन्मदाहपरितापमपास्य ।
निर्वृत्तुः सुखसमाजतटेषु बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९२ ॥

श्रोत्रभिन्नमतयः पदपंथाः दृष्टसंस्मृतपदार्थविभावाः।
तत्त्वसंकलितधर्म्यसुशुक्लाः बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९३ ॥
स्पर्शनश्रवणलोकनबुद्धाः घ्राणसंस्थरसनोपकृता ये।
दूरतोऽप्यनुभवं समाप्ता बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९४ ॥
छिन्नस्वर्यविधिना चतुर्दश दिग्सुपूर्वमतिना निमित्तगाः।
वादिबुद्धकृतिनो मतिश्रुताः बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९५ ॥
अष्टधोक्तदशधाभिद्या ये बुद्धिवृद्धिसहिताः शिवयत्नाः।
विप्रमलादिगदहापनदेशा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९६ ॥
दृष्टिवक्त्रमनसां विषभक्ति प्रीणिनाः श्रुतसरित्पतिपुष्टाः।
लोकमंगलिषु सन्यसिता ये बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९७ ॥
वाक्यमानसबलेन समग्राः उग्रदीप्ततपसस्त्रिकगुप्ताः।
घोरवीर्यगुणभावितचित्ता बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९८ ॥
दुग्धमध्वमृतभोजनकृत्याः सर्पिषाश्रववचोऽभिनियुक्ताः।
अणवलाघवशित्वविदर्भा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ २९९ ॥
कामरूपगुरुताप्रतिसर्पीनर्द्धहीनवसतिगृहयुक्ताः।
चारणा जलफलाग्निसूत्रा बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ ३०० ॥
आत्मशक्तिविभवागतसर्वपौद्‌गलीय ममताऽच्युतवस्त्राः।
सत्परीषहभटार्दनदास्ते बोधिलाभमनघाः प्रदिशन्तु ॥ ३०१ ॥

ॐ ह्रीं अष्टप्रकारषकलर्द्धिप्राप्तेभ्यो मुनिभ्योऽर्घम्।

चेसितुंवृषभसेनपुरस्सरा ये, सिंहादिसेनपुरतोऽजिततीर्थभर्तुः।
श्रीसम्भवस्य किल चारुविसेनमुख्यास्तुर्यस्य वज्रधरमुख्यगणाधिराजाः ॥ ३०२ ॥
कोकध्वजस्य चमराधिपपूर्वगाः स्युः, पद्मप्रभस्य कुलिशादिपुरःस्थिताश्च।
श्रीसप्तमस्य बलमुख्यकृताः पुराणे, चन्द्रप्रभस्य शमिनः खलु दत्तमुख्याः ॥ ३०३ ॥

मकरांकितो गणभृतश्च विदभमुख्याः, श्रीसीतलस्य गणया अनगारगण्याः ।
श्रेयो जिनस्य निकटे ध्वनि कुन्थपूर्वा, धर्मोद्यो गणधरा वसुपूज्यसूनोः ॥ ३०४ ॥
मेर्वादयश्च विमलेशितुरुद्धबुद्धया, जय्यार्थनामभरणाश्चतुर्दशस्य ।
धर्मस्य भांति शमिनः सदरिष्टमूलाश्चक्रायुधप्रभृतयः खलु शांतिभर्त्तुः ॥ ३०५ ॥
कुन्थुप्रभोर्यमभृतः कथिताः स्वयंभूवर्याः पुनन्त्वरविभोः स्मृतकुम्भमान्याः ।
मल्लेर्विशाखमुनयो मुनिसुव्रतस्य, मल्लिप्रवेकगणता नमिभर्तुरिष्टाः ॥ ३०६ ॥
सप्तर्द्धिपूजितपदा सुप्रभासमुख्या, नेमिश्वरस्य वरदत्तमुखा गणेशाः ।
पार्श्वप्रभो स्वयमितः सुमर्वोतनाम्ना, वीरस्य गौतममुनींद्रमुखाः पुनन्तु ॥ ३०७ ॥
एभ्योऽर्घ्यपाद्यमिह यज्ञधरावनार्थं, दत्तं मया विलसतां शुचिवेदिकायां ।
पुष्पांजलिप्रकरतुंदिलमाज्यपात्र, मुत्तारयामि मुनिमान्यचरित्रभक्त्या ॥ ३०८ ॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरगणधरेभ्यस्त्रिपञ्चाशत्सहित चतुर्दशशतसंख्येभ्यश्चरुपात्रमग्रे कृत्वाऽर्घमुत्तारयामि स्वाहा ।

इन्द्रभूतिरग्निभूति, र्वायुभूतिः सुधर्मकः । मौर्यमौण्ड्यौ पुत्रमित्रावकम्पनसुनामधृक् ॥ ३०९ ॥

ॐ ह्रीं गौतमादि एकादशमुनिभ्योऽर्घं ।

अन्धवेलः प्रभासश्च, रुद्रसंख्यान् मुनीन् यजे । गौतमं च सुधर्मं च, जम्बूस्वामिनमूर्ध्वगम् ॥ ३१० ॥

ॐ ह्रीं अत्यकेवलित्रयायार्घं ।

श्रुतकेवलिनोऽन्यांश्च, विष्णुनन्द्यपराजितान् । गोवर्धनं भद्रबाहुं, दशपूर्वधरं यजे ॥ ३११ ॥

ॐ ह्रीं श्रुतकेवलिनोऽर्घं ।

विशाखप्रोष्ठिलनक्षत्र, जयनागपुरस्सरान् । सिद्धार्थधृतिषेणाह्वौ, विजय बुद्धिबलं तथा ॥ ३१२ ॥
गंगदेवं धर्मसेनमेकादश तु सुश्रुतान् । नक्षत्रं जयपालाख्यं, पांडुं च ध्रुवसेनकम् ॥ ३१३ ॥

ॐ ह्रीं कतिचिदङ्गधारिभ्योऽर्घं ।

कंसाचार्यं पुरोंगीगज्ञातारं प्रयजेऽर्हं । सुभद्रं च यशोभद्रं, भद्रबाहुं मुनीश्वरम् ॥ ३१४ ॥
लोहाचार्यं पुरा पूर्वज्ञानचक्रधरं नमः । अर्हद्बलिं भूतबलिं, माघनन्दिनमुत्तमम् ॥ ३१५ ॥
धरसेनं मुनींद्रं च, पुष्पदन्तसमाह्वयं । जिनचन्द्रं कुन्दकुन्दमुमास्वामिनमर्थये ॥ ३१६ ॥

ॐ ह्रीं ऐदंयुगीनदीक्षाचरणधुरंधरनिर्ग्रंथाचार्यवर्यान् वेदीप्रतिष्ठाने संस्थाप्याष्टविधार्चनं करोमि स्वाहा ।

निर्ग्रंथान् बकुशान् पुलाककुशलान्, किंशीलनिर्ग्रंथकान् ।
मूलस्वोत्तरसद्गुणाबधूतस्वाः, किंचित्प्रकारं गतान् ॥
वन्दित्वा जिनकल्पसूत्रितपदान्, प्रध्वस्तपापोदयान् ।
वेदीशुद्धिविधिं ददन्तु मुनयो, स्वर्घेण संपूजिताः ॥ ११७ ॥

ॐ ह्रीं पुलाकबकुशकुशीलनिर्ग्रंथस्नातकपदधरत्रिकन्यूनैनककोटिसंख्यमुनिवरेभ्योऽर्घं ।

फिर ९ दफे णमोकार मन्त्र पढ़कर कलश व ध्वजाके ऊपर पुष्प डालना । फिर १०८ दफे णमोकार मन्त्र जपकर नीचे लिखा मन्त्र पढ़ वेदी तथा मंदिरके शिखरपर कलश व ध्वजा चढ़ावे ।

ॐ णमो अरहंताण स्वस्ति भद्रं भवतु सर्वलोकस्य शांतिर्भवतु स्वाहा ।

मन्दिरके ऊपरकी ध्वजा—१२ अंगुल लम्बी व ८ अंगुल चौड़ी हो, कपड़ा लाल व पीला हो । उसमें चन्द्रमा, माला, नक्षत्र, आदिका चिह्न हो । तथा कलश, सातिया, दीपदण्ड, छत्र, चमर, धर्मचक्र लिखकर ध्वजाके ऊपर जिनबिम्ब हो । ऊपर छत्र हो । ध्वजामें अशोक आदि वृक्षका चिह्न भी हो । जो ध्वजा मंदिरजीके शिखरपर चढ़ाई जावे उसका दंड मंदिरकी ऊँचाईसे चौथाई हो तो ठीक हो अथवा शोभाके अनुसार हो । ध्वजा चढ़ाते समय बाजे बजे व जयजयकार शब्द हो । फिर वेदीपर मातृकायन्त्रको केशरसे लिखे । यह मन्त्र छठे अध्यायमें नं० (२) में दिया हुआ है तथा मन्त्र भी वहीं लिखा है उसको १०८ बार जपे । वेदी उस समय चमर छत्रादिसे सुशोभित की जावे, बाजे बजते रहें । तथा जयजयकार शब्दके बीचमें प्रतिमाजीको वेदीपर विराजमान करे । वेदीकी भीतपर केशरके साथिये पहलेसे किये जावें । यदि मातृकायन्त्र नहीं लिख सके तो श्री लिखले व १०८ दफे णमोकार मन्त्र जपले । फिर मूलनायक तीर्थंकरकी पूजा बड़ी भक्तिसे की जावे । पूजाके पीछे आचार्य यह प्रबन्ध करा दे कि मन्दिर या वेदीका जीर्णोद्धार किस तरह होगा व नित्य पूजापाठमें अन्तर न पड़े । मुख्य प्रतिष्ठा करानेवालेको पूजा आदिका यथासंभव नियम दिलावे तथा चार दान करनेके लिए कहे व अन्य भाइयोंको भी दानके लिए कहे । इस समय भजनादि हों व याचकोंको दान दिया जावे । गरीबोंको भोजन कराया जावे तथा यदि सामर्थ्य हो तो संघका भोजनसत्कार किया जावे ।

(२) किसी भी नए कार्यमें जैसे गृह प्रवेश या विवाहादि-उसमें यथायोग्य विधिके साथ यन्त्र या प्रतिमाका अभिषेक करके सत्यजाताय नमः आदिसे होम करके वही १७ वलयवाली पूजा जो वेदीप्रतिष्ठामें लिखी है की जावे । यह मंगलीक पूजा है, हर मंगल कार्यमें करने योग्य है ।

(३) जब कोई नया ग्रन्थ तैयार हो व लिखा जावे तो उसकी विशेष पूजा जेठ सुदी ५ या श्रुतपंचमीकेदिन कीजावे। श्रुतभक्ति पढ़कर श्रुतपूजा हो । फिर शास्त्र पढ़कर सुनाया जावे ।

अध्याय बारहवाँ ।

भक्तियां आदि ।

अथ सिद्धभक्तिः ।

असरीरा जीवघना उवजुत्ता, दंसणेय णाणेय । सायारमणायारा, लक्खणमेयंतु सिद्धाणं ॥ १ ॥
मूलोत्तरपयडीणं बन्धोदयसत्तकम्मउम्मुक्का । मंगलभूदा सिद्धा, अट्ठगुणा तीदसंसारा ॥ २ ॥
अट्ठवियकर्मविघडा सीदीभूता णिरंजणा णिचा । अट्ठगुणा किदकिचा, लोयग्गणिवासिणो सिद्धा ॥ ३ ॥
सिद्धा णट्ठट्ठमला विसुद्धबुद्धो य लद्धिसब्भावा । तिहुअणसिरिसेहरया, पसियन्तु भडारया सव्वे ॥ ४ ॥
गमणागमणविमुक्के, विहडियकम्मपयडिसंघारा । सासहसुहसंपत्ते ते, सिद्धा वंदियो णिच्चं ॥ ५ ॥
जयमगलभूदाणं विमलाणं, णाणदंसणमयाणं । तइलोइसेहराणं, णमो सदा सव्वसिद्धाणं ॥ ६ ॥
सम्मत्तणाणदंसणवीरियसुहुमं, तहेव अवगहणं । अगुरुलघु अव्वाबाहं, अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ॥ ७ ॥
तवसिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे, चरित्तसिद्धे य । णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे, सिरसा णमस्सामि ॥ ८ ॥

इच्छामि भंते सिद्धभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ, सम्मणाणसम्मदंसणसम्मचरित्तजुत्ताणं, अट्ठविहकम्मुक्काणं अट्ठगुणसम्पण्णाणं, उड्ढलोयमच्छयम्मि, पयड्ढियाणं तवसिद्धाणं णयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं चरित्तसिद्धाणं, सम्मणाणसम्मदंसणसम्मचरित्तसिद्धाणं, तीदाणागदवट्टमाणकालत्तयसिद्धाणं सव्वसिद्धाणं वन्दामि, णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिण गुणसम्पत्तिहोउमज्झं ।

इति पूर्वाचार्यानुक्रमेण भावपूजास्तवसमेतं कायोत्सर्गं करोमि ।

अथ श्रुतभक्तिः ।

अर्हद्वक्त्रप्रसूतं गणधररचितं, द्वादशांगं विशालं, चित्रं बह्वर्थयुक्तं मुनिगणवृषभैर्धारितं बुद्धिमद्भिः ।
मोक्षाग्रद्वारभूतं व्रतचरणफलं, ज्ञेयभावप्रदीपं, भक्त्या नित्यं प्रवन्दे, श्रुतमहमखिलं सर्वलोकैकसारम् ॥१॥
जिनेंद्रवक्त्रप्रविनिर्गतं वचो, यतींद्रभूतिप्रमुखैर्गणाधिपैः ।
श्रुतं धृतं तैश्च पुनः प्रकाशितं, द्विषट्प्रकारं प्रणमाम्यहं श्रुतं ॥ २ ॥

कोटीशतं द्वादश चैव कोट्यो, लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव ।
पंचाशदष्टौ च, सहस्रसंख्यमेतच्छ्रुतं पंच पदं नमामि ॥ ३ ॥
अंगबाह्यश्रुतोद्भूतान्यक्षराण्यक्षराञ्जये । पंचसप्तैकमष्टौ च दशाशीतिं समर्चये ॥ ४ ॥
अरहतभासियत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सम्मं । पणमामि भत्तिजुत्तो सुदणाणमहोवहिं सिरसा ॥ ५ ॥

इच्छामि भन्ते सुदभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ अंगोवंगपइण्णयपाहुडपरियम्मसुत्तपढमाणिओय पुव्वगयचूलिया चेव सुत्तत्थयत्थुइधम्मकहाइयं सुद णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वन्दामि णमस्सामि दुक्खखओ कम्मखओ बोहिलाओ सुगइगमणं सम्मं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

अथ चारित्रभक्तिः ।

संसारव्यसनाहतिप्रचलिता, नित्योदयप्रार्थिनः । प्रत्यासन्नविमुक्तयः सुमतयः शांतैनसः प्राणिनः ।
मोक्षस्यैव कृतं विशालमतुलं सोपानमुच्चैस्तरा–मारोहंतु चरित्रमुत्तममिदं, जनेंद्रमोजस्विनः ॥ १ ॥
तिलोए सव्वजीवाणं हियं, धम्मोवदेसणं । वड्ढमाणं महावीर, वन्दित्ता सव्ववेदिनं ॥ २ ॥
घाइकम्मविघातत्थं, घाइकम्मविणासिणा । भासियं भव्वजीवाणं, चारित्तं पंचभेददो ॥ ३ ॥
सामायियं तु चारित्तं, छेदोवट्ठावणं तहा । तं परिहारविसुद्धिं च, संयमं सुहमं पुणो ॥ ४ ॥
जहाखायं तु चारित्तं तहाखायं तु तं पुणे । किचाहं पंचहाचारं, मङ्गलं मलसोहणं ॥ ५ ॥
अहिंसादीणि वुत्तानि, महव्वयाणि पञ्च य । समिदीओ तदो पञ्च, पञ्चेन्द्रियणिग्गहो ॥ ६ ॥
छब्भेयावासभूसिज्जा, अण्हाणत्तमचेलदा । लोयत्तं ठिदिभुत्तिं च, अदन्तवणमेव च ॥ ७ ॥
एयभत्तेण संजुत्ता, रिसिमूलगुणा तहो । दसधम्मा तिगुत्तीओ, सीलाणि सयलाणि य ॥ ८ ॥
सव्वे वि य परीसहा, वुत्तुत्तरगुणा तहा । अण्णे वि भासिया सन्ता, तेसिंहाणीमयेकया ॥ ९ ॥
जइ रागेण दोसेण, मोहेण णदरेण वा । वन्दित्ता सव्वसिद्धाणं, सजुहा सामुमुक्खुण ॥ १० ॥ (?)
संजदेण भए सम्मं, सव्वसंजमभाविणा । सव्वसंजमसिद्धीओ, लब्भदे मुत्तिजं सुहं ॥ ११ ॥
धम्मो मंगलमुक्किट्ठ अहिंसासंजमो तओ । देवा वि तस्स पणमंति, जस्स धम्मे सया मणो ॥ १२ ॥

इच्छामि भन्ते चारित्तभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ सम्मणाणजोयस्स सम्मत्ताहिट्ठियस्स

सव्वपहाणस्स णिव्वाणमग्गस्स संजमस्स कम्मणिज्जरफलस्स खमाहरस्स पञ्चमहव्वयसंपण्णस्स तिगुत्ति-गुत्तस्स पञ्चसमिदिजूत्तस्स णाणज्झाणसाहणस्स समयाइपवेसयस्स सम्मचरित्तस्स सदाणिच्चकालं अंचेमि पूजेमि बन्दामि णमंसामि दुक्खखओ कम्मखओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण सम्पत्ति होउ मज्झं ।

अथ आचार्यभक्तिः ।

देसकुलजाइसुद्धा विसुद्धमणवयणकायसंजुत्ता । तुम्हं पायपयोरुहमिह मङ्गलत्थि मे णिच्चम् ॥ १ ॥
सगपरसमयविदूएहु आगमहेदूहिं चावि जाणित्ता । सुसमच्छा जिणवयणे विणएसुत्ताणुरूवेण ॥ २ ॥
बालगुरुवुड्ढसेहे गिलाणथेरेयखमणसंजुत्ता । अट्ठावयगअण्णे दुस्सीले चावि जाणित्ता ॥ ३ ॥
वयसमिदिगुत्तिजुत्ता मुत्तिपहे ठावया पुणो अण्णे । अज्झावयगुणाणिलया साहुगुणेणावि संजुत्ता ॥४॥
उत्तमखमाइपुढवा पसण्णभावेण अच्छजलसरिसा । कम्मिंधणदहणादो अगणी वाऊ असंगादो ॥ ५ ॥
गयणमिव णिरुवलेवा अक्खोहा सायरुव्व मुनिवसहा । एरिसगुणणिलयाणं पाय पणमामि सुद्धमणो ॥६॥
संसारकाणणे पुण बंभममाणेहिं भव्वजीवेहिं । णिव्वाणस्स दु मग्गो लद्धो तुम्हं पसाएण ॥ ७ ॥
अविसुद्धलेसरहिया विसुद्धलेसेहिं परिणदा सुद्धा । रुदट्टे पुणचत्ता धम्मे सुक्के य संजुत्ता ॥ ८ ॥
ओग्गहईहावायाधारणगुणसम्पएहिं संजुत्ता । सुत्तत्थभावणाए भावियमाणेहिं वन्दामि ॥ ९ ॥
तुम्हे गुणगणसंथुदि अयाणमाणेण जं मए वुत्ता । दितु मम बोहिलाइ गुरुभत्तिजुदत्थओ णिच्चं ॥ १० ॥

इच्छामि भन्ते आयरियभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ सम्मणाणसम्मदंसणसम्मचरित्त-जुत्ताणं पंचविहाराणं आयरियाणं आयारादिसुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं तिरयणगुणपालणरयाणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वन्दामि णमस्सामि दुक्खखओ कम्मखओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

अथ योगभक्तिः ।

थोसामि गणधराणं अणयाराणं गुणेहिं तचेहिं । अंजुलिमउलियहत्थो अहिवन्दन्तो सविभवेण ॥ १ ॥
सम्मं चेव य भावे मिच्छाभावे तहे व बोद्धव्वा । चइऊण मिच्छभावे सम्मामि उवट्ठिदे वन्दे ॥ २ ॥
दोदोसविप्पमुक्के तिदण्डविरदे तिसल्लपरिसुद्धे । तिण्णियगारवरहिए तियरणसुद्धे णमस्सामि ॥ ३ ॥

चउविहकसायमहणे चउगइसंसारगमणभयभीए। पञ्चासवपडिविरदे पंचेन्दियणिज्जदे वन्दे ॥ ४ ॥
छज्जीवदयावण्णे छडायदणविवज्जिये समिदभावे। सत्तभयविप्पमुक्के सत्ताणभयंकरे वन्दे ॥ ५ ॥
णट्ठमयट्ठाणे पणट्ठकम्मट्ठणट्ठसंसारे। परमट्ठणिट्ठिमट्ठे अट्ठगुणट्ठीसरे वन्दे ॥ ६ ॥
णवबंभचेरगुत्त णवणयसब्भावजाणगे वन्दे। दसविहधम्मट्ठाई दससंजमसंजुदे वन्दे ॥ ७ ॥
एयारसंगसुदसायरपारगे बारसंगसुदणि उणे। बारसविहतवणिरदे तेरसकिरयापडे वन्दे ॥ ८ ॥
भूदेसु दयावण्णे चउदस चउदस सुगन्थपरिसुद्धे। चउदसपुव्वपगब्भे चउदसमलवज्जिदे वन्दे ॥ ९ ॥
वन्दे चउत्थभत्तादिजावछम्मासखवणिपडिपुण्णे। वंदे आदावन्ते सूरस्स य अहिमुहट्ठिदे सूरे ॥ १० ॥
बहुविहपडिमट्ठाई णिसेज्जवीरासणोज्झवासीयं। अणिट्ठु अकुडुम्बदीये चत्तदेहे य णमस्सामि ॥११॥
ठाणियमोणवदीए अब्भोवासी य रुक्खतूलीय। धुदकेसमंसु लोमे णिप्पडियम्मे य वन्दामि ॥ १२ ॥
जल्लमललित्तगत्ते वन्दे कम्ममलकलुसपरिसुद्धे दीहणहणमंसु लोये तवसिरिभरिए णमस्सामि ॥ १३ ॥
णाणोदयाहिसित्ते सीलगुणविहूसिये तवसुगन्धे। ववगयरायसुदट्ठे सिवगइपहणायगे वन्दे ॥ १४ ॥
उग्गतवे दित्ततवे तत्ततवे महातवे य घोरतवे। वन्दामि तवमहंते तवसंजमइड्ढिसम्पत्ते ॥ १५ ॥
आमोसहिएखेलोसहिएजल्लोसहिए तवसिद्धे। विप्पोसहिए सव्वोसहिए वन्दामि तिविहेण ॥ १६ ॥
अमयमहुखीरसप्पी सवी अक्खीण महाणसे वन्दे। मणबलिवचबलिकायबलिणो य वंदामि तिविहेण ॥
वरकुट्ठबीयबुद्धी पदाणुसारीयसंभिण्णसोयारे। उग्गहईहसमत्थे सुतत्थविसारदे वन्दे ॥ १८ ॥
आभिणिबोहियसुदई ओहिणाणमणणाणि सव्वणाणीय। वन्दे जगप्पदीवे पच्चक्खपरोक्खणाणीय ॥१९
आयासततुजलसेढिचारणे जंघचारणे वन्दे। विउव्वणइड्ढिहाणे विज्जाहरपण्णसमणे य ॥ २० ॥
गइचउरंगुलगमणे तहेव फलफुल्लचारणे वन्दे। अछुवमतवमहंते देवासुरवन्दिदे वन्दे ॥ २१ ॥
जियभयजियउवसग्गे जियइंदियपरिसहे जियकसाये। जियरायदोसमोहे जियसुहदुक्खे णमस्सामि ॥
एवमए अभित्थुआ अणयारा रायदोसपरिसुद्धा। संघस्स वरसमाहिं मज्झवि दुक्खक्खयं दिंतु ॥२२॥

इच्छामि भन्ते जोगभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ अड्ढाइजजीवदोवसमुद्देसु पण्णरसकम्मभूमीसु आदावणरुक्खमूल अब्भोवासठाणमोणवीरासणेक्कपासकुक्कडासणचउत्थपक्खखवणादिजोगजुत्ताणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वन्दामि णमंस्सामि दुक्खक्खय कम्मक्खय बोहिलाहो सुगइगमण सम्म समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ॥ २५ ॥

अथ निर्वाणभक्ति पाठः ।

अट्ठावयम्मि उसहो चम्पाए वासुपुज्ज जिणणाहो । उज्जन्ते णेमिजिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ॥ १ ॥
वीसं तु जिणवरिंदा अमरासुरवन्दिदा धुदकिलेसा । सम्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ २ ॥
वरदत्तो य वरङ्गो सायरदत्तो य तारवरणयरे । आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ३ ॥
णेमिसामि पज्जण्णो संवुकुमारो तहेव अणिरुद्धो । बाहत्तरकोडीओ उज्जन्ते सत्तसया सिद्धा ॥ ४ ॥
रामसुवा वेण्णि जणा लाडणरिंदाण पंचकोडीओ । पावागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ५ ॥
पंडुसुआ तिण्णिजणा दविडणरिंदाण अट्ठकोडीओ । सेत्तुंजयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ६ ॥
सन्ते जे बलभद्दा जदुवणरिंदाण अट्ठकोडीओ । गजपन्थे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ७ ॥
रामहणू सुग्गीओ गवयगवाक्खो य णीलमहाणीलो । णवणवदीकोडीओ तुङ्गीगिरिणिव्वुदे वन्दे ॥ ८ ॥
णंगाणंगकुमारा कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया । सुवणागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ९ ॥
दहमुहरायस्स सुवा कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया । रेवाउहयतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १० ॥
रेवाणइए तीरे पच्छिमभायम्मि सिद्धवरकूडे । दो चक्की दह कप्पे आहुट्ठयकोडिणिव्वुदे वन्दे ॥ ११ ॥
बड़वाणीवरणयरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे । इंदजीदकुम्भयण्णो णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १२ ॥
पावागिरिवरसिहरे सुवण्णभद्दाइमुणिवरा चउरो । चलणाणईतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १३ ॥
फलहोडीवरगामे पच्छिमभायम्मि दोणगिरिसिहरे । गुरुदत्ताइमुणिंदा णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १४ ॥
णायकुमारमुणिंदो वालि महावाली चेव अज्झेया । अट्ठावयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १५ ॥
अचलपुरवरणयरे ईसाणे भाए मेढगिरिसिहरे । आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १६ ॥
वंसत्थलवरणियरे पच्छिमभायम्मि कुन्थुगिरिसिहरे । कुलदेसभूसणमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १७ ॥
जसरहरायस्स सुआ पंचसयाइं कलिंगदेसम्मि । कोडिसिलाकोडिमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १८ ॥
पासस्स समवसरणे सहिया वरदत्तमुणिवरा पंच । रिसिंदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १९ ॥

इच्छामि भंते परिणिव्वाणभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ इमम्मि अवसप्पिणीए चउत्थसमयस्स पच्छिमे भागे आहुट्ठमासहीणे वासचउक्कम्मि सेसकालम्मि पावाए णयरीए कत्तियमासस्स किण्हचउद्दसिए रत्तीए सादीए णक्खत्ते पच्चूसे भयवदोमहदि महावीरो वड्ढमाणो सिद्धिगदो तीसुवि लोएसु भवणवासियवाणवितरजोइसिय कप्पवासिय त्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण

धुवेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ण्हाणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमंसंति परिणिव्वाणमहाकल्लाणपुज्जं करंति अहमवि इहसंतो तत्थ सत्ताइ णिच्चकालं अच्चेमि पूजेमि बंदामि णमंस्सामि परिणिव्वाण महाकल्लाणपुज्जं करेमि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमण सम्मं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

अथ तीर्थंकरभक्तिः ।

चउवीसं तीत्थयरे उसहाईवीरपच्छिमे वन्दे । सव्वेसिं मुणिगणहरसिद्धे सिरसा णमंसामि ॥ १ ॥
ये लोकेष्टसहस्रलक्षणधरा ज्ञेयार्णवांतगता । ये सम्यग् भवजालहेतुमथनाश्चन्द्रार्कतेजोधिकाः ॥
ये साध्विन्द्रसुराप्सरोगणशतैर्गीतप्रणुत्यार्चिताः । तान्देवान्वृषभादिवीरचरमान्भक्त्या नमस्याम्यहम् ॥ २ ॥
नाभेयं देवपूज्यं जिनवरमजितं सर्वलोकप्रदीपं । सर्वज्ञं सम्भवाख्यं मुनिगणवृषभं नन्दनं देवदेवम् ॥
कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं वरकमलनिभं पद्मपुष्पाभिगन्धं । क्षांतं दांतं सुपार्श्वं सकलशशिनिभं चंद्रनामानमीडे ॥३॥
विख्यातं पुष्पदन्तं भवभयमथनं शीतलं लोकनाथं । श्रेयांसं शीलकोशं प्रवरनरगुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यम् ॥
मुक्तं दान्तेन्द्रियाश्वं विमलमृषिपतिं सिंहसैन्यं मुनींद्रं ।
धर्मं सद्धर्मकेतुं शमदमनिलयं स्तौमि शांतिं शरण्यम् ॥ ४ ॥
कुन्थुं सिद्धालयस्थं श्रमणपतिमरं त्यक्तभोगेषुचक्रम् ।
मल्लिं विख्यातगोत्रं खचरगणनुतं सुव्रतं सौख्यराशिम् ॥
देवेन्द्रार्च्यं नमीशं हरिकुलतिलकं नेमिचन्द्रं भवांतम् ।
पार्श्वं नागेन्द्रवन्द्यं शरणमहमितो वर्द्धमानं च भक्त्या ॥ ५ ॥

इच्छामि भंते चउवीसतित्थयरभक्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं । पंचमहाकल्लाणसम्पण्णाणं, अट्ठमहापाडिहेरसहियाणं, चउतीस-अतिसयविसेससंजुत्ताणं, बत्तीसदेविंदमणिमउडमत्थयमहियाणं, बलदेववासुदेवचक्कहररिसिमुणिजइ अणगारोवगूढाणं, थुइसयसहस्सणिलयाणं, उसहाइवीरपच्छिममंगलमहापुरिसाण णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं ।

अथ शांतिभक्तिपाठः ।

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन्पादद्वयं ते प्रजाः । हेतुस्तत्र विचित्रदुःखनिचयः संसारघोरार्णवः ॥
अत्यन्तस्फुरदुग्ररश्मिनिकरव्याकीर्णभूमण्डलो । ग्रैष्मः कारयतीन्दुपादसलिलच्छायानुरागं रविः ॥ १ ॥

क्ष्वेडाशीविषदष्टदुर्जयविषज्वालावलीविक्रमो । विद्याभेषजमन्त्रतोयहवनैर्याति प्रशांतिं यथा ॥
तद्वत्ते चरणारुणांबुजयुगस्तोत्रोन्मुखानां नृणाम् । विघ्नाः कायविनायकाश्च सहसा शाम्यंत्यहो विस्मयः ॥२॥
संतप्तोत्तमकांचनक्षितिधरश्रीस्पर्द्धिगौरद्युते । पुंसां त्वच्चरणप्रणामकरणात्पीडाः प्रयान्ति क्षयं ॥
उद्यद्भास्करविस्फुरत्करशतव्याघातनिष्कासिता । नानादेहिविलोचनद्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी ॥ ३ ॥
त्रैलोक्येश्वरमंगलब्धविजयादत्यंतरौद्रात्मकान् । नानाजन्मशतांतरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः ॥
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना कालोग्रदावानला । न्न स्याच्चेत्तव पादपद्मयुगलस्तुत्यापगावारणम् ॥ ४ ॥
लोकालोकनिरन्तरप्रविततज्ञानैकमूर्ते विभो ! नानारत्नपिनद्धदण्डरुचिरश्वेतातपत्रत्रय ॥
त्वत्पादद्वयपूतगीतरवतः शीघ्रं द्रवन्त्यामयाः । दर्पाध्मातमृगेन्द्रभीमनीनदाद्वन्या यथा कुँजराः ॥ ५ ॥
दिव्यस्त्रीनयनाभिरामविपुलश्रीमेरुचूडामणे । भास्वद्बालदिवाकरद्युतिहर प्राणीष्टभाममंडलम् ॥
अव्याबाधमचिंत्यसारमतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतम् । सौख्यं त्वच्चरणारविंदयुगलस्तुत्यैव संप्राप्यते ॥ ६ ॥
यावन्नोदयते प्रभापरिकरः श्रीभास्करो भासयं–स्तावद्धारयतीह पंकजवनं निद्रातिभारश्रमम् ॥
यावत्त्वच्चरणद्वयस्य भगवन्न स्यात्प्रसादोदय–स्तावज्जीवनिकाय एव वहति प्रायेण पापं महत् ॥ ७ ॥

शान्तिं शान्तिजिनेन्द्र शांतमनसस्त्वत्पादपद्माश्रयात् ।
संप्राप्ताः पृथिवीतलेषु बहव शान्त्यर्थिनः प्राणिनः ॥
कारुण्यान्मम भाक्तिकस्य च विभो दृष्टिं प्रसन्नां कुरु ।
त्वत्पादद्वय दैवतस्य गदतः शांत्यष्टकं भक्तितः ॥ ८ ॥
शांतिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं, शीलगुणव्रतसंयमपात्रं ।
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तममबुजनेत्रम् ॥
पंचममीप्सितचक्रधराणां, पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणेश्च ।
शांतिकरं गणशांतिमभीप्सुः षोडशतीर्थंकरं प्रणमामि ॥ ९ ॥
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुंदुभिरासनयोजनघोषौ ।
आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥

तं जगदर्चितशांतिजिनेन्द्रं, शांतिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं, मह्यमरं पठते परमां च ॥ १० ॥
येभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः । शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः ॥
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपाः । तीर्थकराः सततशांतिकरा भवन्तु ॥ ११ ॥
सम्पूजकानां प्रतिपालकानां, यतींद्रसामान्यतपोधनानां ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शांतिं भगवान् जिनेंद्रः ॥
क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान्धार्मिको भूमिपालः ।
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा, व्याधयो यांतु नाशम् ॥
दुर्भिक्षं चौरमारिः क्षणमपि जगतां, मास्मभूज्जीवलोके ।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं, सर्वसौख्यप्रदायि ॥ १२ ॥
तदद्रव्यमव्ययमुदेतु शुभः स देशः । सन्तन्यतां प्रतपतां सततं स कालः ॥
भावः स नन्दतु सदा यदनुग्रहेण । रत्नत्रयं प्रतपतीह मुमुक्षुवर्गे ॥ १३ ॥

इच्छामि भन्ते शांतिभक्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउ । पंचमहाकल्लाणसम्पण्णाणं, अट्ठमहापाडिहेरसहियाणं, चउतीसातिसयविसेससंजुत्ताणं, बत्तीसदेवेंदमणिमउडमत्थयमहियाणं, बलदेववासुदेवचक्कहररिसिमुणिजदिअणगारोवगूढाणं, थुइसयसहस्सणिलयाणं, उसहाइवीरपच्छिममङ्गलमहापुरिसाणं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं ।

अथ समाधिभक्तिः ।

स्वात्माभिमुख संवित्तिलक्षणं श्रुतचक्षुषा । पश्यन्पश्यामि देवत्वां केवलज्ञानचक्षुषा ॥ १ ॥
शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः । सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ॥
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावनाचात्मतत्त्वे । संपद्यंतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ २ ॥
जैनमार्गरुचिरन्यमार्गनिर्वेगता जिनगुणस्तुतौ मतिः ।
निष्कलंकाविमलोक्तिभावनाः संभवन्तु मम जन्मजन्मनि ॥ ३ ॥
गुरुमूले यतिनिचिते चैत्यसिद्धांतवार्द्धिसद्घोषे । मम भवतु जन्मजन्मनि सन्यसनसमन्वितं मरणम् ॥ ४ ॥

जन्मजन्मकृतं पापं जन्मकोटिसमार्जितम् । जन्ममृत्युजरामूलं हन्यते जिनवन्दनात् ॥ ५ ॥
आबाल्याज्जिनदेव भवतः श्रीपादयोः सेवया । सेवासक्तविनेयकल्पलतया कालोद्ययावद्गतः ॥
त्वां तस्याः फलमर्थये तदधुना प्राणप्रयाणक्षणे । त्वन्नामप्रतिबद्धवर्णपठने कण्ठोस्त्वकुण्ठो मम ॥ ६ ॥
तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् । तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥ ७ ॥
एकापि समर्थेयं जिनभक्तिर्दुर्गतिं निवारयितुम् । पुण्यानि च पूरयितुं दातुं मुक्तिश्रियं कृतिनः ॥ ८ ॥
पंचसुअ दीवणामे पचम्मिय सायरे जिणे वन्दे । पंच जमोयरणामे पंचम्मिय मन्दरे वन्दे ॥ ९ ॥
रयणत्तयं च वन्दे चव्वीसजिणे च सव्वदा वन्दे । पंचगुरूणं वन्दे चारणचरणं सदा वन्दे ॥ १० ॥

अर्हमित्यक्षरब्रह्म वाचकं परमेष्ठिनः । सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणिदध्महे ॥
कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् । सम्यक्त्वादि गुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥ ११ ॥
आकृष्टिं सुरसम्पदां विदधते मुक्तिश्रियो वश्यतां । उच्चाटं विपदां चतुर्गतिभुवां विद्वेषमात्मैनसाम् ॥
स्तम्भं दुर्गमनं प्रति प्रयततो मोहस्य सम्मोहनम् । पायात्पंचनमस्क्रियाक्षरमयी साराधना देवता ॥ १३ ॥
अनन्तानन्तसंसारसन्ततिच्छेदकारणम् । जिनराजपदाम्भोजस्मरणं शरणं मम ॥ १४ ॥
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम । तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ १५ ॥
नहि त्राता नहि त्राता नहि त्राता जगत्त्रये । वीतरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ॥ १६ ॥
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने । सदा मेस्तु सदा मेस्तु सदा मेस्तु भवे भवे ॥ १७ ॥
याचेहं याचेहं जिन तव चरणारविंदयोर्भक्तिम् । याचेहं याचेहं पुनरपि तामेव तामेव ॥ १८ ॥

इच्छामि भंते समाहिभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं । रयणत्तयपरूवपरमप्पज्झाणलक्खणं समाहिभत्तीये णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, वोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं ।

प्रशस्ति ।

दोहा–मंगल श्री अरहंत हैं, मंगल सिद्ध महान। मंगल आचारज सुधी, पाठक मुनि गुण–खान ॥ १ ॥
अवध सुलक्ष्मणपुर जनम, अग्रवाल शुभ वंश। मंगलसेन सुवर पिता, आतम जानन हंश ॥ २ ॥
पिता जु मक्खनलाल हैं, गृह प्रबन्धमें लीन। तृतिय पुत्र यह दास है, नाम जु "शीतल" दीन ॥ ३ ॥
विक्रम उन्निस पैंतिसे, जन्म सुकातिक मास। बत्तिस वय घर तज करो, श्रावकव्रत अभ्यास ॥ ४ ॥
सम्वत् उन्निस असी चउ, वर्षाकाल मंझार। नगर खंडवा वास किया, समताभाव सम्हार ॥ ५ ॥
पोड़वाड़ पंचास घर, खण्डेलवाल जु बीश। धर्म दिगम्बर साधते, नमैं चरण जिन ईश ॥ ६ ॥
मन्दिर एक सुहावना, विद्याशाला एक। औषधिशाला एक है, शाला धर्म जु एक ॥ ७ ॥
सेठ पोमडू साह हैं, चम्पालाल धनेश। धन्नालाल सु सेठ हैं, रामा साह सुखेश ॥ ८ ॥
चुन्नीलाल सु चौधरी, पन्नालाल बखान। दशरथ मन्नालाल सा, श्री घनश्याम सुजान ॥ ९ ॥
भागचन्द सा चुन्नी सा, और हजारीलाल। मूलचन्दजी सूरजमल, सुधी कन्हैयालाल ॥१०॥
इत्यादिक धर्मीनकी, संगति शुभ सुखदाय। सेठ जु सुन्दरलालकी, बाग सु आश्रय दाय ॥११॥
बार बार विनती करी, अजितप्रसाद वकील। करहु प्रतिष्ठा मग सुगम, धर्म सुजलमय झील ॥१२॥
जैनो जन दुखिया अती, रीति न जाने भेद। तातें हम उद्यम किया, मदद परम गुरु वेद ॥१३॥
देख प्रतिष्ठा पाठ त्रय, श्री जयसेन मुनीश। पंडित आशाधर जु कृत, नेमचन्द बुध ईश ॥१४॥
श्री जिनसेन मुनीश कृत, आदिपुराण विचार। आदि पुरुष जीवनचरित, पंचकल्याणक सार ॥१५॥
तदनुसार रचना करी, अल्पबुद्धि परमाण। धर्म प्रभावना हेतु हो सब जनका हित मान ॥१६॥
ज्ञान बुद्धि अति अल्प है, साहस बहुत कराय। कार्य कठिन पूरा हुआ, श्रीजिन चरण सहाय ॥१७॥
आश्विन कृष्ण नवमिको, सोमवार शुभ वार। ग्रन्थ समापत यह भया, हो भुवि मंगलकार ॥१८॥

ता० १९–९–२७ इति। द० शीतल

नित्यनियम पूजा।

देवशास्त्रगुरुपूजा।

ॐ जय जय जय। नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु। णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरीयाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं। ॐ अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः। (यहां पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)

चत्तारि मंगलं—अरहन्तमंगलं सिद्धमंगलं, साहुमंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा, अरहन्तलोगुत्तमा, सिद्धलोगुत्तमा, साहुलोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारि-सरणं पव्वज्जामि—अरहन्तसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहुसरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरण पव्वज्जामि।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा। पुष्पांजलि।

अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोपि वा। ध्यायेत्पञ्चनमस्कारं, सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥
अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा। यः स्मरेत्परमात्मानं, स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥ २ ॥
अपराजितमन्त्रोऽयं, सर्वविघ्नविनाशनः। मंगलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मंगलं मतः ॥ ३ ॥
एसो पंचणमोयारो, सव्वपावप्पणासणो। मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होइ मंगलं ॥ ४ ॥
अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचक परमेष्ठिनः। सिद्धचक्रस्य सद्बीज सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥ ५ ॥
कर्माष्टकविनिर्मुक्तं, मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम्। सम्यक्त्वादिगुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥ ६ ॥

पुष्पांजलि।

(यदि अवकाश हो, तो यहां पर सहस्रनाम पढ़कर दश अर्घ देना चाहिये, अथवा नीचेका श्लोक पढ़ एक अर्घ चढ़ाना चाहिए)

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः। धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिनसहस्रनामेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं, स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम्।
श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतु-र्जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि ॥ ८ ॥
स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुङ्गवाय, स्वस्ति स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय।
स्वस्ति प्रकाशसहजोर्जितदृङ्मयाय, स्वस्ति प्रसन्नललिताद्भुतवैभवाय ॥ ९ ॥

स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधाप्लवाय, स्वस्ति स्वभावपरभावविभासकाय।
स्वस्ति त्रिलोकवितैतकचिदुद्गमाय, स्वति त्रिकालसकलायतविस्तृताय ॥ १० ॥
द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं, भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः।
आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन्, भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम् ॥ ११ ॥
अर्हत्पुराणपुरुषोत्तमपावनानि, वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव।
अस्मिन् ज्वलद्विमलकेवलबोधवह्नौ, पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥ १२ ॥

(पुष्पाजलि क्षेपण करना)

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः। श्रीसम्भवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः। श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वति श्रीपद्मप्रभः। श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचंद्रप्रभः। श्रीपुष्पदंतः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः। श्रीश्रेयांस्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः। श्रीविमलः स्वस्ति, स्वति श्रीअनंतः। श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वति श्रीशांतिः। श्रीकुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः। श्रीमल्लिः स्वति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः। श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः। श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः।

(पुष्पाजलि क्षेपण करना)

(आगे प्रत्येक श्लोकके अन्तमें पुष्पाजलि क्षेपण करना चाहिये।)

नित्याप्रकम्पाद्भुतकेवलौघाः, स्फुरन्मनःपर्ययशुद्धबोधाः।
दिव्यावधिज्ञानबलप्रबोधाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ १ ॥
कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं, संभिन्नसंश्रोतृपदानुसारि।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ २ ॥
संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादनघ्राणविलोकनानि।
दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्वहन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ३ ॥
प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः, प्रत्येकबुद्धा दशसर्वपूर्वैः।
प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तविज्ञाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ४ ॥

जङ्घावलिश्रेणिफलाम्बुतन्तुप्रसूनबीजाङ्कुरचारणाह्वाः।
नभोऽङ्गणस्वैरविहारिणश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ५ ॥
अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि, लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि।
मनोवपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो न ॥ ६ ॥
सकामरूपित्ववशित्वमैश्यं, प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ७ ॥
दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं, घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः।
ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ८ ॥
आमर्षं सर्वौषधयस्तथाशीर्विषंविषा दृष्टिविषविषाश्च।
सखिल्लविड्जल्लमलौषधीशाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ९ ॥
क्षीरं स्रवन्तोऽत्र घृतं स्रवन्तो, मधु स्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवन्तः।
अक्षीणसंवासमहानसाश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ १० ॥

इति स्वस्तिमंगलविधानं।

सार्वः सर्वज्ञनाथः सकलतनुभृतां पापसन्तापहर्ता, त्रैलोक्याक्रान्तकीर्तिः क्षतमदनरिपुर्घातिकर्मप्रणाशः।
श्रीमान्निर्वाणसम्पद्वरयुवतिकरालीढकण्ठः सुकण्ठैर्देवेन्द्रैर्वन्द्यपादो जयति जिनपतिः प्राप्तकल्याणपूजाः ॥१
जय जय जय श्री सत्कान्तिप्रभो जगतां पते! जय जय भवानेव स्वामी भवाम्भसि मज्जताम्।
जय जय महामोहध्वान्तप्रभातकृतेऽर्चनम् जय जय जिनेश त्वं नाथ प्रसीद करोम्यहम् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्। (इत्याह्वाननम्) ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः। (इति स्थापनम्) ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्। (इति सन्निधिकरणम्)

देवि श्री श्रुतदेवते भगवति त्वत्पादपंकेरुह-द्वन्द्वे यामि शिलीमुखत्वमपरं भक्त्या मया प्रार्थ्यते।
मातश्चेतसि तिष्ठ मे जिनमुखोद्भूते सदा त्राहि मां, दृग्दानेन मयि प्रसीद भवतीं सम्पूजयामोऽधुना ॥३॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशाङ्गश्रुतज्ञान! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशाङ्गश्रुतज्ञान! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशाङ्गश्रुतज्ञान! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

संपूजयामि पूज्यस्य पादपद्मयुगं गुरोः। तपःप्राप्तप्रतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महात्मनः ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्याय सर्वसाधुसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

देवेन्द्रनागेन्द्रनरेन्द्रवन्द्यान्, शुम्भत्पदान् शोभितसारवर्णान्।
दुग्धाब्धिसंस्पर्धिगुणैर्जलौघैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशाङ्गश्रुतज्ञानाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ताम्यत्त्रिलोकोदरमध्यवर्तिसमस्तसत्त्वाऽहितहारिवाक्यान्।
श्रीचन्दनैर्गन्धविलुब्धभृङ्गैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि०।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशाङ्गश्रुतज्ञानाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्व०

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्यतरीन् सुभक्त्या।
दीर्घाक्षताङ्गैर्धवलाक्षतौघैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि०।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशाङ्गश्रुतज्ञानाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्य अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

विनीतभव्याब्जविबोधसूर्यान्वर्यान् सुचर्याकथनैकधुर्यान्।
कुन्दारविन्दप्रमुखैः प्रसूनैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि०।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशाङ्गश्रुतज्ञानाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

कुदर्पकन्दर्पविसर्पसर्पप्रसह्यनिर्णाशनवैनतेयान्।
प्राज्याज्यसारैश्चरुभी रसाढ्यै जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन्यजेऽहम् ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ध्वस्तोद्यमान्धीकृतविश्वविश्वमोहान्धकारप्रतिघातदीपान् ।
दीपैः कनत्कांचनभाजनस्थैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि० ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीपं नि० ।

दुष्टाष्टकर्मेन्धनपुष्टजालसंधूपने भासुरधूमकेतून् ।
धूपैर्विधूतान्यसुगन्धगन्धैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपा० ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसामगम्यान्, कुवादिवादाऽस्खलितप्रभान ।
फलैरलं मोक्षफलाभिसारैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेऽनंतानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।
ॐ ह्रीं जिनमुख द्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्व दशांगश्रुतज्ञानाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सद्वारिगन्धाक्षतपुष्पजातैर्नैवेद्यदीपामलधूपधूम्रैः ।
फलैर्विचित्रैर्घनपुण्ययोगान्, जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं परब्रह्मणेनंतानंतज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि० ।
ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ये पूजां जिननाथशास्त्रयमिनां भक्त्या सदा कुर्वते,
त्रैसन्ध्यं सुविचित्रकाव्यरचनामुच्चारयन्तो नराः।
पुण्याढ्या मुनिराजकीर्तिसहिता भूत्वा तपोभूषणा-
स्ते भव्याः सकलावबोधरुचिरां सिद्धिं लभन्ते पराम् ॥ १० ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्प क्षेपण करना)

वृषभोऽजितनामा च, सम्भवश्चाभिनन्दनः। सुमतिः पद्मभासश्च, सुपार्श्वो जिनसत्तमः ॥ १ ॥
चन्द्राभः पुष्पदन्तश्च, शीतलो भगवान्मुनिः। श्रेयांश्च वासुपूज्यश्च, विमलो विमलद्युतिः ॥ २ ॥
अनन्तो धर्मनामा च, शांतिः कुन्थुर्जिनोत्तमः। अरश्च मल्लिनाथश्च, सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥ ३ ॥
हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः। ध्वस्तोपसर्गदैत्यारिः, पार्श्वो नागेन्द्रपूजितः ॥ ४ ॥
कर्मान्तकृन्महावीरः, सिद्धार्थकुलसम्भवः। एते सुरासुरौघेण, पूजिता विमलत्विषः ॥ ५ ॥
पूजिता भरताद्यैश्च, भूपेन्द्रैर्भूरिभूतिभिः। चतुर्विधस्य संघस्य शांतिं, कुर्वंतु शाश्वतीम् ॥ ६ ॥
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः सदाऽस्तु मे। सम्यक्त्वमेव संसारवारणं मोक्षकारम् ॥७॥ (पुष्पांजलि)
श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः सदाऽस्तु मे। सज्ज्ञानमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥८॥ (पुष्पां०)
गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिः सदाऽस्तु मे। चारित्रमेव संसारपारणं मोक्षकारणम् ॥९॥ (पुष्पांजलि)

अथ देवजयमाला प्राकृत।

वत्ताणुट्ठाणे जणधणुदाणे, पइपोसिउ तुहु खत्तधरु।
तुहु चरणविहाणे केवलणाणं, तुहु परमप्पउ परमपरु ॥ १ ॥
जय सिरह रिसीसर णमियपाय, जय अजिय जियंगमरोसराय।
जय सम्भव सम्भवकयविओय, जय अहिणंदण णंदिय पओय ॥ २ ॥
जय सुमइ सुमइ सम्मयपयास, जय पउमप्पह पउमाणिवास।
जय जयहि सुपास सुपासगत्त, जय चन्दप्पह चन्दाहवत्त ॥ ३ ॥
जय पुप्फयन्त दन्तंतरंग, जय सीयल सीयलवयणभंग।
जय सेय सेयकिरणोहसुज्ज, जय वासुपुज्ज पुज्जाणपुज्ज ॥ ४ ॥

जय विमल विगलगुणसेढिठाण, जयं जयहि अणंताणंतणाण।
जय धम्म धम्मतित्थयर सन्त, जय सांति सांति विहियावत्त ॥ ५ ॥
जय कुन्थुं कुन्थुंपहुअंगिसदय, जय अर अर माहर विहियसमय।
जय मल्लि मल्लिआदामगन्ध, जय मुणिसुव्वय सुव्वयणिबन्ध ॥ ६ ॥
जय णमि णमियामरणियरसामि, जय णेमि धम्मरहचक्कणेमि।
जय पास पासछिंदणकिवाण, जय वड्ढमाण जस वड्ढमाण ॥ ७ ॥

घत्ता।

इह जाणिय णामहिं, दुरियविरामहिं, परहिंवि णमिय सुरावलिहिं।
अणहणहिं अणाइहिं, समियकुवाइहिं, पणविमि अरहन्तावलिहिं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं वृषभादिमहावीरान्तेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ शास्त्रजयमाला प्राकृत।

सम्पइ सुहकारण, कम्मवियारण, भवसमुद्दतारणतरणं।
जिणवाणि णमस्समि, सत्तपयस्समि, सग्गमोक्खसंगमकरणम् ॥ १ ॥
जिणंदमुहाओ विणिग्गयतार, गणिंदविगुम्फिय गन्थपयार।
तिलोयहिमण्डण धम्मइ खाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ २ ॥
अवग्गहईहअवायजुएहि, सुधारणभेयहिं तिण्णिसएहि।
मई छत्तीस बहुप्पमुहाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ३ ॥
सुदं पुण दोण्णि अणेयपयार, सुबारहभेय जगत्तयसार।
सुरिंदणरिंदसमुच्चिओ जाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ४ ॥
जिणिंदगणिंदणरिंदह रिद्धि, पयासइ पुण्णपुराकिउलद्धि।
णिउग्गु पहिल्लउ एहु वियाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ५ ॥
जु लोयअलोयह जुत्ति जणेइ, जु तिण्णिवि कालसरूव भणेइ।
चउग्गइलक्खण दुज्जउ जाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ६ ॥

जिणिंदचरित्तविचित्त मुणेइ, सुसावयधम्मह जुत्ति जणेइ।
णिउग्गुवितिज्जउ इत्थु वियाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ७ ॥
सुजीवअजीवह तच्चह चक्खु, सुपुण्ण विपाव विबन्ध विमुक्खु।
चउत्थुणिउग्गु विभासिय णाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ८ ॥
तिभेयहिं ओहि विणाण विचित्तु, चउत्थु रिजोविउलं मयउत्तु।
सुखाइय केवलणाण वियाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ९ ॥
जिणिंदह णाणु जगत्तयभाणु, महातमणासिय सुक्खणिहाणु।
पयच्छुभत्तिभारेण वियाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ १० ॥
पयाणि सुबारहकोडिसयेण, सुलक्खतिरासिय जुत्ति भरेण।
सहसअट्ठावण पंचवियाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ११ ॥
इक्कावण कोडिउ लक्ख अठेव, सहस चुलसीदिसया छक्केव।
सढाइगवीसह गंथपयाणि, सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ १२ ॥

घत्ता।

इह जिणवरवाणि विसुद्धमई, जो भवियण णियमण धरई।
सो सुरणरिंदसंपय लहई, केवलणाण वि उत्तरई ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ गुरुजयमाला प्राकृत।

भवियह भवतारण, सोलह कारण, अज्जवि तित्थयरत्तणहं।
तव कम्म असंगइ दयधम्मंगइ पालवि पंच महव्वयइं ॥ १ ॥
वन्दामि महारिसि सीलवन्त, पंचेंदियसंजम जोगजुत्त।
जे ग्यारह अंगह अणुसरंति, जे चउदहपुव्वह मुणि थुणंति ॥ २ ॥
पादाणुसारवर कुट्ठवुद्धि, उप्पण्णजाइ आयासरिद्धि।
जे पाणहारी तोरणीय, जेरुक्खमूल आतावणीय ॥ ३ ॥

जे मोणिधाय चन्द्राहणीय, जे जत्थत्थवणि णिवासणीय।
जे पंचमहव्वय धरणधीर, जे समिदिगुत्तिपालणहिं वीर ॥ ४ ॥
जे वड्ढहिं देह विरत्तचित्त, जे रायरोसभयमोहचत्त।
जे कुगइहि संवरु विगयलोह, जे दुरियविणासणकामकोह ॥ ५ ॥
जे जल्ल मल्लतण लित्त गत्त, आरम्भ परिग्गह जे विरत्त।
जे तिण्णकाल बाहर गमंति, छट्ठट्ठम दसमउ तउचरंति ॥ ६ ॥
जे इक्क गास दुइ गास लिंति, जे णीरसभोयण रइ करंति।
ते मुणिवर वंदउँ ठियमसाण, जे कम्म डहइवरसुक्कझाण ॥ ७ ॥
बारह विह संजम जे धरंति, जे चारिउ विकहा परिहरंति।
बावीस परीसह जे सहंति, संसारमहण्णउ ते तरंति ॥ ८ ॥
जे धम्मवुद्ध महियलि थुणंति, जे काउस्सग्गो णिस गमंति।
जे सिद्धविलासणि अहिलसंति, जे पक्खमास आहार लिंति ॥ ९ ॥
गोदूहण जे वीरासणीय, जे धणुह सेज वज्जासणीय।
जे तववलेण आयास जंति, जे गिरिगुहकन्दर विवर थंति ॥ १० ॥
जे सत्तुमित्त समभावचित्त, ते मुणिवर वंदउँ दिढचरित्त।
चउवीसह गंथह जे विरत्त, ते मुणिवर वंदउ जगपवित्त ॥ ११ ॥
जे सुज्झाणिज्झा एकचित्त, वन्दामि महारिसि मोक्खपत्त।
रयणत्तयरंजिय सुद्ध भाव, ते मुणिवर वदउँ ठिदिसहाव ॥ १२ ॥

घत्ता।

जे तपसूरा, संजमधीरा, सिद्धवधूअणुराईया।
रयणत्तयरंजिय, कम्मह गंजिय, ते रिसिवर मइ झाईया ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

अथ सिद्धपूजा।

ऊर्ध्वाधोरयुतं सबिन्दुसपरं, ब्रह्मस्वरावेष्टितं, वर्गापूरितदिग्गताम्बुजदलं, तत्संधितत्त्वान्वितं।
अंत:पत्रतटेष्वनाहतयुतं, ह्रींकारसंवेष्टितं, देव ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो वैरीभकण्ठीरवः॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्। ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ २ ठः ठः। ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

निरस्तकर्मसम्बन्धं, सूक्ष्मं नित्यं निरामयम्। वंदेऽहं परमात्मानममूर्त्तमनुपद्रवम् ॥१॥ सिद्धयन्त्रकी स्थापना।

सिद्धोनिवासमनुगं परमात्मगम्यं, हीनादिभावरहितं भववीतकायम्।
रेवापगावरसरो-यमुनोद्भवानां, नीरैर्यजे कलशगैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

आनन्दकन्दजनकं घनकर्ममुक्तं, सम्यक्त्वशर्मगरिमं जननार्तिवीतम्।
सौरभ्यवासितभुवं हरिचन्दनानां, गन्धैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं, सिद्धं स्वरूपनिपुणं कमलं विशालम्।
सौगन्ध्यशालिवनशालिवराक्षतानां, पुंजैर्यजे शशिनिभैर्वरसिद्धचक्रं ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

नित्यं स्वदेहपरिमाणमनादिसंज्ञं, द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम्।
मन्दारकुन्दकमलादिवनस्पतीनां, पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊर्ध्वस्वभावगमनं सुमनोव्यपेतं, ब्रह्मादिबीजसहितं गगनावभासम्।
क्षीरान्नसाज्यवटकै रसपूर्णगर्भै--र्नित्यं यजे चरुवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।

आतंकशोकभयरोगमदप्रशांतं, निर्द्वन्द्वभावधरणं महिमानिवेशम्।
कर्पूरवर्तिबहुभिः कनकावदातै-र्दीपैर्यजे रुचिवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ।

पश्यन्समस्तभुवनं युगपन्नितांतं, त्रैकाल्यवस्तुविषये निविडप्रदीपम् ।
सद्‌द्रव्यगन्धघनसारविमिश्रितानां, धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सिद्धासुरादिपतियक्षनरेन्द्रचक्रै-र्ध्येयं शिवं सकलभव्यजनैः सुवन्द्यम् ।
नारिंगपूंगकदलीफलनारिकेलैः, सोऽहं यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ।

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रतगणैः, संगं वरं चन्दनं, पुष्पौघं विमलं सदक्षतचयं, रम्यं चरुं दीपकं ।
धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं, श्रेष्ठं फलं लब्धये, सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं, सेनोत्तरं वांछितम् ॥९॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं, सूक्ष्मस्वभावपरमं यदनन्तवीर्यम् ।
कर्मौघकक्षदहनं सुखशस्यबीजं, वन्दे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रम् ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

त्रैलोक्येश्वरवन्दनीयचरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं, यानाराध्य निरुद्धचण्डमनसः सन्तोऽपि तीर्थंकराः ।
सत्सम्यक्त्वविबोधवीर्यविशदाऽव्याबाधताद्यैर्गुणै-र्युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥ ११

पुष्पांजलि ।

अथ जयमाला ।

विराग सनातन शांत निरंश, निरामय निर्भय निर्मल हंस ।
सुधाम विबोधनिधान विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ १ ॥
विदूरितसंसृतभाव निरंग, समामृतपूरित देव विसङ्ग ।
अबन्ध कषायविहीन विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ २ ॥
निवारितदुष्कृतकर्मविपाश, सदामलकेवलकेलिनिवास ।
भवोदधिपारग शांत विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ३ ॥

अनन्तसुखामृतसागर धीर, कलङ्करजोमलभूरिसमीर।
विखण्डितकाम विराम विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ४ ॥
विकारविवर्जित तर्जितशोक, विबोधसुनेत्रविलोकितलोक।
विहार विराव विरङ्ग विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ५ ॥
रजोमलखेदविमुक्त विगात्र, निरन्तर नित्य सुखामृतपात्र।
सुदर्शनराजित नाथ विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ६ ॥
नरामरवन्दित निर्मलभाव, अनन्तमुनीश्वरपूज्य विहाव।
सदोदय विश्वमहेश विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ७ ॥
विदम्भ वितृष्ण विदोष विनिद्र, परापरशङ्कर सार वितन्द्र।
विकोप विरूप विशङ्क विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ८ ॥
जरामरणोज्झित वीतविहार, विचिंतित निर्मल निरहंकार।
अचिंत्यचरित्र विदर्प विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ९ ॥
विवर्ण विगन्धविमान विलोभ, विमाय विकाय विशब्द विशोभ।
अनाकुल केवल सर्व विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ १० ॥

घत्ता—असमसमयसारं चारुचैतन्यचिह्नं, परपरणतिमुक्तं पद्मनन्दीन्द्रवन्द्यम्।
निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं, स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्लछन्द—अविनाशी अविकार परमरसधाम हो, समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो।
शुद्धबोध अविरुद्ध अनादि अनन्त हो, जगतशिरोमणि सिद्ध सदा जयवन्त हो ॥ १ ॥
ध्यानअगनिकर कर्म कलंक सबै दहे, नित्य निरञ्जनदेव सरूपी ह्वै रहे।
ज्ञायकके आकार ममत्वनिवारिकैं, सो परमातम सिद्ध नमूं सिर नायकैं ॥ २ ॥

दोहा—अविचलज्ञानप्रकाशते, गुण अनन्तकी खान। ध्यान धरे सौं पाइए, परमसिद्ध भगवान् ॥ ३ ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलि)

अथ शान्तिपाठः ।

(शांतिपाठ बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्पवृष्टि करते रहना चाहिये ।)

दोधकवृत्तम् ।

शांतिजिनं शशिनिर्म्मलवक्त्रं, शीलगुणव्रतसंयमपात्रम् ।
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम् ॥ १ ॥
पंचममीप्सितचक्रधराणां, पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च ।
शांतिकर गणशांतिमभीप्सुः, षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥ २ ॥
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ ।
आतापवारणचामरयुग्मे, यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥ ३ ॥
तं जगदर्चितशांतिजिनेन्द्रं, शांतिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं, मह्यकरं पठते परमां च ॥ ४ ॥

वसन्ततिलका—येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः, शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः ।
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थंकराः सततशांतिकरा भवन्तु ॥ ५ ॥

इन्द्रवज्रा—संपूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शांतिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥

स्रग्धरावृत्तम्—क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान्, धार्मिको भूमिपालः ।
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा, व्याधयो यांतु नाशम् ॥
दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां, मास्मभूज्जीवलोके । जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं, सर्वसौख्यप्रदायि ॥७॥

अनुष्टुप्—प्रध्वस्तघातिकर्माणः, केवलज्ञानभास्कराः । कुर्वन्तु जगतः शांतिं, वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥ ८ ॥

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

अथेष्टप्रार्थना ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः, सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्वे, सम्पद्यंतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ ९ ॥

आर्यावृत्तम् ।

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् । तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥ १० ॥
अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च ज मए भणियं । तं खमउ णाणदेव य मज्झवि दुःक्खक्खयं दिंतु ॥ ११ ॥
दुःक्खखओ कम्मखओ समाहिमरणं च बोहिला होय। मम होउ जगतबन्धव तव जिणवर चरणसरणेण ॥१२॥
त्रिभुवनगुरो ! जिनेश्वर ! परमानन्दककारण कुरुष्व । मयि किंकरेऽत्र करुणां यथा तथा जायते मुक्तिः ॥१३॥
निर्विण्णोहं नितरामर्हन् ! बहुदुक्खया भवस्थित्या । अपुनर्भवाय भवहर ! कुरु करुणामत्र मयि दीने ॥१४॥
उद्धर मां पतितमतो विषमाद् भवकूपतः कृपां कृत्वा । अर्हन्नलमुद्धरणे त्वमसीति पुनः पुनर्वच्मि ॥१५॥
त्वं कारुणिकः स्वामी त्वमेव शरणं जिनेश ! तेनाहं । मोहरिपुदलितमानं फूत्कारं तव पुरः कुर्वे ॥१६॥
ग्रामपतेरपि करुणा, परेण केनाप्युपद्यते पुंसि। जगतां प्रभो ! न किं तव, जिन ! मयि खलु कर्मभिः प्रहते ॥१७॥
अपहर मम जन्म दयां कृत्वेत्येकवचसि वक्तव्ये । तेनातिदग्ध इति मे देव ! बभूव प्रलापित्वं ॥१८॥
तव जिनवर ! चरणाब्जयुगं, करुणामृतशीतलं यावत् । संसारतापतप्तः करोमि हृदि तावदेव सुखी ॥१९॥
जगदेकशरण ! भगवन् ! नौमि श्रीपद्मनंदितगुणौघा । किं बहुना ? कुरु करुणामत्र जने शरणमापन्ने ॥२०॥

पुष्पांजलि ।

अथ विसर्जनम् ।

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि, शास्त्रोक्तं न कृतं मया । तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु, त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥
आह्वानं नैव जानामि, नैव जानामि पूजनं । विसर्जनं न जानामि, क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं, द्रव्यहीनं तथैव च । तत्सर्वं क्षम्यतां देव, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३ ॥
आहूता ये पुरा देवा, लब्धभागा यथाक्रमं । ते मयाभ्यर्चिता भक्त्या, सर्वे यान्तु यथास्थितिं ॥४॥

इति शांतिपाठः ।

भाषास्तुतिपाठ ।

तुम तरणतारण भव निवारण, भविकमन आनन्दनो ।
श्रीनाभिनन्दन जगत वन्दन, आदिनाथ निरंजनो ॥ १ ॥

तुम आदिनाथ अनादि सेऊँ, सेय पदपूजा करूँ।
कैलाशगिरिपर रिषभजिनवर, पद कमल हिरदे धरूँ ॥ २ ॥
तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महाबली।
यह विरद सुनकर सरन आयो, कृपा कीजे नाथजी ॥ ३ ॥
तुम चन्द्रवदन सु चन्द्रलच्छन, चन्द्रपुरि परमेश्वरो।
महासेननन्दन, जगतवन्दन, चन्द्रनाथ जिनेश्वरो ॥ ४ ॥
तुम शांति पांच कल्याण पूजों, शुद्धमनवचकायजू।
दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन, विघन जाय पलायजू ॥ ५ ॥
तुम बालब्रह्म विवेकसागर, भव्यकमलविकाशनो।
श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो ॥ ६ ॥
जिन तजी राजुल राजकन्या, कामसैन्या वश करी।
चारित्ररथ चढि भये दूलह, जाय शिवरमणी वरी ॥ ७ ॥
कंदर्प दर्प सुसर्पलच्छन, कमठ शठ निर्मद कियो।
अश्वसेननन्दन जगतवन्दन, सकलसंघ मंगल कियो ॥ ८ ॥
जिन धरी बालकपणे दीक्षा, कमठमानविदारकैं।
श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रके पद, मैं नमो शिर धारकैं ॥ ९ ॥
तुम कर्मघाता मोखदाता, दीन जानि दया करो।
सिद्धार्थनन्दन जगतवंदन महावीर जिनेश्वरो ॥ १० ॥
छत्र तीन सोहैं सुर नर मोहैं, वीनती अवधारिये।
कर जोडि सेवक वीनवै प्रभु, आवागमन निवारिये ॥ ११ ॥
अब होउ भव भव स्वामी मेरे, मैं सदा सेवक रहों।
कर जोड यो वरदान मांगों, मोक्षफल जावत लहों ॥ १२ ॥

जो एकमाहीं एक राजै, एकमाहीं अनेकनो।
इक अनेककी नहीं संख्या, नमों सिद्ध निरंजनो ॥ १३ ॥

चौपाई—मैं तुम चरणकमलगुणगाय, बहुविध भक्ति करी मन लाय।
जनम जनम प्रभु पाऊं तोहि, यह सेवाफल दीजे मोहि ॥ १४ ॥
कृपा तिहारी ऐसी होय, जामन मरन मिटावो मोय।
वारवार मैं विनती करूं, तुम सेयें भवसागर तरूं ॥ १५ ॥
नाम लेत सब दुख मिटजाय, तुम दर्शन देख्या प्रभु आय।
तुम हो प्रभु देवनके देव, मैं तो करूं चरण तव सेव ॥ १६ ॥
मैं आयो पूजनके काज, मेरो जन्म सफल थयो आज।
पूजा करकैं नवाऊं शीश, मुझ अपराध क्षमहु जगदीश ॥ १७ ॥

दोहा—सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान।
मो गरीबकी वीनती, सुन लीज्यो भगवान ॥ १८ ॥
दर्शन करते देवका, आदि मध्य अवसान।
स्वर्गनके सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान ॥ १९ ॥
जैसी महिमा तुमविषै, और धरै नहिं कोय।
जो सूरजमें ज्योति है, तारनमें नहिं सोय ॥ २० ॥
नाथ तिहारे नामतैं, अघ छिनमाहिं पलाय।
ज्यों दिनकर परकाशतैं, अन्धकार विनशाय ॥ २१ ॥
बहुत प्रशंसा क्या करूं, मैं प्रभु बहुत अजान।
पूजाविधि जानूं नहीं, शरण राखि भगवान ॥ २२ ॥

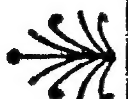

इति भाषास्तुतिपाठ समाप्त।
प्रतिष्ठासारसंग्रह पंचकल्याणक दीपिका समाप्तम्।